रशीदा

[मौलिक सामाजिक उपन्यास]

लेखक

सागर बालूपुरी

प्रकाशक

आदर्श पुस्तक मन्दिर

चौक, इलाहाबाद

प्रकाशक
श्री बनवारी तिवारी
अध्यक्ष, आदर्श पुस्तक मन्दिर
चौक, इलाहाबाद

मूल्य ३)

मुद्रक
माधो प्रिंटिंग वर्क्स,
बैरहना, इलाहाबाद

१

घर का काम काज समाप्त करने के पश्चात्, रशीदा अन-मनी सी हो अपने कमरे में आकर पड़ रही। रात तारों से भींग चुकी थी। कमरे में आकर अपनी चारपाई पर बैठते हुए उसकी दृष्टि सामने की एक खिड़की के बाहर जाकर अटक गई। गाँव में चारों ओर सन्नाटा ही सन्नाटा था। कभी-कभी एक आध कुत्ते भों-भों करके लोगों की नींद हराम कर देते। अपनी चारपाई पर लेटी रशीदा ने बार-बार करवट बदली, अंगड़ाई ली, किन्तु नींद तो उससे जैसे कोसों दूर भाग चुकी थी। और एक रशीदा थी जो बरबस सोने के लिये प्रयत्न कर रही थी। तभी उसके अब्बा ने कमरे के दरवाजे के निकट आकर पुकारा—'अरी रशीदा! बेटी! सो गई क्या ?'

'नहीं अब्बा! अभी नींद कहाँ ?' कहती हुई रशीदा अपने बिस्तर से उठकर किवाड़ खोलने के उपरान्त बाहर आ गई। बाहर आकर देखा कि उसके पिता अजीब हालत में खड़े हैं। उनका शरीर बाहर फैले अन्धकार में जाने क्यों काँप रहा है। रशीदा को लगा, जैसे उसके अब्बा ने कोई ऐसी गलती की है, जिसके परिणाम को सोचकर उनका दिल और दिमाग दोनों धड़क रहा है। अतः जब उससे न रहा गया तो अपने अब्बा को ऊपर से नीचे तक देखती हुई बोली—'यह सब क्यों अब्बा ?'

'अरे ! यह सब तू नहीं जानती ! आज मुल्ला साहब ने अपना एलान जारी किया है कि गाँव में कोई काफिर जिन्दा न रहने पावे । भारत में बसने वालों हमारे साथियों के साथ जैसा बर्ताव किया गया है मुल्ला साहब का इरादा है कि उसका बदला अवश्य लेना चाहिए ।'

'यह तुम कह रहे हो अब्बा ! मुल्ला साहब की अक्ल मारी गई है । वे एक गलत रास्ते पर जा रहे हैं । लेकिन तुम ऐसा क्यों कर रहे हो, अब्बा ?' रशीदा ने अपने अब्बा के निकट पहुँच कर अर्ज करते हुये कहा ।

'तू क्या समझेगी । दिल से मैं खुद नहीं चाहता, लेकिन मजहब के इन दीवानों के खिलाफ बोलकर यहाँ जीवित भी तो नहीं रह सकता ।'

'यह मजहब ! मजहब नहीं है । पाखण्ड है । बेकार है, जिसमें इनसान के साथ इनसानियत न की जाय । जो सब की विचार धारा सुनने के बजाय, मिटाने पर आमादा हो जाय—वह मजहब नहीं है । अब्बा जिन्हें तुम काफिर समझकर खून करने जा रहे हो उनमें अन्तर क्या है । जिसे तुम खुदा कहते हो, उसे वे ईश्वर कहते हैं । फर्क केवल नाम का है । तुम्हारे शरीर का खून भी लाल है । और उनके शरीर का खून भी लाल है । एक साँचे के निकले हुये दो आदमियों का नाम ही दूसरा है, नहीं तो दोनों एक इनसान हैं । यह फर्क दिमागी कीड़ा बन देता है ।'

'चुप रह । बातें बनाती है । इस समय खाना खाने के बाद में करीम के यहाँ जा रहा हूँ । देख, घर में होशियारी

के साथ सोना। हो सकता है कि काफिरों का गिरोह हमला करने आये, तो कमरे से बन्दूक निकाल कर अपनी जान माल की रक्षा करना।' कहकर रशीदा के पिता लौट गये।

रशीदा ने अपने अब्बा की अक्ल पर सोचा, इनसान! इनसान के खून का प्यासा है। जब दुनिया इतना आगे बढ़ती जा रही है फिर भी इनसान इन छोटी-छोटी बातों को लेकर उलझ पड़ता है। और दुनिया की तरक्की होती हुई भी नहीं के बराबर हो जाती है। रशीदा सोचती समझती अपने आप खीज कर पुनः कमरे में आकर चारपाई पर धम्म से बैठ गई। नींद को बुलाने के लिये करवट ली। तभी उस अन्धकार को चीरती एक कर्कश आवाज ने आकर उसके कान के परदों को हिला दिया—'अल्लाहो! अकबर।'

दूसरी आवाज थी 'काफिर हमारे दुश्मन है?'

काफिर हमारे दुश्मन हैं। सुनते ही रशीदा का रोम-रोम जल उठा। दुश्मन बनाने के लिए अधिक मेहनत की आवश्यकता नहीं पड़ती। लेकिन दोस्त बनाने और समझने में उम्र ख़तम हो जाती है। मजहबी कीड़ों के मुँह से निकली हुई आवाज जब रशीदा के इर्द-गिर्द घूम-घूम कर उसके दिमागों की परिक्रमा करने लगी, तो उसका कलेजा किसी अदृश्य आशंका से भयभीत होकर धक से करके रह गया। जल्दी में उसने चारपाई छोड़ दी। कमरे का दरवाजा खोल कर बाहर आई। फिर दालान का दरवाजा खोल बरामदे की ओर बढ़ी तो देखा उसके पिता के साथ रसूल चाचा खड़े हैं। दोनों आपस में कुछ काना फूंसी कर रहे थे। रशीदा का मन बातें सुनने के लिए व्याकुल हो उठा। दालान

के दरवाजों के बीच उसने अपना कान लगा दिया। सहसा रसूल ने उसके अब्बा को समझाते हुए कहा—'भाई! यह मोह माया छोड़ो! पुरानी बातों का ख्याल करोगे तो कोई काम नहीं हो सकता! साथ ही मुल्ला की नजरों में दोषी बन जाओगे। तुम्हें भी काफिर करार दिया जायेगा!'

'नहीं नहीं रसूल! मजहब के नाम पर मैं स्वयं मर मिटूँगा।' फिर अपना छुरा तान कर बोले—'देखते हो। यह छुरा एक एक काफिर का खून पी कर रहेगा! मैं तुमसे वादा करता हूँ। उसके खून से अपने इस प्यासे छुरे की प्यास बुझा कर ही रहूँगा।'

'शाबाश! तुमसे ऐसी ही उम्मीद थी। जरा मुल्ला साहब का ख्याल तो देखो। कैसा अच्छा एलान कर रखा है, उन्होंने। जो व्यक्ति जिस काफिर की हत्या करेगा वह उसकी जायदाद का मालिक होगा। तुम्हारे हिस्से में सामने वाला पड़ोस का मकान है। उसकी हत्या करने के बाद तुम उसके सारे जायदाद के मालिक होगे!'

'पड़ोस का मकान?' रशीदा के अब्बा ने कुछ चौंक कर पूछा।

'हाँ! हाँ। चौंक कर क्यों पूछ रहे हो?'

'इसलिए कि वह तो वर्षों से मेरे साथ रहता आया है। उसकी बेटी मेरी बेटी रशीदा की सहेली है। फिर उस पर मेरे हाथ कैसे उठ सकेंगे!' संकोच भाव से रशीदा के पिता ने रसूल की ओर लक्ष्य करके कहा।

'यह तुम्हारे दिल की कमजोरी है ! काफिर, काफिर है। उससे हमदर्दी दिखाना ही इसलाम को धोखा देना है।'

'लेकिन हमारे और गाँव के साथ उसने जो भलाई की है; जिसके पुराने खान्दान ने हमें यहाँ ठहरने के लिए स्थान दिया; जिसके देश की हमने अब तक नमक खाई है। उसके साथ विश्वासघात करना कुछ ठीक नहीं जँचता।'

'तो यों कहो। काफिरों से तुम्हें काफी हमदर्दी है।' फिर उलटे पाँव लौटते हुए बोला—'तो मैं मुल्ला साहब से सब बातें साफ-साफ कह दूँगा।'

'नहीं...नहीं...रसूल। मजहब को बचाने के लिए मैं सब कुछ कर सकता हूँ।'

'वादा करो ! तो एक और खुशखबरी सुनाऊँ ?'

'वादा करता हूँ।' दबे जबान से रशीदा के अब्बा ने उत्तर दिया।

'तो सुनो। जायदाद तुम्हें मिलेगी और उसकी बेटी से जिसके साथ चाहोगे विवाह करा दिया जायगा। चाचा ! जिसे तुम अपनी बेटी की सहेली और अपना साथी समझते हो वे सभी तुम्हारे दुश्मन हैं। इसलिए जैसे भी हो श्याम का दरवाजा खोलकर उसकी हत्या कर डालो।' कहकर रसूल चलने लगा।

तभी रशीदा के पिता ने कहा—'ठहरो रसूल ! मेरा ख्याल है कि मुझे साथ ले चलो। भीड़ के साथ ही आकर

श्याम के मकान पर हमला किया जाय। ताकि वह अपने आप को बचा भी न सके।'

'अगर ऐसी बात है तो आओ!'

कहकर रसूल आगे बढ़ गया। रशीदा के पिता को अपने निकट खींचकर सीने से लगा लिया। रसूल की आँखों में साहस की एक दूसरी चिनगारी फूटी। गोद से अलग करते समय उसने अपनी बाँहों की ओर उनका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा—'देखो। चाचा! यह हाड़ माँस से बना शरीर दुनिया में केवल इसलिए नहीं बना है कि केवल खा-पीकर आदमी मर जाय। बल्कि दूसरी चीजों के साथ अपने धर्म और मजहब की हिफाजत करना भी इस लम्बे चौड़े बदन का एक फर्ज है।'

'लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि किसी के मजहब को इनसान मिटाना चाहा, तो वह नहीं मिट सकता। हाँ,कभी ऐसा समय जरूर आएगा, जब दुनिया से मजहब का नाम न रहकर एक इनसानियत ही का नाम धर्म होगा।'

'अरे आज की फिकर करो। कल क्या होगा उसकी चिन्ता करके अपने दिल को कमजोर न बनाओ। आज की दुनिया में हर एक मुल्क अपने ख्यालों की तरक्की चाहता है। फिर हम क्यों सबसे पीछे रहें?'

'रसूल, तुम भूलते हो। तरक्की अगर तुमने किसी को मिटाकर किया तो दुनिया के इतिहास में वह काला धब्बा बनकर रह जायगा।'

'फिर तुम अपनी सीख देने लगे। चाचा! मजहब के लिए

इनसान को सब कुछ करना चाहिए। आओ मेरे साथ चलो। पहले हमने मछुआ बाड़ी पर हमला करने की तैयारी की है। उसके बाद अपने गाँव के काफिरों से तबियत खोलकर समझेंगे।'

'चलो!' फिर कुछ ठहर कर बोले—'यदि बुरा न मानो तो घर में रशीदा को होशियार कर दूँ। कौन जाने काफिरों का हमला भी हो।'

'अरे, इसकी आवश्यकता नहीं। इस इलाके के काफिरों में कोई ऐसा लाल नहीं है, जो हमारे खिलाफ एक आवाज भी उठा सकता है। अब सोचने समझने का अवसर नहीं है।'

'अच्छी बात है।' कहकर रशीदा के पिता रसूल के साथ चल पड़े।

रह गई रशीदा जो रजनी के उस भीगे हुए अन्धकार में उन दोनों मजहबी दीवानों की समझ पर मन ही मन झुँझलाकर अपने कमरे में लौट आई। कमरे में लेटते समय उसे ऐसा लगा, जैसे आज का इनसान इतना आगे बढ़कर भी बहुत पीछे आ गया है। और दूसरे क्षण जब उसकी नजर अपने पड़ोसी श्याम बाबू के मकान की ओर घूमी, तो उसने सोचा, इस सीधे-सादे स्वभाव वाले श्याम चाचा का हिफाजत कैसे होगी? मेरी सहेली शील की लाज कैसे बचेगी! अब देर करना ठीक नहीं। वे लोग मछुआ बाड़ी गए हैं। मछुआ बाड़ी यहाँ से दूर नहीं है। इस गाँव से लगभग दो चार फर्लाङ्ग की दूरी है। रशीदा उठ बैठी।

जल्दी से कमरे के बाहर निकल कर बैठक में आई और एक दम लम्बे कदम बढ़ाती शील के मकान के दरवाजे पर पहुँच गई ।

मोहना गाँव बङ्गाल के एक कोने में बसा था। इस गाँव में लगभग पंचानवे फी सदी मुसलमान थे और बाकी हिन्दू। सदियों से दोनों मेल जोल से रहते आए थे। लेकिन कुछ गुमराह करने वाले आदमियों के चक्कर में पड़कर दोनों का दिमाग खराब हो गया था। और इस चक्कर से रशीदा का गाँव भी न बच सका। रशीदा मजहब को अच्छी तरह समझती थी। इसलिए उसने तय कर लिया था कि वह अपने जीते जी इसलाम के नाम पर कलङ्क न लगने देगी। यही सोच कर, उस घनी रात की चौड़ी छाती को रौंदती वह शील के दरवाजे पर जब पहुँची, तो चारों ओर सन्नाटा ही सन्नाटा था। दरवाजे के एक ओर शील की गाय खड़ी जमुहाई ले रही थी। उसने दरवाजे पर थाप दी खट''खट''

खट'''खट की आवाज शील के कानों में जाकर अटक गई। वह अब तक जाग रही थी। आवाज सुनते ही उसके प्राण सूख गए। उसने सहमी हुई दृष्टि से माँ की ओर देखा और घबरा कर बोली—'माँ। बदमाश आ गए!'

यह आवाज दरवाजे की दरार से होकर रशीदा के कानों में पड़ी तो उसने जोर से चीखते हुए कहा—'अरी। शीली। दरवाजा तो खोल। जल्दी कर, नहीं तो जान पर आ बनेगी।'

आवाज किसी परिचित की जान पड़ी। शील ने बढ़ कर दरवाजा खोल दिया। दरवाजे के दोनों फाटकों के बीच से बाहर की ओर देख कर बोली—'रशीदा! इतनी रात गए, तू कहाँ से आ गई? भीतर आ जा न?'

'नहीं। मैं यही पर हूँ, तू जल्दी से माँ को बुला ले। बात करने का समय नहीं है।'

कहकर रशीदा ज्यों चुप हुई तो शील की माँ ने दरवाजे पर पहुँच कर पूछा—'क्या है, रशीदी बेटी?'

'रशीदी! हम लोगों को बचाने आई है माँ।'

'बचाने आई है?' शील की माँ ने चौंककर पूछा।

'हाँ। माँ तुम लोग जल्दी से इस मकान को छोड़कर मेरे साथ चलो।' रशीदा कमरे के भीतर आकर बोली।

'आखिर कोई बात भी तो हो?'

'बात कुछ नहीं है। मैं यहीं खड़ी रहती हूँ तुम अपने जरूरी माल असबाब को लेकर आ जाओ।'

'अच्छा रह! शील के पिता जी से पूछ लूँ।' कहकर शील की माँ उसके पिता के कमरे में चली गई। साथ ही शील भी। रशीदा बाहर को दालान में खड़ी, दरवाजे से गुजरनेवाली सड़क पर फैले अन्धकार की ओर देख रही थी।

दूसरी ओर शील अपनी माँ के साथ जब पिता के कमरे में पहुँची और इस संकट का वर्णन किया, तो वे मारे भय

के काँपने लगे और अविश्वास की दृष्टि से शील की ओर देखकर बोले—'वह बचाने नहीं आई है, बल्कि हम लोगों की हत्या...।

'नहीं···नहीं ! ऐसा न कहो। वह ऐसा नहीं कर सकती। वह शील की सहेली है। देखो किसी पर अविश्वास करना ही आपस के प्रेम भाव को खोना है। अविश्वास की रेखा खींचना आसान है, किन्तु उसे मिटाना कठिन है। ऐसा न सोचो। वह बाहर दालान में खड़ी है।' शील की माँ ने कहा।

'तो उसे बुला लो न !'

पति की आज्ञा पाते ही शील की माँ ने दालान में खड़ी रशीदा का नाम लेकर पुकारा—'रशीदा ! ओ रशीदा ! इधर आना बेटी !'

बिजली सी भागती हुई रशीदा आकर इन तीनों व्यक्तियों के बीच खड़ी हो गई और घबराई हुई बोली—'चाचा ! जल्दी करो। इस मकान को छोड़ दो !'

'क्यों ? कौन सी ऐसी बात आ पड़ी है कि...'

'बात और कारण न पूछो, चाचा। आप डरें नहीं मैं अपनी प्यारी सहेली शील को बचाने आई हूँ। इस्लाम को बदनाम करने वाले बगलों ने सारे गाँव में तहलका मचा रक्खा है। अब तुम्हारे घर का नम्बर भी आ रहा है। तुम जल्दी से मेरे घर चलो।'

'लेकिन तुम्हारे घर अब्बा···।' शील ने दबी जबान से कहा।

'अब्बा। अब्बा तो खुद उस गिरोह में शामिल हैं। तू उनकी या किसी और की फिकर न कर। तेरी रशीदा के रहते, कोई बाल बाँका नहीं कर सकता।'

शील के पिता का हृदय बार-बार धड़क कर रह गया। जल्दी से वे अपने कमरे में रक्खी भगवान की मूर्ति के सामने आकर खड़े हो रहे। अपने परिवार के जीवन रक्षा के निमित्त मूर्ति के सम्मुख घुटने टेक प्रार्थना करने लगे। रशीदा ने जब यह देखा, तो गिड़ गिड़ाती हुई बोली—'अरे, चाचा। जल्दी मेरे घर चलो। आपके घर पर हमला होने वाला है।'

जवाब में शील के पिता ने उठते हुए पूछा—'हमला। कौन करेगा? हमने किसी का क्या बिगाड़ा है?'

'यह सब मैं कुछ सुनना नहीं चाहता।'

'लेकिन तू लड़की है। अकेले क्या करेगी?'

'ऐसा न सोचो, चाचा। औरत सब कुछ कर सकती है। अपनी जान रहते, तो आप लोगों पर आँच न आने दूँगी। आप चालिये तो…।'

रशीदा के बार-बार आग्रह करने पर श्याम बाबू अपने परिवार के साथ मकान छोड़कर बाहर निकल आए। बाहर आकर रशीदा ने शील के मकान में ताला बन्द कर दिया। और रात के लम्बे काले अंधकार को चीरती सबके साथ अपने घर की ओर चल पड़ी।

रात का सन्नाटा साँय-साँय करता वातावरण को और भयानक बनाए हुए था। सड़क पर लगे वृक्षों की घनी पत्तियों में बैठे उल्लू और अन्य पक्षियों का जोड़ा कभी-कभी अपनी ध्वनि से उस मौन वातावरण की मौनता भंग कर रहा था। किन्तु रशीदा शील के परिवार के साथ उस खामोशी और डरावनी रात की मर्यादा भंग करती चुपचाप अपने मकान की ओर बढ़ रही थी। श्याम बाबू भी चुप थे। चुप रहना ही ठीक था। अन्यथा कौन जाने दुश्मनों की टोली में से किसी ने अगर सुन लिया, तो रशीदा के साथ सबके प्राण पर आ बने। वातावरण अभी शान्त था। हाँ। गाँव में होने वाले काण्ड की सूचना-आकाश में उठती हुई ऊँची-ऊँची लहरों को देखकर मिल रही थी। इसलिए रशीदा ने शील को सावधान करते हुए कहा—'अरी! जल्दी-जल्दी कदम क्यों नहीं उठाती?'

यह आवाज वातावरण को चीरती सड़क के बगल में बने पार्क में जाकर खो गई। और उसके साथ ही सामने से किसी ने अपनी टार्च की रोशनी फेंकते हुए कड़क कर पूछा—'कौन है। रास्ता बन्द है।'

रशीदा के साथ सबके प्राण सूख गए। शील को लगा, जैसे जिस बला से वह बचना चाहती थी, वह अपने आप उसके समीप आ गई। कलेजे में एक तूफान सा उठना चाहता था कि टार्च की रोशनी के साथ आगन्तुक ने समीप आकर पूछा—'ओ! तुम! रशीदा। काफिरों के साथ।"

रशीदा ने देखा, यह हबीब था—उसका पति। इसके साथ रशीदा की सगाई हो चुकी थी। इसलिए रशीदा कुछ

शरमा सी गई। किन्तु दूसरे क्षण उसे ख्याल आया। वह अपने फर्ज के रास्ते से हट रही है। अपने जीवन के लिए पाक इसलाम को बदनाम करने वाले एक ऐसे व्यक्ति के विषय में सोच रही है, जिसकी आँखे बेगुनाहों के खून से लाल हो रही हैं। बस रशीदा की आँखें बदली उसने भौं को तरेरते हुए कहा—'जिसे तुम काफिर समझते हो, वे काफिर नहीं हैं, बल्कि एक इनसान हैं। हमारे, तुम्हारे जैसे ही इनका बदन और सब कुछ है।'

'चुप रहो!' कर्कश स्वर में गरजते हुए हबीब ने कहा।

'चुप मैं क्यों रहूँ। तुम रहो! अपने भरोसे पर किसी के रक्षा करने का वचन दे, मैं इनके साथ विश्वासघात नहीं कर सकती। तुम इन्हें काफिर समझते हो, किन्तु मैं केवल इनसान समझती हूँ। एक इनसान के नाते मेरा फर्ज इनकी सहायता करना है। अगर तुम रास्ते से नहीं हटोगे, तो मुझसे बुरा कोई दूसरा न होगा!' खामोशी फिर छा गई।

'यदि अपनी भलाई चाहते हो, तो इस रास्ते को छोड़कर पाक इसलाम की भलाई करो।' कहकर रशीदा ने उस सन्नाटे को चीरते हुए कदम उठाया।

पर बिजली की तरह कड़क कर हबीब ने रशीदा को रोकते हुए कहा—'ठहरो! तुम अकेले जा सकती हो, किन्तु इन काफिरों को अपने साथ नहीं ले जा सकती।'

'और मैं कहती हूँ। इनकी रक्षा अवश्य करूँगी। सुनो हबीब। अभी रात काफी है। मुझे डर नहीं है। तुम सम-

झते होगे मैं तुम्हारी होने वाली बेगम हूँ। लेकिन कान खोल कर सुन लो। रशीदा के दिल में ऐसे इनसान के लिए कोई स्थान नहीं है, जो इनसान होते हुए भी इनसान के खून के लिए प्यासा हो।'

'रशीदी...। यह सब मैं क्या सुन रहा हूँ!'

'जिसे सुन कर तुम्हारी आँखे खुल सके। जिसे सुन कर तुम्हारी जिन्दगी बन सके। मजहब आपस में बैर भाव की नींव डालने को नहीं कहता।' कहती हुई रशीदा शीघ्रता के साथ शील के परिवार को लिए, लम्बे कदम नाँपती अपने घर आ गई।

× × ×

हबीब अपना मुँह लेकर रह गया। जल्दी से दौड़कर मुल्ला साहब के घर की ओर चला। उस समय मुल्ला साहब अपने कुछ शागिर्दों को सामने बैठाकर इसलाम की शिक्षा दे रहे थे। लगभग बीस पच्चीस मुसलमान मोटी-मोटी लाठियों में कपड़ा लपेट कर मशाल जलाए खड़े थे। कुछ बैठे थे, और सबके सामने मुल्ला साहब शेरों की तरह दहाड़-दहाड़ कर इस्लाम की दुहाई दे रहे थे—'काफिर हमारे दुश्मन हैं। जब तक वे हमारे देश में रहेंगे। हमें चैन से नहीं रहने देंगे। दूसरी ओर हमारे भाइयों पर हिन्दुस्तान में ये कितना अत्याचार कर रहे हैं। इस लापरवाही का कोई ठिकाना नहीं था।' इसी जोश-खोश में हबीब ने मुल्ला साहब के सामने पहुँच कर आग में घी का काम किया।

हबीब मुल्ला साहब के सामने पहुँच कर खड़ा हो

गया। और आग उगलते हुए बोला—'मुल्ला साहब ! रशीदा की चालाकी आपने नहीं सुनी।'

'रशीदा ! कौन ? नादिर की बेटी ?' मुल्ला साहब ने उठते हुए पूछा।'

'हाँ। हाँ। उस लड़की ने श्याम के परिवार को अपने घर में छिपा रक्खा है।'

'श्याम को ?' मुल्ला साहब ने चौंकते हुए पूछा।

'हाँ। अभी-अभी सारे परिवार को लेकर अपने घर गई है।'

'और नादिर कहाँ है ?'

'वह रसूल चाचा के साथ मछुवा बाड़ी गए हैं।'

'खैर, उसे आ जाने दो। तब तक तुम लोग तैयार हो जावो। अगर उसने ऐसा किया है, तो वह इसलाम की दुश्मन है। काफिर को अपने घर में पनाह देने वाला भी इसलाम का दुश्मन है।'

'मैंने तो उसे बहुत समझाया मुल्ला साहब। किन्तु उसने मेरी एक न सुनी। वह तो मेरा ही खून करने को तैयार हो गई।'

'इतनी हिमाकत !' फिर मुल्ला साहब ने अपने सामने बैठे शागिर्दों की ओर देख कर उबलते हुए कहा—'अल्लाहो ! अकबर।' जिन्दा बाद !'

आवाज तेजी के साथ उठकर आसमान के भीतर जाने किधर छिप गई। सामने बैठने वाले पागलों ने मुल्ला साहब के साथ एक स्वर मिला कर कहा फिर मशाल लेकर उठ खड़े हुए। हबीब उस छोटी सी पागलों की सेना का नेतृत्व करने के लिये आगे बढ़ा कि सामने से चित्कार करती हुई मछुवा बाड़ी को जलाकर पहले वाले कातिल की पार्टी आ पहुँची। मुल्ला साहब ने बड़े आदर के साथ रसूल को गले लगाते हुए पूछा—'क्यों? रसूल! फतह कर लिया तुमने!'

'हाँ! बाड़ी में अब कोई भी ऐसा काफिर नहीं बचा है, जो हमारे पास इसलाम को खतरे में रख सके।'

'शाबाश! रसूल! तुमसे ऐसी ही उम्मीद थी। अपने मज़-हब को ऊँचा उठाने वालों में तुम्हारा नाम पहले आयेगा।' फिर रशीद के पिता की ओर घूम कर बोले—'और तुम्हारी हालत क्या है?'

'कुछ न पूछिए, इनकी हालत। नाम तो इनका नादिर-शाह है। लेकिन नादिर चाचा का दिल बहुत कमजोर है। सबके पीछे रहते हैं।' रसूल ने आगे बढ़ कर हँसते हुए रशीद के पिता पर कटाक्ष किया।

हाँ। यह तो इनकी सूरत देख कर ही कोई समझ सकता है। खैर, छोड़ो भी इन बातों को। अब एक नया सवाल, और उठ गया। इनकी बेटी की करतूत तो सुनो। श्याम को अपने घर भगा ले गई है।'

'कौन ! रशीदा ।' नादिर ने अपनी बेटी का नाम लेते हुए पूछा ।

'हाँ तुम्हारी बेटी ने इसलाम के खिलाफ, जो काम किया है उसे देख कर मज़हब के नाम पर हम धब्बा नहीं लगने देंगे । तुम इसी वक्त घर जाओ, और रशीदा को समझा दो, वर्ना तुम्हें भी मजहब के खिलाफ काम करने वालों की लिस्ट में लिखकर, बुरा से बुरा बर्ताव किया जायगा ।'

'लेकिन—रशीदा से मैं ऐसी उम्मीद नहीं रखता ।' नादिर ने विनय करते हुए कहा ।

'ठीक है । जिस आदमी से जो उम्मीद नहीं की जाती है, वह उसे ही कर डालता है और जिसकी उम्मीद रखी जाती है,वह नहीं हो पाती । इनसान दुनिया में जो सोचता है, वह अक्सर नहीं हुआ करता । नादिर ! तुम जानते हो । रशीदा को मैं अपनी बेटी समझता हूँ, लेकिन पाक इसलाम के नाम पर धब्बा लगाने वाले इनसान के खून का प्यासा भी हूँ । इसलिए मैं अर्ज करता हूँ कि तुम श्याम और उसके परिवार को मेरे हवाले कर दो । नहीं तो मैं हर एक आदमी से यह खोल कर कहता हूँ कि चाहे वह कोई हो । यदि हमारे विचारों के विरुद्ध काम करेगा, तो उसे जहुन्नम का घर देखना ही पड़ेगा ।' कहकर मुल्ला साहब बैठ गए ।

नादिर से न रहा गया । उसने गिड़गिड़ाते हुए कहा— लेकिन आप को यह समझने में गलती हुई है । रशीदा ऐसा नहीं कर सकती ?'

'सबूत के लिए तुम्हारे सामने हबीब खड़ा है । इससे पूछ सकते हो ?'

नादिर की आँखें हबीब की ओर घूमीं। उसने हबीब से पूछा—'क्यों, हबीब ! यह क्या माजरा है ?'

'मुल्ला साहब ने जो कुछ फरमाया है, वह बिलकुल सच है। मैंने अपनी आँखों देखा है। यदि आपको यकीन न हो, तो अपने घर जाकर देख सकते हैं ?'

'अच्छी बात है।' अपने जामाई से सारी बातें सुन नादिर के होश हवाश उड़ गए।

वह अपने घर की ओर लौटने लगा, तो मुल्ला साहब ने हबीब और रसूल की ओर देखकर कहा—'तुम लोग भी साथ चले जाओ। और यदि रशीदा उन्हें सीधे तुम लोगों के हवाले नहीं करती, तो उसके साथ उस घर में आग लगा दो। नादिर और उनकी पत्नी के लिए दूसरा घर दिया जायगा।'

नादिर ने मुल्ला का कर्कश स्वर सुना और परेशान होकर लौट पड़े। उनके साथ साथ लम्बी सी भीड़ भी थी। अक्ल के दुश्मन और मजहब को गलत समझने वालों की यह खोफनाक टोली का उत्साह देखने लायक था।

रशीदा शील को लेकर जब अपने परिवार के समीप पहुँची, तो रात के ग्यारह बज गए थे। घर का पिछला दरवाजा उसने पहले से ही खोल रक्खा था। उसी रास्ते से शील को उसके परिवार के साथ बुला लिया। और सबको भीतर के कमरे में बैठा कर, ताला बन्द कर दिया। पश्चात् स्वयं अपने पिता के कमरे से बन्दूक निकाल, उसमें

गोली भर कर एक सैनिक की तरह दरवाजे पर आ डटी। बन्दूक को अपने हाथ में उठा, भीड़ की इन्तजारी करने लगी। तभी एक गगन भेदी आवाज आकर उसके कानों में पड़ी—'काफिर भागने न पाएँ।'

यह आवाज तेजी के साथ आकर रशीदा के कानों में समा गई। एक क्षण के लिए उसके दिल पर साँप लोट गया। मन में एक अजीब सी हलचल उठ रही थी। जिन्दगी और मौत के बीच केवल एक हाथ का फासला था। शोर बढ़ता हुआ करीब पहुँच रहा था। धीरे धीरे रशीदा के घर के निकट भी आ गया। अब रशीदा सचेत हुई। उसने बन्दूक सम्भाली और दरवाजे की ओर कान लगा कर खड़ी हो गई। कुछ सोचना चाहती थी, कि तीर सी एक आवाज आई—'आप अपनी बेटी को मना कर दें। नहीं तो आप भी काफिर करार दिए जाएँगे।'

'काफिर!' रशीदा ने सोचा, 'इनसान अपने स्वार्थ के लिए इतना पागल हो गया है कि एक दूसरे को काफिर समझता है।' कभी सोचती—क्या ही अच्छा होता, यदि शब्द कोष बनाने वाले आदमी के दिमाग में यह शब्द न आया होता? लेकिन रशीदा डरी नहीं। उसने समझ लिया यह आवाज हबीब की है। इसलिए धीरज और साहस के साथ अपने पिता के आने की प्रतीक्षा करने लगी।

तभी दरवाजे की दरार से एक आवाज आकर रशीदा को सचेत कर गई। उसने सुना—भीड़ के बीच रसूल और हबीब चिल्ला चिल्ला कर कह रहे थे—'नादिर साहब आप

अपनी बेटी को मना लें वर्ना हम लोगों को लाचार होकर अपना कदम दूसरी ओर उठाना पड़ेगा।'

नादिर की भौंवों पर बल पड़ गए। जल्दी-जल्दी बढ़कर अपने मकान के बरामदे में आ खड़े हुए, और दरवाजे की साँकल को अपने हाथ में लेकर किवाड़ों से खट-खटाते हुए पुकारा—'रशीदा! ओ रशीदा। दरवाजा तो खोल?'

'दरवाजा नहीं खोल सकती, अब्बा।' आप जो कुछ कहना चाहते हैं,बाहर से कहें। मैं सब सुन रही हूँ।' भीतर से बिजली सी कड़कती हुई आवाज रशीदा की नादिर के कानों में आई।

नादिर को लगा, जैसे रशीदा ने आज जिन्दगी में उसकी बात न रखने की ठान ली है। फिर भी अपने मुल्ला और साथियों के भय से खीझकर बोला—'अरी! मेरी चिड़िया! दरवाजे पर तमाम लोग खड़े हैं। अगर तू दरवाजा नहीं, खोलेगी, तो मेरी जान पर आ बनेगी।' अपने हाथों से दरवाजे को थपथपाते हुए नादिर ने कहा।

'अब्बा! आप मेरे अब्बा हैं! और उस भीड़ में भी न जाने कितने अब्बा और भाई हैं? लेकिन इन्सानियत खंजर उठाने वालोंसे इन्सानियत के हमदर्दों का कोई नाता नहीं हो सकता।' रशीदा की आवाज समुद्र की लहरों सी उछलती भीड़ में एक अजीब सी सनसनी पैदा कर रही थी।

नादिर दरवाजा थपथपा कर कुछ कहना चाहता था, कि बाहर खड़ी भीड़ ने चिल्ला कर कहा—'अगर दरवाजा न खुला, तो घर में आग लगा दी जायगी।'

कहते हुए तीन चार लम्बे खासे जवान बरामदे में पहुँचकर दरवाजे पर जोर-जोर से धक्का मारने लगे। गाँव के साधारण घरों के दरवाजे भी साधारण तरह की मजबूती के बने होते हैं। रशीदा के बाप कोई वैसे बड़े जमींदार नहीं थे, काश्तकार थे। लेकिन जङ्गली इलाका होने के नाते इनेगिने लोगों को सरकार ने बन्दूक का लाइसेन्स दे रक्खा था। मकान भी कोई ऐसा नहीं था, जिसके दरवाजों को तोड़ने के लिए एक बढ़ई की आवश्यकता पड़ती। अतः टीन का लगा हुआ दरवाजा दो चार व्यक्तियों के आघात- हथौड़े के प्रहार से शीघ्र खुल गया। दरवाजा खुलते ही भीड़ के प्रधान लोगों ने देखा—रशीदा हाथ में बन्दूक लिए एक दरवाजे के सामने खड़ी है। दरवाजे की सिटकिनी में ताला बन्द है। उसे इस रूप में देख भीड़ थम गई।

दूसरी ओर रशीदा ने उन मजहबी दीवानों को एक बार सरसरी नजर से देखा। उसे लगा, इन्सान अपने मजहब और ईमान का पक्का बनता फिरता है, लेकिन मजहब और यह ईमान किसी के रक्त का प्यासा क्यों है? रशीदा अपने आप सोच रही थी कि उसके पिता नादिर शाह ने प्यार भरे शब्द में कहा—'यह क्या बचपना है, बेटी? बताओ श्याम और उसके घर वाले कहाँ हैं?'

'यह मैं नहीं जानती।'

तभी हबीब दरवाजे के समीप जाकर बोला—'झूठ क्यों बोलती हो, यह क्यों नहीं कहती कि उन्हें पीछे वाले कमरे में छिपा रक्खा है।'

'पहले तो मैंने छिपाया नहीं। यदि छिपाया भी है तो अपना फर्ज समझकर।'

'फर्ज! अपने परिवार और मजहब की बदनामी कराने को तुम अपना फर्ज समझती हो। जिसे तुम फर्ज समझती हो, वह धोखा है, फरेब है। अभी इसलाम पर कलंक का एक धब्बा है। अभी समय है उन्हें कमरे से निकाल कर तुम अलग खड़ी हो जावो।' हबीब ने कर्कश स्वर में कहा।

रशीदा की आँखें अपने भावी जीवन के साथी की ओर घूम गईं। लगा, जैसे इसी व्यक्ति को अब्बा ने उसके जीवन का साथी चुना है जिसे फर्ज का मतलब भी नहीं मालूम। इसी तरह रशीदा का मस्तिष्क भीड़ में जलती उन मशालों सा जल रहा था। इसी समय भीड़ ने दूसरी बार चित्कार किया—'हम जवाब चाहते हैं।'

अब रशीदा से न रहा गया। उसका कोमल चेहरा गुस्से से लाल हो गया। जब उससे न रहा गया, तो अपनी बन्दूक की नली भीड़ की तरफ तान कर बोली—'आप लोग जवाब चाहते हैं। जवाब मैं दूँगी, मगर आप लोग पीछे हट जाइये।' मैं नहीं चाहती कि मेरी प्यारी बन्दूक आप जैसे हमदर्द और सच्चे इन्सान को अपने शिकार का निशाना बना लें।'

'हम नहीं हटेंगे। काफिर को कमरे से बाहर निकाल दो, रशीदा। वर्ना ..।' इस बार हबीब की कर्कश आवाज तीर की तरह रशीदा के कान में समा गई। और वह बरामदे को छोड़ कर अपना लपलपाता हुआ छुरा सामने निकाल, रशीदा के अब्बा के सामने आकर गरजते हुए बोला—'नादिर साहब! आप, अपनी बेटी को मना क्यों नहीं करते? यदि क्षण भर में उसने दरवाजा न खोला, तो हम लोग आग लगा देंगे।'

इसके पहले कि रशीदा के बाप कुछ जवाब देते, रशीदा ने खुद ही कड़कर कर कहा -'यह कहते हुए आपको शर्म तो नहीं आती होगी। दर असल आप ही जैसे बहादुर इस-लाम और पाकिस्तान के नाम को रोशन करने वाले हैं। वाह! क्या शानदार कारनामा होगा आपका। और आपके इन साथियों का। आप एक सच्चे मुसलमान के घर में सिर्फ इसलिए आग लगाएँगे कि उसमें तीन ऐसे इन्सानों ने पनाह ली है जिनके पूजा करने का ढंग आप से जुदा है, जो अल्लाह को ईश्वर कहते हैं। बताइये तो इसके सिवा उनका क्या कसूर है।'

'चुप रहो। छोटी मुँह बड़ी बातें अच्छी नहीं लग सकतीं।' फिर हबीब ने भीड़ की ओर देखकर कहा - 'क्या देखते हो। लगा दो इस घर में आग, जला दो इस मकान को। नादिर साहब को दूसरा मकान दिया जायगा।'

भीड़ जब मशाल के साथ आगे बढ़ी, तो रशीदा ने फटकारते हुए कहा—'आप लोग अच्छी तरह सोच समझ लें। आप इस घर में आग लगाना चाहते हैं। शौक से

लगाइए। आप अपने पड़ोसियों की जान लेना, इसलाम की सेवा समझते हैं, तो जो समझ में आवे उसे ही करें। किन्तु मैं अपने तमाम भाइयों से साफ साफ खोल खोल कर कहती हूँ कि मैं पैगम्बरे इसलाम की उस सीख पर चलना चाहती हूँ कि अगर घर में शरण लेने वाला मेरे साथ दुश्मनी भी करे, तो भी मैं अपना फर्ज न भूँलूँगी। आपको याद नहीं कि एक बार हजरत मुहम्मद साहब के पास एक यहूदी आया और उसने उनसे कहा— 'मैं रात को ठहरना चाहता हूँ ?'

'हजरत ने यह जानते हुए भी कि यहूदी उनकी जान के दुश्मन हैं उसे अपने यहाँ पनाह दी। यहूदी का पेट खराब था। रात को उसने हजरत का बिस्तर भी गन्दा कर दिया, और यह सोचकर कि सुबह होने से पहले ही वहाँ से भाग गया। जल्दी में उसकी तलवार छूट गई थी। दिन चढ़े वह अपनी तलवार लेने के लिए जब आया तो उसने अपनी आँखों देखा कि हजरत उसके गन्दे किए हुए बिछौने को अपने हाथों धो रहे हैं। और जब उन्होंने अपने इस बदतमीज मेहमान को देखा, तो उनके चेहरे पर न कोई नफरत थी न कडुवाहट, बल्कि उन्होंने मुस्कराकर उससे कहा कि मैं तुम्हें ही याद कर रहा था भाई। तुम अपनी तलवार भूल गए थे, वह वहीं रक्खी है जहाँ तुमने रखी थी। यह है, वह मिसाल जो मेरे सामने है। आप भी उन्हीं हजरत को अपना रसूल मानते हैं और उनके कदमों पर चलने की हामी भरते हैं। लेकिन दरअसल आप उनके कदमों पर चलने से इतराते हैं। आप लोग जरा ठंडे दिल से सोचिए कि श्याम चाचा, उनकी बूढ़ी घर वाली और

उनकी मासूम लड़की ने आपका क्या बिगाड़ा है। क्या कभी उन्होंने गाँव के खिलाफ कोई काम किया है? क्या गाँव का स्कूल श्याम चाचा की ही कोशिशों का फल नहीं है? क्या उन्होंने वह स्कूल केवल हिन्दूओं के लिए खुलवाया था? मैं सब भाइयों से पूछती हूँ क्या गाँव के हर मुसलमान पर उनका कोई न कोई एहसान नहीं है?'

रशीदा अभी अपने शब्दों की पूर्ति भी न कर पाई थी कि हबीब और रसूल ने चिल्लाते हुए कहा—'बन्द करो अपनी लेक्चर! हम कुछ नहीं सुनना चाहते तुम्हें क्या पता कि कलकत्ते में किस तरह मुसलमान मारे जा रहे हैं। भारत की जमीन मुसलमानों के लिए तंग हो चुकी है। उन्हें मारते वक्त कोई यह नहीं देखता कि यह बूढा है या जवान, मर्द है या औरत, लड़का है या मासूम। तुम रास्ता छोड़ दो। नहीं तो मुझे जबरदस्ती तुम्हें हटाना पड़ेगा।'

हबीब पूरे जोश में चिल्लाकर बोला। रशीदा की बातों से भीड़ का जोश जितना ही ठंडा पड़ गया था, हबीब की बात से उतना ही बढ़ गया। अतएव भीड़ ने चीखकर कहा—'पगली! रशीदा। रास्ता छोड़ दे नहीं तो हम लोग अपनी हरकतों से बाज नहीं आएँगे।' फिर एक व्यक्ति की ओर घूमकर कहा—'देखते क्या हो? लगा दो आग। यह सब लेक्चर बेकार है।'

'खबरदार, जो किसी ने आगे पैर बढ़ाया। मैं किसी के साथ रिआयत न करूँगी, चाहे वह कोई हो। कोई यह न समझे कि मैं किसी रिश्ते नाते का ख्याल करूँगी।' रशीदा ने कड़ककर उत्तर दिया।

'मैं साफ कहती हूँ। अगर किसी को हिन्दुओं पर इस लिये गुस्सा है कि वह भारत में 'मुसलमानों को सता रहे हैं, तो वे भारत आकर उनसे लड़ें। यह कहना झूठ है कि भारत में मुसलमानों के लिये जमीन तंग हो चुकी है, आप लोगों को भूलना न चाहिये कि मुसलमानों की जान बचाने के लिये ही भारत के सबसे बड़े नेता महात्मा गाँधी ने अपनी जान की भेंट दे दी। आज भी पण्डित नेहरू और राजेन्द्र बाबू तथा पटेल बार-बार कह रहे हैं कि भारत हिंदू राज्य नहीं बन सकता। अलावा इसके अगर वहाँ के हिन्दू कोई बुराई करते हैं तो इसके माने यह कब हुए कि हम भी वही गलती करें। मैं अपने तमाम भाइयों से पूछती हूँ- क्या हमारे पैगम्बरों ने प्यार से दुश्मन को दोस्त नहीं बनाया? अगर इसका जवाब आपके पास नहीं है तो फिर आखिर आप क्यों अपने मजहब के नाम पर कलंक लगाने को तैयार हैं। कुरान और हदीस की तालीम को कुछ बहकाने वालों के फन्दे में फँसकर पैरों तले रौंदना चाहते हैं। बोलिए! आप जवाब दीजिए? अपने दलीलों से मुझे कायल कर दीजिये। अगर मैं कायल हो गई तो आप से पहले श्याम चाचा के खून में हाथ रंग लूंगी। बतलाइये अल्लाह या उसके रसूल ने अपने पड़ोसी की जान लेने का कहाँ हुक्म दिया है?'

परदे में रहने वाली इस रशीदा की जादू भरी बातों ने भीड़ के कुछ लोगों पर अपना प्रभाव तो अवश्य डाला। किन्तु मजहब के उन दीवानों की आँखों पर तो मानो धूल जमी हुई थी जिसे हटाने के लिये किसी दूसरी शक्ति की आवश्यकता थी। रशीदा अपने हाथ में बन्दूक रखने के

बाद भी उसका प्रयोग करना नहीं चाहती थी। भीड़ की ओर उत्तर की प्रतीक्षा कर रही थी कि सामने घुँधले अन्धकार को चीरती दो मोटर लारी आ पहुंचा और उनमें से शीघ्रता पूर्वक कुछ खद्दर धारी और फौजी अफसरों के साथ सिपाहियों की एक टुकड़ी भी उतर पड़ी। फौज ने आते ही भीड़ को चारों ओर से घेर लिया। हवीब रसूल और रशीदा के पिता नादिर को पुलिस ने कैद कर लिया। उनमें जो भाग सकते थे, भाग निकले। खद्दरधारी व्यक्ति कोई मुसलमान ही मालूम पड़ रहा था। भीड़ को अपने कब्जे में करने के बाद, उसने रशीदा के समीप पहुँच कर पूछा—'क्या मामला है, बहिन!'

'एक इन्सान का खून, दूसरा इनसान करना चाहता है, इसलिये वह अपना एक आजाद मजहब मानता है। मेरे पड़ोस में रहने वाले श्याम...।'

'अब ताला खोल दो। हम सब लोगों को कैम्प पहुँचा देंगे। तुम अगर चलना चाहती हो, तो मेरे सथ चल सकती हो?'

'हाँ मैं भी चलूँगी। लेकिन आप लोग मेरे अब्बा को आजाद कर दें। कसूर उनका नहीं है बल्कि इन गुमराह करने वाले नासमझ जानवरों का है। उन्होंने इन्हें धमकी दी थी कि यदि तुम इन लोगों की हत्या न करोगे तो काफिर करार दिए जावोगे।'

'इसका निर्णय तो सरकार करेगी! अभी मजिस्ट्रेट से मिलने पर इनकी रिहाई हो जायेगी! फिर मकान के

दरवाजे में लगे ताले को हाथ में उठाकर कहा—'इसे खोल डालो। अब इसकी ज़रूरत नहीं।'

रशीदा ने अपने हाथ की बन्दूक एक ओर रख दी। अपनी टेंट से कुंजा निकाल कर ताला खोलती हुई बोली—'आप मजहब के पुजारी हैं, या इनसानियत के?'

'इनसानियत मजहब का दूसरा नाम है।'

यह कहकर उस खद्दर धारी व्यक्ति ने किवाड़ पर जो धक्का दिया, तो दरवाजा खुल गया। कमरे के भीतर उसने देखा एक वृद्ध, एक औरत और एक षोडश वर्षीय कन्या जिनका कलेजा गम से इस तरह सूख गया था कि ओंठों पर काई की तरह पपड़ी पड़ गई थी। रात भर जागने से सबकी आँखें सुर्ख हो रही थीं। अलसाए और कुम्हलाए हुए उन मूर्तियों को देखते ही इसने निकट पहुँच कर पूछा—

'आप लोग कैम्प चलने के लिए तैयार हो जाइए। मेरे साथ लारी में आप लोग सरलता पूर्वक वहाँ पहुँच जायेंगे।'

'आपकी मेहरबानी है। बेटा तुम युग युग जीवो।' फिर रशीदा के विषय में पूछा—'तुम नहीं चलोगी।'

'मैं चलूँगी, चाचा। जिस गाँव में हम सदियों से एक साथ रहते आए, जहाँ की धरती ने हमें अपने अनाज पानी से एक सा पाल-पोस कर इतना बड़ा किया वहाँ के भाइयों और चचा लोगों की समझ में हम लोग काफिर हैं तो फिर यहाँ रहने से क्या फायदा।'

'बेटी, रशीदा। तू धन्य है।' शील के पिता ने कहा।

'धन्यवाद की आवश्यकता नहीं होती। वह एक आजाद मुल्कों की युवती है। आप लोग उसके पिता और माता के समान हैं। अपने से बड़ों का आदर इसलिए किया जाता है कि छोटे से वे उम्र में अधिक अनुभवी होते हैं। वह छोटी है। उसने मनुष्य होने के नाते अपना फर्ज निभाया है। अब आप लोग देर न करें। आइए बाहर निकल आइए।' उस खद्दरधारी व्यक्ति ने शील के परिवार को बाहर निकलने के लिए आग्रह किया।

देखते देखते सुबह की उस स्तब्ध बेला में रशीदा के साथ शील का परिवार कैम्प जाने वाली लारी पर सवार होकर कैम्प पहुँच गया। दूसरी लारी में उपद्रव कारियों को पकड़ कर एक जेल में भेज दिया गया। गाँव से थोड़ी दूर पर तहसील और थाना था। थाने के पास ही जेल भी बना था जिसमें कभी मालगुजारी न अदा करने के अपराध में जमींदार और डकैतियों के मुलजिमों को चौबीस घन्टे के लिए बन्द रखा जाता था। उस जेल के ही अन्दर प्रत्येक व्यक्ति को बन्द रखा गया।

सुबह आठ बज गए थे। रात की घटना ने शहर अधिकारियों के कान खड़े कर दिये थ। मछुवा बाड़ी की दर्दनाक कहानी ने दूसरे गाँवों के लोगों में एक हलचल मचा रखी थी। जातियता और मजहब के नारों से दुनिया भले ही दूर रहे किन्तु यहाँ के लोगों में 'हम –तुम' की भावना ऐसे रूप में फैली हुई थी जिसको देखकर हर एक नेता

और सेवक परेशान था। कभी-कभी कहीं आग लगने की बात सुन पड़ती। मुसलमान युवकों की एक टोली जो अपने को 'खुदाई खिदमतगार' कहती थी तत्परता के साथ प्रत्येक व्यक्ति की सहायता कर रही थी। कैम्प में रशीदा शील के परिवार के साथ रहने लगी। दोनों का कैम्प एक ही पास था। शील के पिता ने रशीदा को भी अपने साथ रखा। खद्दर धारी युवक सुबह शाम आकर उनकी देख रेख कर जाता।

आज कैम्प में रशीदा ने आकर, एक एक करके तीन दिन काट दिया। वह अपने घर को छोड़ कर खुश नहीं थी। बल्कि मन ही मन परस्पर की इस विद्रोह भावना को देख कर रो उठती। सांझ हो रही थी। मेले में जैसे कैम्प पड़ते हैं, ठीक उसी तरह सहस्रों कैम्प पड़े हुए थे। उन कैम्प के रहने वाली महिलाएँ कुएँ पर पानी भरने जा रही थीं। रशीदा अपने कैम्प के सामने पड़े एक टीन पर बैठी सामने की ओर देख रही थी। उससे थोड़ी दूर पर शील अपनी माँ के सिर में तेल मालिश कर रही थी। उसके पिता धूप में बैठकर रामायण पढ़कर लेटे हुए थे। अपनी विगत स्मृतियों को याद कर सम्भवतः वे सूरज की किरणों से कुछ पूछना चाहते थे इसी समय रशीदा ने उनका ध्यान भंग करते हुये पूछा—' चाचा। अब्बा को छुड़ाने के लिए दरखास्त दी थी। उसकी सुनवाई नहीं हुई।'

'सुनवाई होगी। आज वह खद्दर धारी बाबू आयेगा, तो उससे कहना बेटा। अगर वह कुछ ध्यान न देगा तो हम सब लोग चलकर सरकार से प्रार्थना करेंगे। नादिर भइया निर्दोष हैं।'

'नहीं चाचा। अब उन्हें छुटकारा नहीं मिल सकता।' रसूल और हबीब उन्हें नहीं बचने देंगे। सारा अपराध वे लोग उनके सिर मढ़ देंगे।'

'किसी को अपराधी कहने से वह कोई अपराधी नहीं हो जाता। क्षण भर के लिए परेशानी अवश्य हो जाती है। किन्तु सोना कसौटी पर जाकर भी, सच्चा ही उतरता है। किसी के कहने से पीतल नहीं हो सकता।'

'लेकिन मुझे अब आशा नहीं है। मुझे तो ऐसा लगता है कि उन लगों को शहर के जेल में भेज दिया गया है।' कहती हुई रशीदा अनमने मन से उठी। शीला की माँ के पास बैठती हुई बोली—'शील! चल आज कैम्प के बाबू के पास चल कर अब्बा को छोड़ने के लिए एक और दरखास्त दे दें।'

'मुझे कोई आपत्ति नहीं है। चलो न।' कहकर शीली उठ पड़ी।

अपनी धोती बदली और रशीदा ने सलवार। कपड़े बदलने के बाद दोनों ज्यों तैयार होकर चलने को थीं कि खद्दरधारी व्यक्ति ने पीछे से उनके समीप पहुँच कर पूछा—'क्यों। आप लोग कहाँ चलीं?'

'ओ आप। जी नमस्ते।' शील और रशीदा ने साथ-साथ नमस्ते किया।

'हाँ। आप लोगों की तैयारी...।'

'जी एक अर्जी देने जा रही हूँ। अब्बा जाने अब तक क्यों नहीं छोड़े गए है ?'

'अब्बा आपके छूट गए हैं। पुलिस के साथ तुम्हारे श्याम चचा और अपना सामान लेने के लिये गये हैं। अभी आपकी नजरों के सामने उनकी सूरत नजर आयगी। अब आप लोगों के कष्ट करने की आवश्यकता नहीं। यद्यपि उनका छूटना असम्भव था। हबीब और रसूल ने झूठा आरोप उन पर लगाया था, किन्तु एक दूसरे व्यक्ति ने उन दोनों को स्वंय अपराधी बताया। दोनों को सरकार ने शहर के जेल में भेज दिया है।' कह कह वह अपने काम से चला गया।

शील और रशीदा पिता की खुशी में नाच उठीं। रशीदा दौड़ती हुई शीला के पिता के समीप जाकर लिपटती हुई बोली— 'चाचा। चाचा अब्बा छूट गए ?'

'सच।' आश्चर्य और खुशी में भरकर श्याम से पूछा।

'हाँ, चाचा। वह खादी कुरते वाला बाबू कह रहा था। रसूल और हबीब ने उन्हें फँसाना भी चाहा था, किन्तु उनकी एक न चली। और अब्बा बाल बाल छूट गए।'

'बस' अब सब लोग साथ ही इस स्थान को छोड़ कर भारत चले जाएँगे। सब प्रभु के ऊपर है।'

रशीदा, शीला सबने मिलकर खुशी मनाया। शीला की माँ ने अपने आप हृदय को बटोर कर रशीदा को गले लगाया। तत्पश्चात रशीदा और शीली उठकर कैम्प के बाहर

खिंची चहार-दिवारी के गेट पर जाकर अब्बा के आगमन की परीक्षा करने लगीं। थोड़ी देर बाद लम्बी सी दाढ़ी और दुबले पतले बदन का एक प्रौढ़ सामने से आता दीख पड़ा। यही थे रशीदा के पिता। कैम्प के सामने वाले दरवाजे पर पहुँचते ही रशीदा दौड़कर अपने पिता से लिपट गई। शील को भी उन्होंने अपने सीने से लगा लिया। फिर कैम्प की ओर बढ़ाते हुए बोले—'श्याम भाई कहाँ है रशीदी ?'

'वहाँ के सामने वाले कैम्प में।' बढ़ती हुई रशीदा ने अपने पिता का हाथ पकड़ कर उस ओर खींचा, पीछे-पीछे शीला चल पड़ी।

दोनो परिवार ने मिलकर खूब खुशियाँ मनाई। रात को एक स्थान पर बैठकर खाना खाया। आपस में लम्बे अरसे तक बीती बातें होती रहीं। अन्त में सब सो गए।

४

रात के दस बज गए थे। कैम्प में हिन्दू, मुसलमान और अन्य सभी कार्य कर्त्ता जाग रहे थे। कुछ सो भी रहे थे। कैम्प में अभी तक मोटर लारी द्वारा एक स्थान से निकाल कर उनकी रक्षा के निमित्त बहुत से ड्राइवर और सेवक गाँव में दौड़ रहे थे। कभी-कभी मारो-काटो की कर्कश स्वर से कैम्प की मौनता भंग हो जाती। रशीदा और शील भी अभी तक जाग रही थीं। कैम्प के अन्य यात्री तो लगभग सो ही गए थे। किन्तु रशीदा मारो काटो की आवाज सुनकर मन ही मन डर रही थी। उसके मन में भ्रम हो गया था कि कैम्प पर हमला न हो जाए? सोचती हुई

रशीदा की आँखें कैम्प की छत पर लगी हुई थीं। किन्तु ध्यान उसका कैम्प के चारों ओर लगा था। अकेले लेटी लेटी, जब उसे कुछ भय लगा तो उसने शील की चारपाई पर अपना हाथ रखकर उसे झकझोरते हुए पूछा—'क्यों री ओली ? सो गई क्या ?'

'नहीं तो.. नींद कहाँ आती है।'

'हाँ। मुझे भी नींद नहीं आती !' फिर सन्नाटे की ओर ध्यान दिलाती हुई बोली—'देखती है न कैसा सन्नाटा साँय सांय करता काँप रहा है।'

'हाँ ! सन्नाटा तो है, लेकिन अभी तक गाँवों में हमले हो रहे हैं। अभी-अभी दस नं० के कैम्प में एक मृत-शव के साथ कोई परिवार आया है।'

'तुझे कैसे मालूम हुआ ?'

'काना फूसी कुछ हो रही थी। तेरा ध्यान वहीं था ?'

'कहीं नहीं। मैंने कुछ लोगों को बातें करते तो जरूर सुना था, किन्तु ध्यान नहीं दिया, मैंने।'

'मुझे ऐसा लगता है कि कैम्प पर भी हमला न हो जाय ?' रशीदा ने डरते हुए कहा।

'कोई आश्चर्य जनक बात नहीं। मनुष्य जब मनुष्यता की सीमा से नीचे गिर पड़ता है, तो उसके हृदय में अपने समीप रहने वाले प्रत्येक प्राणियों से घृणा हो जाती है।

धीरे-धीरे वहां घृणा उसके मस्तिष्क में ईर्ष्या और क्रोध के रूप में बदल कर प्रतिशोध के रूप में परिणित हो जाती है। आज इन लोगों का लक्ष्य पूरा होते होते भी अधूरा रह गया है। उस अधूरे कार्य की पूर्ति वे मानव का संहार करके करना चाहते हैं। यदि कैम्प पर हमला कर दें तो कोई आश्चर्य नहीं।'

'लेकिन कैम्प को तो अधिकारियों ने चारों ओर से घेर कर हिफाजत का सामान इकट्ठा कर लिया है।'

'सब कुछ है। किन्तु दानवी शक्ति के आगे मानवी शक्ति थोड़ी देर के लिए हताश हो जाती है, रशीदी! अब इस वाद-विवाद को छोड़कर जल्दी से सो जा। रात भी काफी बीत चली है।' कहकर शीली ने करवट बदली।

तभी कैम्प में सन्नाटा चीरती हुई गोली की तरह एक आवज दूर से सुनाई दी—'आग लगा दो।'

आवाज शीली के कानों में पड़ी, तो उसने रशीदा को सचेत करते हुए कहा— 'देख। रशीदी। विद्रोहियों की टोली किसी गांव पर हमला करने जा रही है?'

'हाँ। मैंने आवाज सुनी है। तू अब मत सो। अब्बा और चाचा को जगा दे।' कहती हुई रशीदा उठ पड़ी।

चारपाई छोड़ शील को साथ लेकर उसके पिता श्याम के पास पहुँची, जो नाक से धुआँ उड़ा रहे थे। उनके पास ही रशीदा के पिता भी लेटे थे। थोड़ी दूर पर शीला की माँ भी

लेटी थी। शीला की माँ को नींद न आई। नींद आती भी कैसे ? जिस व्यक्ति ने वर्षों से एक खेत में परिश्रम किया। जब वह खेत और घर छूट रहा था तब उसे चिन्ता क्यों न होती ? लेकिन शीलो ने समझा कि उसकी मां सो गई है। अतः माँ के निकट जाकर बोली—'माँ -माँ उठो न—उपद्रवी आ रहे है। कौन जाने इस कैम्प पर भी हमला कर दें।'

'अरी ! मैं सोई नही हूँ। जाग रही हूँ। तू अपने पिता कोजगा दे। रशीदा कहाँ है ?' कैम्प में फैले अन्धकार में अपनी बेटी को टटोलते हुए उसने पूछा।

'वह तो मेरे पास ही खड़ी है।'

'क्यों रशीदा। तेरे अब्बा कहाँ हैं।' शील की माँ ने पूछा।

'चाचा के पास सो रहे हैं। चाची जल्दी से उठो।' कहकर रशीदा, ज्यों शील की माँ का हाथ पकड़कर उठाना चाहती थी कि कैम्प में रहने वाले सेवकों की सीटी बज उठी।

खतरे की यह घन्टी कैम्प के चारों ओर शंखनाद करती हुई आगे बढ़ रही थी। कैम्प में रहने वाले सभी व्यक्ति चिल्ल-पों मचा-मचा कर इधर उधर दौड़ने लगे। रशीदा के कैम्प के सामने से एक स्वयं सेवक चिल्लाता हुआ निकल गया—'अपना सामान ठीक कर लो। कैम्प में आग लग गई है।'

'कैम्प में आग ?' रशीदा ने सुना और हाय करके रह गई। जल्दी से शील को, तथा उसकी माँ को अपने साथ

लेकर अपने अब्बा के समीप आकर बोली—'अब्बा। अब्बा जल्दी उठो न। कैम्प में आग लग गई है।'

'आग। आग।' श्याम आँखें मींच कर उठ बैठा। उसके साथ ही रशीदा के अब्बा भी उठ कर कैम्प के बाहर आ गए।

अँधेरी रात में अपना हाथ भी नहीं सूझता फिर एक दूसरे व्यक्ति को देखकर पहचानना तो और भी कठिन था। शील अपनी सहेली और परिवार के साथ कैम्प से निकल कर जब बाहर आई, तो अन्य कैम्पों में रहने वाले निवासी प्राण रक्षा के निमित्त इधर उधर भाग रहे थे। पूरब की ओर आग की ऊँची ऊँची लपटें अपना उग्र रूप धारण किए न जाने कितने कैम्पों को अपने मुँह का ग्रास बना चुकी थीं। स्वयं-सेवक परेशान थे। शहर की बात नहीं, जो फायर ब्रिगेड द्वारा तत्क्षण आग बुझा दी जाती। फिर भी पास ही के कुएँ से डोल में पानी खींचकर आग बुझाने का क्रम जारी था। आग बुझाने के लिए स्वयं सेवक अपना कर्तव्य सम्मुख रखकर प्राणों की बाज़ी लगाए आग से खेल रहे थे। कुछ स्वयं सेवक लोगों को कैम्प से बाहर निकाल रहे थे। कैम्प का चीफ मैनेजर परेशान था। उसकी हालत, तो अजीब सी हो रही थी। शील का परिवार भी अपने कैम्प के सामने खड़ा किसी स्वयं सेवक के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। सहसा सामने से एक स्वयं सेवक ने उनके सम्मुख आकर अपने टार्च की रोशनी उनके ऊपर फेंकते हुए कहा—'आप लोग मेरे साथ आइए। समय नहीं है। विद्रोहियों की बहुत बड़ी जमात ने कैम्प पर

हमला कर दिया है। कैम्प में आग लग चुकी है। यदि आप लोग कैम्प न छोड़ेंगे, तो किसी का बचना सम्भव नहीं।'

यशोदा और शील का हृदय भूकम्प में डोलते हुए मकान सा एक बार जोर से काँप गया। सारे परिवार को लगा, मानों सब लोग बेहोश होकर गिर पड़ेंगे। किन्तु यशोदा ने अपने आप को मजबूती के साथ सम्भालते हुए कहा—'आप लोग घबरायें नहीं। मैं सब कुछ ठीक कर लूँगी। आवो शील। इस स्थान को छोड़कर दूसरी जगह चलें।"

पश्चात उस स्वयं-सेवक के साथ सभी लोग कैम्प छोड़कर चल पड़े। किन्तु भीड़ तो कैम्प के कम्पाउन्ड में प्रवेश कर चुकी थी। कितने लोगों को तलवार और छुरे के घाट उतार दिया गया था। जाने कितने स्वयं सेवक भी इस कुचक्र में पड़कर पिस गए थे। मानव, मानव का रक्त शोषण कर रहा था। इस प्रचण्ड ज्वाला को देखकर प्रत्येक व्यक्ति का हृदय डोल उठता। भीड़ तो बढ़ती ही रही। आगे पीछे मरने और मारने वालों का कोई ठिकाना नहीं था। भाग दौड़ में कौन पीछे छूट गया और कौन साथ आया। इसका ध्यान नहीं था। शील के परिवार को लिए स्वयं सेवक उस अँधेरी रात को चीरता आगे बढ़ रहा था, कि सामने से दो मशाल-धारी सैनिकों ने आकर रास्ता रोक लिया स्वयं सेवक का साहस छूट गया। अब वह क्या करे। ऊहापोह में पड़ा, वह कुछ निश्चित करना चाहता था कि अगले मशाल धारी व्यक्ति ने गरजते हुए कहा—'तुम! खलील हो! काफिरों की मदद कर रहे हो?'

'हाँ। रहमान ! अगर तुम इनसानियत की हत्या करना अपना फर्ज समझते हो, तो खलील रसूल और पैगम्बरे इस-लाम की सच्चाई के साथ हिफाजत चाहता है।'

'काफिरों की हिफाजत करना ही इसलाम का फर्ज है, पगले।' कहकर रहमान एक ठहाका लगा कर जोर से हँसा।

'काफिर का अर्थ तुमने नहीं समझा।'

'मैंने नहीं समझा, लेकिन अब तुम्हें समझा दूँगा। बोलो। तुम भी इनके साथ मरना चाहते हो ?'

'हाँ। इनकी हत्या के पहले तुम खलील की हत्या कर डालो। उसके बाद इन बेगुनाहों पर अपने छुरा का वार करो।'

'नहीं खलील। तुम भूलते हो। अपने मजहब और फर्ज की इज्जत के लिये रहमान ऐसा करना नहीं चाहता। मैं अर्ज के साथ कहता हूँ—तुम रास्ते से अलग हट जाओ। वरना अपनी जिन्दगी से तुम्हें हाथ धोना पड़ेगा।'

'नहीं अपने शरण में आने वाले को जीते जी खलील नहीं छोड़ सकता। चाहे उसे अपने प्राण ही क्यों न देने पड़ें।'

'हूँ...मौत दो तरह की होती है। एक तो इनसान अपने आप बुलाता है। दूसरी खुदा के जरिये होती है। तुम दुनिया में जीने के लिये आये हो, लेकिन देखता हूँ आज तुम्हारी जिन्दगी खतम हो गई।'

तभी दूसरा व्यक्ति बोल उठा—'भाई। वहस मत करो। उड़ा दो गोली से और इन औरतों को अपने साथ ले चलो। कल सुवह हम अपने साथ निकाह कर लेंगे।'

खलील की आँखों में आग की चिनगारी सी सुलग उठी। उसने दहाड़ते हुये कहा—'खबरदार अगर इस तरह की बात तुम लोगों ने अपने मुँह से निकालो।'

खलील की उबलती हुई इस आवाज ने उनके क्रोध में आहुति का काम किया। पहले मशाल धारी व्यक्ति ने अपनी बन्दूक ऊपर उठा ली और उतावले पन में उसका ट्रीगर दबा दिया। घोड़े के दबते ही एक चिनगारी सी उड़ी, और खलील के सीने को चूमती, जाने उस अन्धकार में कहाँ विलीन हो गई। रशीदा और शील चीख मार कर पीछे हट गईं। श्याम और नादिर एक ओर खड़े थे। तभी एक व्यक्ति ने श्याम के निकट पहुँचकर अपना काम समाप्त करना चाहा कि नादिर ने उसके हाथ से छुरा छीन कर तानते हुये कहा—'खबरदार। अगर श्याम भाई पर तुमने हाथ उठाया।'

'लेकिन पागल भी कहीं किसी की सुनता है?' दूसरे व्यक्ति ने नादिर को धक्का दिया और उसके पेट में छुरा भोंक दिया। नादिर लड़खड़ा कर गिर पड़ा। अन्धेरी रात ने देखा, उसके काले आँचल में शव किसी इनसान का था और छुरा स्टील का।

रशीदा और शील चीख चीख कर रह गईं। श्माम थर-थर काँप रहा था। उसकी माँ हाय-हाय करके चीख रही

थी। उसकी मृत्यु के बाद श्याम की ओर कातिल बढ़ा तो पीछे से एक सिपाही ने अपनी रायफिल तान कर कहा—'नीच! खबरदार अगर तूने अबकी कदम बढ़ाया।' फिर अपने पीछे खड़े कुछ सिपाहियों को ललकारते हुये कहा—क्या देखते हो? कैद करलो इनको।'

एकाएक तीन संगीन धारी सैनिक निकल आए। एक ने समीप आकर दोनों मशालधारी व्यक्ति को हथकड़ी डाल दिया। फिर रशीदा और शील के साथ उसके परिवार को लेकर स्टेशन के समीप पड़े कैम्पों की ओर चल पड़ा। रात खतम होने को आई। तारों का सुनहरा प्रकाश धुँधला पड़ने लगा था। कैम्पों में लगी आग अभी तक सुलग रही थी। मृत शव और घायलों को मोटर कार अपनी गोद में भर कर शहर के अस्पतालों में पहुँचा रही थी। शहर का सारा अस्पताल घायलों से भर गया था। शहर के तमाम अधिकारी इस विद्रोह से स्वयं परेशान थे। अन्त में विद्रोहियों का उपद्रव देखकर शहर के स्वयं-सेवकों और नेताओं ने प्रत्येक हिन्दू को भारत भेजने की सूचना निकाल दी।

दूसरे दिन स्टेशन के कैम्प से शील का परिवार भारत जाने वाली स्पेशल ट्रेन में बैठा दिया गया। साथ ही रशीदा भी थी। अपनी जायदाद और वर्षों से एक साथ रहने वाले व्यक्तियों का साथ छोड़कर सब लोग भारत की ओर चल पड़े। उपद्रव कारियों के स्थान छोड़ने के उपरान्त रशीदा का हृदय, उसकी आँखें और दिल की धड़कनें मजबूरियों के साथ कड़क-कड़क कर रह गईं।

रात उसने रोते-रोते काट ली। सुबह हुई और जब ट्रेन में वह शील के परिवार के साथ सफर करने लगी, तो उसकी आँखें और शील की आँखें झरना सी बनकर बहती जा रही थीं। गाड़ी में अधिकतर हिन्दू थे। नारी और नर, सधवाएँ और विधवाएँ सभी लोगों से पूरा कम्पार्टमेन्ट भरा था। लेकिन हमेशा की तरह आज की ट्रेन में बातों का बाजार और खुशी खुशी रास्ता काटने वाला मज़ाक न था, बल्कि एक अजीब सी खामोशी और मायूसी छाई हुई थी। जिसके चेहरे को देखिए अपना रोनी सा मुँह बनाए गुम सुम कुछ सोच रहा था। अपने साथियों के विषय में अथवा उन बेगुनाहों के बारे में, जिनका खून केवल इसलिए किया गया था कि वे जाति के दूसरे थे। रशीदा और शील भी इन्हीं गिरोह के मुलजिमों में से एक थीं। सुबह के दस बज रहे थे। गाड़ी अपनी रफ्तार से मील को पीछे छोड़ती भागती जा रही थी। रशीदा अपने दुपट्टे से अपना मुँह ढक कर रो रही थी। श्याम और उनकी पत्नी उसे धीरज बँधा रहे थे। लेकिन एक रशीदा थी, जो चुप होने का नाम ही नहीं लेती थी। अन्त में सामने बैठी हुई एक वृद्धा ने शील से पूछा—'यह क्यों रो रही है ?'

'और तुम अभी क्यों रो रही थी।'

'ओ ! मनुष्यता के बीच इसका भाग्य पिस गया क्या ?'

'नहीं, भाग्य का निर्माता और दूसरे की भलाई करने वाला इसके पिता और मेरे एक मात्र चाचा को इसकी बिरादरी वालों ने...।

'ओ ..!' फिर तो भाग्य की मारी है ! फिर रशीदा को समझाती हुई बोली—'बेटी ! अब रोने से क्या होगा ? मेरे तीन लड़कों को एक सप्ताह पूर्व कातिलों ने मार डाला। रोई चिल्लाई, लेकिन विवश होकर पेट के बल रह जाना पड़ा। यह तो संसार है। दुनियाँ में मृत्यु न होती, तो उत्पत्ति का विकास ही रुक जाता। रोना व्यर्थ है। किसी के माँ-बाप कब तक जीवित रहते हैं।' फिर उसके सिर की ओर देखकर बोली—'तेरा शौहर।'

'शौहर ही कातिल था।' रशीदा ने कहा और अपने दोनों हाथों के बीच अपना मुँह छिपाकर फफक पड़ी। शील से न देखा गया, उसने अपना आँचल उठाकर रशीदा के आँसूओं को पोछते हुए कहा—'अब रोने से क्या होगा, रशीदा बहिन ! मेरे पिता क्या तेरे पिता के तुल्य नहीं हैं।'

लेकिन रशीदा तो जैसे कुछ सुनती ही नहीं। लाख समझाओ, पर सब बेकार। अन्त में शील की माँ ने उसे अपनी गोद में खींच लिया और उसके बालों को सहलाते हुए कहा—'रशीदा। तू रोती क्यों है। अभी तो तेरे चाचा और मैं हूँ। क्या तुझे हम लोगों पर विश्वास नहीं होता ?'

'ऐसा न कहो, चाची। जीवन में अब तुम्हीं लोग तो मेरे सब कुछ हो।'

रशीदा ने अपने वाक्य को पूरा किया और तभी एका-एक गाड़ी की चाल धीमी पड़ गई। कम्पार्टमेन्ट के लोगों

ने सिर निकाल कर झाँकना शुरू किया। देखा, न कोई स्टेशन है न कोई सिगनल। फिर गाड़ी क्यों रुक गई। गाड़ी में बैठे व्यक्तियों में एक बार हलचल मच गई। लोग आपस में काना फूसी कर रहे थे। अपनी अपनी अक्ल के अनुसार सभी ऊँच नीच हाँक रहे थे। अन्त में एक व्यक्ति ने सामने निकल कर नीचे खड़े आदमी से पूछा—'अजी गाड़ी क्यों रुक गई?'

'अमे यार। अपना सामान वगैरह लेकर जल्दी नीचे उतरो। आगे रेलवे की पटरी खोल दी गई है। पुल के उस पार भीड़ खड़ी है। वे लोग गाड़ी पर हमला करने वाले हैं। गाड़ी खाली हो रही है।'

'हाय-बाप रे!' कहकर वह आदमी अपने डिब्बे के व्यक्तियों की ओर घूमा और जल्दी से डिब्बे से नीचे उतर कर लाइन के निकट वाले जङ्गल की ओर भागा।

सचमुच पन्द्रह मिनट बीतते बीतते सत्याग्रह छिड़ गया। मारो और भागो की आवाज बढ़ती-बढ़ती रशीदा के डिब्बे के समीप पहुँची। रशीदा और शील ने अपने परिवार के साथ डिब्बा छोड़ दिया और जङ्गल की ओर भाग खड़ी हुई। लेकिन भीड़ निकट पहुँच चुकी थी। देखते-देखते भीड़ ने कितनों को अपने तलवार से स्वर्ग नर्क में भेज दिया। मासूम बच्चे और भोली अबलाओं का सोहाग और भावी जीवन का खून एक इनसान कर रहा था। यहाँ हिन्दू मुसलमान का ख्याल न था। ख्याल था दुश्मनों का। हिन्दू को बचाने वाला मुसलमान भी इसलाम का दुश्मन था। भीड़ में आने वाले

व्यक्ति अपनी पिपासा और पापावृति को लिए गाड़ी के डिब्बे में प्रवेश कर छुरे से प्यास बुझा रहे थे। एक एक करके गाड़ी के ड्राइवर गार्ड और फोरमैनों के साथ यात्रियों का जीवन सदा के लिए समाप्त किया जा रहा था। सारे डिब्बे खून के धब्बों से इस तरह सुर्ख हो रहे थे, मानों होली में चलने वाले रंगों से सड़कें लाल हो गई हों। इस मार-पीट की आवाज से जो भाग सके, उनमें कुछ ही ऐसे थे, जिनकी जान बच सकी। रशीदा अपनी सहेली के परिवार के साथ जंगल की ओर भागी. लेकिन एक कातिल ने जंगल में घुसने के पूर्व ही उसे अपनी गोली का निशाना बनाना चाहा। किन्तु गोली एक घने पौदे की आड़ में जाकर अदृश्य हो गई। रशीदा को अवसर मिला। उसने शीला के साथ उसकी माँ और पिता को पकड़कर जंगल की ओर खींचा। पश्चात उस घने जंगल की गोद में जाने कहाँ अदृश्य होगा।

६

असंख्य झाड़ियों और टेढ़ी-मेढ़ी पगडण्डियों को पार करती रशीदा उस भयानक और बीहड़ वन पथ पर शील के परिवार के साथ चली जा रही थी। जङ्गल में सूरज की रोशनी भी पहुँचने में असमर्थ थी। चारों ओर अखिल रूप में निस्तबधता छाई हुई थी। कभी-कभी हिरण के दो चार बच्चे चौकड़ी भरते आगे बढ़ रहे थे। कहीं गुफा में बैठे बाघ और चीते की डरावनी आवाज भी सुनाई पड़ती। परन्तु रशीदा का हृदय उन शब्दों को सुनकर विचलित नहीं हुआ। वह दूने उत्साह से आगे बढ़ती जा रही थी। उसके पीछे शील

अपने परिवार के साथ चल रही थी। सब लोग खामोश थे। शील के पिता श्याम देव से अब नहीं चला जाता था। वैसे भी उनकी अवस्था काफी ढल चुकी थी। एक वृद्ध और वृद्धा के लिए इतनी दूरी तक पैदल चलना नितान्त असम्भव था। फिर भी प्राण रक्षा के निमित्त चल रहे थे। इस तरह चलते-चलते, जब सात मील जमीन तय कर चुके, तो श्याम देव ने अपनी बेटी को रोकते हुए कहा— 'बेटी? अब मुझसे नहीं चला जाता।''

शील ने अपने कदम रोक लिये। उसके साथ ही रशीदा थम कर खड़ी हो गई। पत्नी ने पति की ओर शिथिल और भरे नेत्रों से देखा। तत्पश्चात वहीं बैठ गई। पति के पावों में पड़े छालों को देखकर व्यथित होकर बोली– 'अब मत चलो। आज रात भर इस स्थान पर आराम करें।' हाँ। शाम होने को आ रही है। अब आगे चलना कठिन है।' रशीदा ने श्याम के पाँव को दबाते हुये कहा।

'लेकिन इस बीहड़ बियाबान में सुबह तक हम लोग जीवित रह सकेंगे। इसमें संदेह है।' शील ने भयभीत होकर कहा। 'ऐसा न कहो। जिस शक्ति ने अब तक रक्षा की है। वह आगे भी रक्षा करेगी। विश्वास और साहस के सम्मुख भय और भूत का अपने आप विनाश हो जाता है। भय से इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं। आत्मबल घट जाता है और मनुष्य अपनी इन्द्रियों द्वारा अपना विनाश कर लेता है। हम तो चार प्राणी हैं। ध्रुव ने जंगल में ही एकान्त वास कर अपनी तपस्या पूरी की थी। डरने का काम नहीं। अब रास्ता भी नहीं दिखाई पड़ेगा।' शील के पिता ने शील और रशीदा को समझाते हुये कहा।

'मेरा भी ऐसा ही ख्याल है, चाचा। अब रात होने को आ रही है। यहीं आराम किया जाय।'

'नहीं, सामने वह जो टीला दिखाई पड़ रहा है वह स्थान इसके लिये अधिक अच्छा होगा।'

'तो चलो न। वहाँ तक तो मैं किसी तरह चल सकता हूँ।' कहकर शील के पिता उठ खड़े हुये।

उनके साथ ही सारा समुदाय उठ पड़ा। जल्दी जल्दी सब लोगों ने पाँव बढ़ाया। दूसरी ओर सूरज अपनी किरणों को समेट कर क्षितिज के छोर में जा छिपा। रजनी का प्रथमा-चरण आरम्भ हुआ। उस टीले के निकट तक पहुँ-चते पहुँचते आसमान की सफेदी लगभग समाप्त हो चली। आकाश में अब गाढ़े रङ्ग का काला अन्धकार शनैः शनैः करके अपना अधिकार करता दीख रहा था। टीला उस जमीन से ऊँचा था। अतः उसके नीचे पहुँच कर शील ने रशीदा से उत्सुकता पूर्वक पूछा—'रशीदा! बहन। यह टीला तो जमीन से काफी ऊँचाई पर है।'

'हाँ। आवो मेरे साथ। मैं आगे आगे चलती हूँ। तुम लोग पीछे-पीछे आओ। आज की रात इस टीले पर कटेगी। कल तड़के ही हम इस स्थान से किसी गाँव में चल पड़ेंगे। वहाँ किसी से जमीन लेकर खेती बारी का काम शुरू करेंगे।'

'अरे यहाँ भी वैसे ही लोग हैं। अब तक जो बच रहा है उस पर भी डाका पड़ जायगा।'

'सचमुच शीलो, तू बहुत डरपोक है। अरे, कौन माई का लाल पैदा हुआ है जो तेरी बहन रशीदा के रहते हाथ बढ़ा सके।'

'रहने भी दो, क्यों इतना बढ़ बढ़ कर बोल रही है। यहाँ तेरे हाथ में बन्दूक नहीं है, जो कि जानवरों को डराकर अपनी रक्षा कर लेगी।'

'बन्दूक के बजाय यदि बाजूओं की ताकत की जरूरत पड़ेगी तो रशीदा पीछे नहीं हटेगी!'

'खैर छोड़ो इन बातों को अब आवो टीले पर चढ़ चलें। तुम पिता जी का हाथ पकड़ लो और मैं माता जी का। ऊपर चल कर रात काटी जाय।'

रशीदा ने अपने वाक्य को पूरा किया और श्याम देव का हाथ पकड़ कर ज्यों टीले पर जाने वाले मार्ग की ओर बढ़ी तो टन-टन का दो शब्द आकर उसका ध्यान भङ्ग कर गया। आवाज सुनते ही उसने कहा 'शील! यह घन्टा कहाँ बज रहा है?'

'मेरा ख्याल है, ऊपर टीले पर कोई मन्दिर होगा। पुजारी मन्दिर में भगवान की आरती कर रहा होगा। लेकिन इस घन्टे की आवाज सुन कर तू डर क्यों गई?'

'डरती नहीं हूँ। सोचती हूँ यहाँ भी कातिल न मिल जाँय। क्योंकि अब तक जिन कठिनाइयों से हम निकलकर आए है, उससे कहीं अधिक कष्टदायक यहाँ का मार्ग है, शीलो।' रशीदा ने टीले के ऊपरी मञ्जिल पर पहुँचते हुए कहा।

'सो तो ठीक है। लेकिन हर आदमी का स्वभाव और चरित्र भी तो एक सा नहीं होता।' टीले पर समतल भूमि थी। उस स्थान पर पहुँच कर शील ने अपनी माँ को सहारा दिया। फिर सामने की ओर जब उसकी दृष्टि गई तो देखा—उस स्थान से लगभग एक फर्लाङ्ग की दूरी पर

उस गाढ़े अन्धकार में एक दीपक टिम टिमा रहा था। दीपक का प्रकाश देखते ही शीलकी आशा बलवती हुई। गर्मी की लू चलने के वक्त यात्री जैसे शिथिल और प्यास पीड़ितहोकर पानी का श्रोत देखता चलता है, और सहसा एक गन्दले पानी के तालाब को देखकर, जितनी उसको प्रसन्नता होती है उससे कहीं अधिक शीली का हृदय खुश होकर उछल पड़ा। उसने रशीदा का ध्यान उस ओर आकर्षित कराते हुए साहस और आह्लाद पूर्ण स्वर में बोली—'वह देख, रशीदा! सामने कोई मन्दिर है। दीप दान पर रखे दीपक की लौ यहाँ से साफ दिखाई पड़ रहा है।'

रशीदा की आँखें शील के माता पिता के साथ उस ओर घूम गईं। सामने फैले अन्धकार को चीर कर पीला प्रकाश तीनों मूर्ति की आँखों में समा गया। रशीदा के पाँव में एक नई शक्ति आई। उसने सब को अपने साथ लिया और उस लक्ष्य की ओर चली। लगभग आधे घन्टे के उप-रान्त जब सब लोग उस स्थान पर पहुँचे, तो मन्दिर का पुजारी भगवान की आरती कर चुका था। मन्दिर के बरा-मदे में पहुँच कर सब ने एक बार दृष्टि गड़ा कर ध्यान पूर्वक उसमें लगी मूर्तियों को देखा। धूप और केसर की आहुति से सारा मन्दिर सुवासित होकर एक अपूर्व वाता-वरण की उत्पति कर विहँस रहा था। बरामदे में लगे प्रत्येक खम्भों के सहारे बेल लताओं का समूह फैला ऊपर पहुँच गया था। पुजारी मन्दिर में नहीं था। सम्भवतः कहीं बाहर गया था। अतएव विवश होकर सब लोग बरामदे में बैठ गए। थोड़ी देर तक आराम करना चाहते थे कि सामने से गेरुए वस्त्र में दो व्यक्तियों ने मन्दिर के प्रमुख

द्वार पर पैर रखते हुए पूछा –'आप लोग। कहाँ से आ रहे है ?'

'जी ! हम लोग शरणार्थी हैं। हमारे देश में अब हमारी आवश्यकता नहीं है। क्या आप रात भर तक ठहरने के लिए स्थान दे सकते हैं ?' रशीदा ने उठकर उन व्यक्तियों के समीप पहुँच कर पूछा।

'स्थान की बात नहीं बेटा। यह तो भगवान का द्वार है, हम लोगों का अपना क्या है ? यह हैं हमारे साथी फकीर जिनके शरण में सैकड़ों लोग शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।'

'फकीर !' रशीदा ने अपने मन में सोचा, फिर हाथ जोड़कर बोली—'आप लोग पिता के बराबर है। हम लोग रात भर के लिए आश्रय...।

'स्थान किसी का नहीं होता बेटी। तुम लोग मेरे साथ भीतर चलो।' उस सन्यासी ने रशीदा की ओर देख कर कहा।

आज्ञा पाते ही रशीदा शील के परिवार के साथ मन्दिर के भीतर चल पड़ी। भीतर पहुँच कर रशीदा ने जो मन्दिर का कमरा देखा उसकी आँखें चका चौंध हो गईं। मन्दिर के उस कमरे में फर्श पर मोटी मोटी मखमली कालीनें बिछी हुई थीं। भगवान की मूर्ति का शृंगार भी फूलों से उस तरह किया था, मानों फूलों के ही भगवान हों। कमरे के फर्श पर सब लोग बैठ गए, तो वृद्ध सन्यासी ने फकीर की ओर देख कर कहा—'भाई ! फरीद ! इन लोगों के खाने पीने का प्रबन्ध करो।'

वृद्ध सन्यासी की आज्ञा पाते ही फकीर कमरे से निकल कर जाने किस ओर चला गया। फिर वृद्ध ने भगवान के

सम्मुख रखे कुछ फलों को उठा कर रशीदा और शील की ओर बढ़ाया। प्रेम से विष अमृत हो जाता है लेकिन वह विष नहीं था, ताजा फल था जो साँझ की बेला में फुलवारी से तोड़ कर भगवान विष्णु के चरणों में चढ़ाया गया था। रशीदा और शील ने प्रेम भावसे फलों को ग्रहण किया। कुछ फल उसने शील के पिता माता को भी दिया। दिन भर की भूखी आत्मा को जैसे कोई अमूल्य निधि मिल गई हो। सब ने मूर्ति को नमस्कार किया और कमरे से बाहर निकल कर फलों से क्षुधा की आग तृप्ति की। वृद्ध और वृद्धा को आराम करने के लिए सन्यासी ने एक कमरा बताया। रशीदा और शील के साथ वृद्ध और वृद्धा उस कमरे में आकर ठहरे। सन्यासी भी उनके निकट पहुँच गया। एक चर्म के आवरण पर बैठता हुआ बोला—'आप लोग कहाँ से आ रहे हैं?'

'बंगाल से।'

'ओ। अभी हत्यारों ने अपना कार्य नहीं रोका। जंगल से बाहर रेलवे लाइन पर गाड़ी को रोक कर उन्होंने जो कार्य किया है उसे देख कर शरीर रोमांचित हो उठता है।'

'उसी ट्रेन में हम लोग सवार थे बाबा। किसी तरह जान बचा कर आपकी सेवा में आ गए हैं।' रशीदा बोली।

'अच्छा किया बेटी। लेकिन यहाँ तो तुम लोग अधिक दिन नहीं रह सकती?'

'हम लोग खुद सुबह चले जाएँगे।' शील ने कहा।

'हाँ। यहाँ जानवरों के मारे एक भी प्राणी का रहना कठिन है। फरीद भाई के साथ केवल मैं यहाँ रहता हूँ। इस सारे जंगल में दूसरा कोई नहीं है।'

'तो बाबा आप लोग खाते क्या है ?'

'खाना तो कहीं भी आदमी परिश्रम करके प्राप्त कर सकता है। इतनी बड़ी धरती है। इसी जंगल में कुछ भूमि पर हम दोनों मिल कर खेती करते हैं। उपज से जो कुछ प्राप्त होता है, उसे दोनों एक स्थान पर रखते है। उपयोग दोनों साथी बराबर करते हैं। मन्दिर से थोड़ी दूर पर एक मस्जिद है, जिसकी देख रेख फरीद भाई ही करते हैं। वहाँ सभी जाते है। क्या हिन्दू और मुसलमान। और मेरे यहाँ भी सब का आगमन होता रहता है। हम दोनों अपने अपने मजहब के होते हुए भी एक हैं।'

'काश, ऐसा ही सारा विश्व बन सकता, तो कितना अच्छा होता ?' शील ने कहा।

'नहीं। अभी तो नहीं।' किन्तु समय अपने चक्र में मनुष्य के गर्व और अहं की जो भावना है उसे पीस पीस कर ऐसा कर देगा कि विवश होकर सबको एक दूसरे के साथ चलना पड़ेगा।'

तभी फकीर ने आकर वार्ता भंग कर दी। उसने अपने हाथ में लिए पात्र को स। के सम्मुख रखते हुए कहा —'यह रहीं पूरियाँ।'

'पूरियाँ!' आश्चर्य और चौंक कर रशोदा ने पूछा।

'क्यों चौंकती क्यों हो ?'

'पूरियाँ। आपके यहाँ कौन बनाता है ?'

'अरी पगली। हम लोग गृहस्थ आश्रम त्याग चुके हैं। फरीद भाई और मैंने घर छोड़ दिया है। तेरे जैसे मेरे भी बच्चे और बेटियाँ है।'

'कहाँ, बाबा।' शील के पिता ने लेटे लेटे पूछा।

'इस टीले से नीचे। मेरा और फरीद का परिवार रहता है।'

'आप लोगों में बहुत प्रेम है?' रशीदा ने पूछा।

'नहीं, प्रेम शब्द तो ढाई अक्षर है। हमलोग केवल दो हैं। प्रेम से बढ़कर साथी शब्द अच्छा है।' फिर पात्र में रखे भोजन की ओर देखकर कहा—'अब आप लोग भोजन कर लें। रात अधिक बीत चुकी है। एक दो रोज रहने के उपरान्त आप लोग जाइयेगा।'

'जाने को तो जी नहीं चाहता, बाबा।' रशीदा बोली!

'हाँ! कोलाहलमय वातावरण में रहते रहते आदमी घबरा जाता है। यहाँ किसी का दबाव और प्रतिबन्ध नहीं है। न यहाँ कोई आता है, न किसी को मालूम है। अब शेष बातें कल फिर होंगी।' तत्पश्चात फरीद की ओर घूमकर कहा—'भाई फरीद चलो। इन लोगों को आराम करने दो।'

कहकर वृद्ध सन्यासी उस कमरे के बाहर निकल गया। सामने के जलते दीपक की ओर देखकर कहा—'इसमें तेल डाल दो।'

फरीद ने हाँमी भरली और एक ओर चला गया।

सन्यासी और फरीद के जाने के बाद रशीदा को लगा जैसे ये दोनों ठग तो नहीं हैं। फिर भी खाना तो सबने खा ही लिया। रात को जब श्याम गढ़ी में सो गए इनकी पत्नी भी सो गई। केवल रशीदा और शील जाग रही थी। दोनों हृदय किसी अज्ञात आशङ्का से भरता जा रहा था। रशीदा सोचती—कहीं दोनों साधू स्वादू तो नहीं हैं। और शील सोचती, जाने ये सुबह तक क्या करेंगे! दोनों अपने

अपने मन में कुछ सोचती, समझती सोने का उपक्रम कर रही थीं कि किसी की फुसफुसाने की आवाज सुन पड़ी। शील का ध्यान भङ्ग हो गया। उसने अपना बिस्तर छोड़ दिया। उठकर दबे पाँव रशीदा के निकट आकर धीमें स्वर में बोली—'अरी ! तू सो गई क्या ?'

'नहीं !'

'धीमें स्वर में बोल। दरवाजे पर कोई है !'

'दरवाजे पर कोई है ?' रशीदा अपनी चारपाई से उठती हुई बोली।

'हाँ। किसी की फुसफुसाहट की आवाज आ रही है। मुझे ऐसा लगता है कि ये साधू नहीं हैं ठग है रशीदा। किसी तरह यहाँ से निकलने की कोशिश करो।'

'घबरा मत ! मुसीबत आने के पहले ही मैं सावधान हो जाऊँगी। रह मुझे सुनने दे।'

'अरे दरवाजा खोलते ही जान पर आ बनेगी।'

रशीदा अधिक न सुन सकी। बड़ी तत्परता के साथ उसने कमरे में बड़ी खिड़की की ओर अपना कान बढ़ाया। किन्तु अब किसी की आवाज सुनाई नहीं पड़ रही थी। अतः उसने दरवाजा खोल दिया। चुपके से बरामदे में आई। किन्तु किसी का पता न चला। अन्त में मन्दिर के भाग में पहुँची तो देखा मन्दिर का दरवाजा बन्द था। न फकीर था, न सन्यासी। भीतर दीपदान पर दीपक अपना हल्का हल्का प्रकाश लेकर टिमटिमा रहा था। रशीदा की आत्मा काँप उठी। उसे लगा, जैसे हृदय की सारी धमनियाँ बन्द हो जायंगी और वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ेगी। किन्तु धीरज खोने से मुसीबतें तो नहीं टल सकतीं। फिर

रशीदा जाने क्या सोचकर वापस लौटने लगी तो किसी ने पीछे से पुकारा—'क्यों ! किसे देख रही थी ?' उस वृद्ध ने रशीदा के पीछे आकर पूछा।

'कुछ नहीं ! अभी किसी आदमी की आवाज सुनाई पड़ी।'

'हाँ। मैं आया था। मेरा एक शिष्य है। वह सूचना देने आया था। नीचे जङ्गलों में बहुत से कातिल घुस आए हैं। उसने बताया है कि हम लोगों का निवास उन्हें ज्ञात हो गया है। इसलिए सावधानी के साथ सोना चाहिए। तुम लोग बेफिक्र रहो बेटी !' कहकर वह चला गया।

पश्चात रशीदा कमरे में चली आई। शील के साथ सो रही !

७

रशीदा को घर छोड़े एक सप्ताह हो गए। हबीब जेल से छूट कर आया। उसके साथ रसूल भी था। जेल से छूटने के बाद हबीब अपने मकान के समीप पहुँच कर देखा—हरे भरे खेतों में मानों पेड़ पत्ते टूट-टूट कर र हो रहे थे। गाँव में सन्नाटा था। जहाँ तक हबीब की नजर घूमी, उसने देखा उसके पास पड़ोस में रहने वाली झोपड़ियों के खप्पर उलट-पुलट गए थे। कहीं-कहीं मोटी हड्डियाँ और जानवरों का एक आध जोड़ा इधर उधर घूम रहा था। गाँव में अब वैसी चहल पहल नहीं थी। रोज की नाईं आज सब लोग अपने अपने घर से निकल कर खेतों में काम करने नहीं जाते, बल्कि सूना सा, शान्त और नदी के किनारे सा सन्न गाँव पड़ा था। हबीब ने एक बार

सारे गाँव का चक्कर लगाया। उसके साथ रसूल ने भी अपना सहयोग दिया। चारों ओर से लौटकर जब वह रशीदा के मकान पर पहुँचा तो देखा उसके घर के सारे छप्परों को किसी ने उखाड़ कर बाहर फेंक दिया था। घर का दरवाजा भी निकाल लिया गया था। हबीब की आँखें अपनी भावी जीवन संगीनी के घर की दशा देखकर भरने लगीं, तो उसने रसूल की ओर देखते हुए कहा—'अरे! क्या करते हो चलो अब घर चलें। जो होना था, सो तो हो ही गया।'

'हाँ। रसूल भाई! जो होना था, सो गया। लेकिन सच बोलने वालों की बातें तीखो होकर भी कितनी मीठी होती हैं।'

'बहस छोड़ो। घर चलो। तुम्हारे अब्बा की क्या दशा है इसे तो देखो!'

हबीब को जैसे कोई भूली हुई बात याद आ गई। उसने अपने को रोकते हुए कहा—'हाँ। घर चल रहा हूँ।'

अधिक देर तक टहलने की इच्छा उसको न हो सकी। रसूल उस गाँव से एक मोल की दूरी पर रहता था। इस-लिए वह अपने गाँव की ओर चला गया। हबीब अपने घर की ओर चला। थोड़ी दूर जाने के बाद उसका बचपन का साथी कादिर अपनी गाय लेकर घर. ले जाते हुए दीख पड़ा। उसे देखकर उसने दूर से कहा—'अरे! कौन हबीब भाई। क्यों कब आए छूट कर!'

हबीब को लगा जैसे उसका साथी. आज उसका मज़ाक तो नहीं उड़ा रहा है। अगर ऐसी बात है, तो जेल में रहना ही उसका अच्छा होता। सोच रहा था, हबीब कि

उसने निकट पहुँच कर ध्यान भङ्ग कर दिया और कुशल समाचार पूछने के बाद बोला—'कहो हबीब ! मेरी बात तुम नहीं मान सके। इसका परिणाम यह निकला।'

'रहने भी दो। क्यों अपनी हाँकते हो। घी में आग डाल कर भाग निकले। अपने गुमराह हुए और दूसरों को भी गुमराह किया तुमने !'

'नहीं। वह मजहब का फर्ज था और अपने मजहब की हिफाजत के लिए सब कुछ करना ही पड़ता है। इधर मैंने शादी भी करली है। एक काफिर की सुन्दर लड़की नई सी मिल गई। अब्बा ने उसे मेरे साथ निकाह के लिए रख लिया है। तुम्हारे अब्बा को भी एक युवती मिली है। तुम्हारे अब्बा का ख्याल है कि जेल से छूटते ही उसका निकाह तुम्हारे साथ निकाह कर दिया जाय।' कहकर वह हँस पड़ा।

लेकिन हबीब का हृदय पड़ाके की तरह जल उठा। उसके दिल में आया कि कादिर के मुँह पर एक ऐसा चपत जड़ दे जिसके संघर्ष से वह हमेशा के लिए जमीन चूम ले। परन्तु न जाने क्या सोच कर वह सम्भल गया। फिर आगे बढ़ते हुए कहा—'लेकिन यह ठीक नहीं है। जिसे तुम कल बहिनों के रूप में देखते थे, उस नारी पर कामुक दृष्टि गड़ाते तुम्हें शर्म नहीं आती, कादिर !'

'शर्म ! सो काहे की। मैंने कोई पाप किया है। भारत में भी वे वैसा ही करते होंगे।'

'करते होंगे। ऐसा तुम्हारा केवल अनुमान है। कान की सुनी हुई बातों पर विश्वास करना ठीक नहीं। सामने देखी हुई घटना पर अधिक विश्वास करना

चाहिये। जेल के पहिले मैंने जो सोचा था, वह हमारे तुम्हारे लिए ही नहीं, बल्कि आज समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्तियों के लिए हानिकारक है।'

'छोड़ो भी इन बातों को। चलो आज गाँव में सब लोग मिलकर गाने बजाने का इन्तजाम करें।'

'लेकिन रमई काका तो नहीं मिलेंगे। क्या कोई बजायेगा उनके जैसी ढोलक।'

'भई एक मर जाता है, तो दूसरा जमीन पर तैयार हो जाता है। रमई का शागिर्द तो रहमत है। उसके जगह पर वह अच्छा रहेगा।' कादिर ने अपनी गाय की रस्सी को खींचते हुए कहा।

दोनों घर-गाँव और विगत सप्ताह के उपद्रव के विषय में बात चीत करते अपने घर आ निकले। घर आकर हबीब ने देखा—उसके पिता द्वार के चौपाल पर बैठे हुक्का पी रहे हैं। सुबह-सुबह जो दाढ़ी में खिजाब और आँख में बुढ़िया का सुरमा लगा कर वे हबीब की उम्र से अपनी उम्र को कम साबित करना चाहते थे। पैंसठ वर्ष [illegible] इस बनाव सिंगार को देखकर हबीब को लगा जैसे ये बूढ़े भी कितने स्वार्थी होते हैं। अपने अब्बा के समीप पहुँच कर उसने सलाम किया। फिर उसे देखते ही उसके अब्बा हुक्का छोड़कर उठ पड़े। बेटे को गले से लगाया। फिर हबीब को अपने निकट बैठाकर बोले—'बेटा! आज मैं इन्तजार कर रहा था। तेरे लिए एक सुन्दर सी लड़की खोज ली है। अब उसके साथ निकाह करके तू घर का काम काज सम्भाल। मुझे अब कुरान पढ़ने दे।'

हबीब ने कुछ उत्तर नहीं दिया। घर के भीतर आकर खाना खाया और चुपचाप दालान में आकर लेट रहा।

दाढ़ी अभी तक बढ़ी हुई थी। हफ्ते से नहाया नहीं था। इसलिए उसकी वेष भूषा से लगता जैसे जेल के कैदियों को नाई नहीं दिया गया। केवल इसलिए कि वे अपराधी हैं। हबीब दालान में पड़ा आराम कर रहा था। उसके अब्बा गाँव के सारी बिरादरी को सूचना देने चले गए। गाँव के हर बिरादरी में घूम घूम कर उन्होंने कहना आरम्भ किया। उनका हबीब छूटकर आ गया है और अगले सप्ताह में उसका निकाह होगा। अपने तमाम दोस्तों से मिलता-जुलता वह मुल्ला साहब के घर आया मुल्ला साहब उस समय कुरान को उलट पुलट कर अपने कुछ शागिर्दों को सीख दे रहे थे। हबीब के पिता नासिर को अपनी ओर आते देख उन्होंने प्रश्न किया—'कहो भाई नासिर। सुना है हबीब छूटकह आ गया है?'

'हाँ! आप लोगों की मेहरबानी है। मेहरबानी से वह छूट गया है। अब मुल्ला साहब ख्याल ऐसा है कि उसका निकाह कर दिया जाय। एक काफिर की लड़की मेरे पास भी है उसे अपने धर्म में... ...।'

'हाँ। इसके बारे में मैं खुद कहने वाला आज काफिर का बाप भी आया था। उसने कोई अच्छा सा दिन बताने के लिए कहा है।'

'तो आपने क्या बताया?'

'अभी कुछ नहीं। कहा है कि सोचकर बताऊँगा।' मजहब के लिए तुम लोगों ने जो मदद दी है उसके लिए इसलाम हमेशा एहसानमन्द रहेगा।'

'सब आपकी दुआ थी। खुदा की मरजी से सात आठ मील को दूरी तक अब कोई ऐसा नहीं है, जो इसलाम के खिलाफ आवाज उठा सके।'

'ऐसी ही उम्मीद थी, आप लोगों से।' मुल्ला साहब ने हँसते हुए कहा।

नादिर अधिक देर तक वहाँ न ठहर सका। मुल्ला साहब से बातें खतम कर खेत की ओर चला गया।

दूसरी ओर घर में हबीब पड़ा पड़ा सोच रहा था घर में एक लड़की थी जिसे हबीब जानता था, लेकिन अभी तक उसने युवती को देखा भी नहीं। देखता भी कैसे! उसकी आँख तो अब खुली थी। आँखों पर जो एक पर्दा सा पड़ गया था वह हट गया। अपने और काफिर को उसने समझ लिया था। साथ ही रशीदा के घर को विध्वंस रूप में देखकर उसका मन और दुखी हो उठा। उसने अपने आप जाने क्या-क्या सोचा। फिर दालान में तबियत न लगी, तो उठकर बाहर आ गया। दोपहरी ढलती जा रही थी। हबीब का मन कुछ अजीब सा हो रहा था। घर में अकेले लेटे-लेटे जी ऊब गया। लेकिन बाहर भी सन्नाटा था। कुछ अजीब सूना सूना सा उसने महसूस किया। फिर मन में आया कि उठकर कहीं घूमने चले। तभी दरवाजे से सिटकनी की आवाज आकर उसके कानों में पड़ी। जब आँख घूमी, तो देखा। उसके दरवाजे पर दोनों किवाड़ की आड़ से झाँकती हुई दो आँखें। बेबसी और मायूसी, उदासी लिए उसकी ओर झाँक रही हैं। जेल से छूटने के बाद हबीब हर एक आदमी का हमदर्द हो गया था। चौपाल से उठकर वह दरवाजे पर आया। कुछ देर तक खड़ा रहा। फिर हिम्मत करके बोला—'आपने मुझे बुलाया है?'

'हाँ। जरा भीतर आइए न।' कहकर युवती भीतर चली गई।

दरवाजे को खोल कर हबीब भी उसके साथ ही दालान में आ गया। भीतर आकर उसने देखा—रशीदा सी वह दुबली पतली सी यह लड़की, जो रोते रोते दुबली हो गई थी। उसकी सूरत को देखकर हबीब ने दालान में पड़ी चटाई पर उसे बैठने के लिए कहा। हबीब की आज्ञा पाते ही वह बैठ गई। बैठते ही उसकी आँखें सावन भादों सी बरसने लगीं, तो हबीब ने समझाते हुए कहा—'अरे। तुम रो रही हो। मैं तुम्हारे साथ कुछ नहीं करूँगा। अगर तुम्हारा परिवार जीवित होगा तो मैं उनके पास पहुँचा दूँगा।'

'नहीं! परिवार का कुछ पता नहीं। उनकी क्या दशा है। मुझे आपके साथ निकाह करने के लिए रख छोड़ा गया है।' कहते-कहते युवती की घिग्घी बँध गई।

हबीब का पीसा हुआ हृदय भी रो उठा। उसने धैर्य देते हुए कहा- 'तुम तो बेकार रो रही हो। मैं तुमसे निकाह नहीं करूँगा।'

'ऐसा न कहो। अब संसार में मेरा कौन है। मजहब के नाते या एक आदमी के नाते आखिरकार किसी से विवाह तो करना ही है।'

'नहीं! शादी तो मेरी हो चुकी है। रशीदा को तुम जानती होगी?

'हाँ। मेरे वह पड़ोस में ही रहती थी। लेकिन उसे भी लोगों ने मार डाला।'

'मार डाला?' चौंक कर हबीब ने पूछा।

'हाँ। कैम्प में उसके अब्बा की हत्या हुई। कैम्प में हम लोग भी थे। हमारा परिवार बुरी तरह घायल हुआ। केवल मुझे इसलिए छोड़ दिया गया कि मैं युवती थी।

मुझमें यौवन था, आकर्षण और खूबसूरती थी। इसलिए मेरी हत्या नहीं की गई।'

'मैं सब कुछ समझता हूँ। क्या करोगी ? अंगरेजों की नीति ने हमारे बीच में जो मोटी दीवार खींच दी उसको मिटाने के लिए अब एक समय की आवश्यकता होगी। आदमी अपने मतलब के लिए बुरा से बुरा काम भी कर डालता है। तुम हिम्मत रखो। मैं तुम्हारे परिवार का पता लगाऊँगा। रही निकाह की बात सो मैं अब्बा से कह दूँगा कि अभी नहीं। कुछ दिन के बाद शादी करूँगा।'

'लेकिन वे नहीं मान सकते। अलावा इसके अब तो मैंने तुम्हारे घर का खाना-पीना सब कुछ स्वीकार कर लिया है। फिर मेरा परिवार भी तो अपने यहाँ स्थान नहीं दे सकता।'

'यह तुम्हारी समझ है। कि किसी व्यक्ति के घर खाने-पीने से शरीर और मन में कोई बुरी भावना आ जाती है। पेट के लिए भोजन आवश्यक है ही। भोजन जिस जमीन से मिलता है उस पर सभी रहते हैं। पानी और अन्न में अन्तर नहीं। उसे पकाने का साधन एक है। केवल बरतनों की हेर फेर से जाति और धर्म नहीं मिट जाते।'

'लेकिन अब आप उन्हें कहाँ खोजेंगे। मेरा विचार है कि आप हमें यहीं रहने दें।'

'नहीं। तुम नहीं समझती। जीवन में मुहब्बत और विवाह में बहुत फर्क है। मुहब्बत में दो दिलों का अपनापन होता है और शादी में केवल एक पति-पत्नी का धर्म और फर्ज जो समाज के भय और अपने शारीरिक विकास

को बुझाने का एक ऐसा रास्ता है, जहाँ हिचक के साथ अपना फर्ज अदा किया जाता है।'

'तो आप किसी से प्रेम करते हैं क्या?' उस युवती ने जिज्ञासु भाव से पूछा।

'प्रेम और मुहब्बत की नहीं जाती। वह हो जाया करती है। क्यों होती है इसका जवाब यह है कि दोनों के शरीर के जो तत्व होते हैं उनका समिश्रण जब एक सा हो जाता है, तब दोनों के तत्व एक दूसरे को अपनी ओर खींच कर एक हो जाते हैं।'

'बड़ी अच्छी होगी वह लड़की, जिसने आप का हृदय पाया होगा।'

'नहीं अच्छी तो नहीं थी, लेकिन वह मुझे अच्छी लगती थी।'

'तो अब क्या हुआ। वह कहाँ हैं?'

'वही रशीदा थी। अब उसका पता नहीं। उसे तुम नहीं जानतीं।'

'खूब जानती हूँ। उसकी हर एक आदतों से मैं परिचित हूँ। कितनी अच्छी है वह।'

'कैसे जानती हो तुम?'

'उसकी माँ मेरी माँ के यहाँ अकसर आया करती थी।'

'सो तो तुम्हारे मुँह से सुन रहा हूँ। सचमुच रशीदा का जीवन मेरे लायक नहीं था। मैंने उस हीरे को पाकर भी अपनी नासमझी से खो दिया है।'

'खोया हुआ धन प्रयत्न करने पर मिल सकता है। मेरी आत्मा कहती है कि वह मरी नहीं है। दूसरों की भलाई करने वाले पर विपत्ति अवश्य आती है। किन्तु विपत्ति की कसौटी पर वह सोना सा कस कर खरा भी उतर आता

५

है। यदि आप उसे सच्चे दिल से प्यार करते होंगे, तो वह आप को अवश्य मिलेगी।'

'ऐसा तुम्हरा ख्याल है। लेकिन विद्रोह और उपद्रव में पड़कर पिस जाना वाला गेहूँ आटा जो बन गया। उसे पुनः गेहूँ के रूप में रूप पाना कठिन है।'

'लेकिन गेहूँ और मनुष्य में अन्तर है। मनुष्य अपनी तमाम शक्तियों को लगा कर अन्तिम समय तक जीवन की रक्षा चाहता है। रशीदा तो एक सैनिक की तरह सारी कठिनाइयों से लड़ती रही है। जो आदमी दूसरे की रक्षा कर सकता है उसकी रक्षा उसकी बुद्धि और शक्ति करती है। मेरा ख्याल है। वह जीवित है।'

'ख्याल और सामने की चीजों में अन्तर होता है खैर, इस समय तुम अपना काम करो। मुझे भी अपने दोस्तों से मिलने जाना है।'

कहकर हबीब उठने लगा। तभी दरवाजे पर उसके बाप के खाँसने की आवाज सुन पड़ी। हबीब ने अपने को कुछ छिपाना चाहा। किन्तु उसके बोलने के पहले ही पिता ने बेटी को देखकर हँसते हुए पूछा—'क्यों। बेटा! तबियत तो ठीक है न!' कैसी रही यह लड़की ?'

'अच्छी है अब्बा। लेकिन वह तो कहती है कि मैं रशीदा की सहेली हूँ।'

'यह तो और अच्छा है।'

'हाँ, लेकिन सवाल यह है कि जब एक बार मेरी सगाई हो चुकी है, तो इसके साथ शादी कैसे करूँगा।'

'तुम भी अजीब सी बातें करते हो, बेटा। अरे, रशीदा से कौन शादी करेगा। जिसने अपने मजहब और भाइयों का ख्याल नहीं किया वह तुम्हारा क्या हो सकती है ?'

'वह कसूरवार नहीं हो सकती। उसने एक इनसानियत का फर्ज समझकर श्याम और अपनी सहेली की रक्षा की है।'

'जो कुछ किया हो उसकी बात उठाना अब बेकार है। आज जब उसका कहीं नाम-निशान नहीं तो तू अपनी जिन्दगी क्यों बरबाद करने पर तुला हुआ है।'

'नहीं! उसपर दोष लगाना मेरी नजरों में ठीक नहीं है। चाहे वह जीवित हो या नहीं।'

'फिर किस रोज निकाह की तैयारी करूँ?' हबीब के अब्बा ने पूछा।

'अभी ऐसी क्या जल्दी पड़ी है। जानते हो अब्बा! घर में घरनी रखने के पहले हमें अपने पैरों पर खुद खड़ा हो जाना चाहिए। हिन्दुस्तान में यह बात शुरू से चली आ रही है। इसलिए मैं सोचता हूँ, कुछ दिन शहर में जाकर काम करूँ फिर कुछ रुपए कमाने के बाद उससे निकाह कर लूँगा।'

'बात तो ठीक है, लेकिन निकाह करने के बाद भी तू शहर में जाकर नौकरी कर सकता है।'

'नहीं। तब तक तुम इसे अपने पास रखो यह अमानत के रूप में तुम्हारे पास रहेगी। मैं जल्दी ही चला आऊँगा। सोचता हूँ, साथ में कादिर को ले लूँ।'

'कादिर का निकाह तेरे साथ होने वाला है। अभी अभी मैं मुल्ला साहब के यहाँ से आ रहा हूँ। वह नहीं जा सकता।'

'खैर। मैं अभी उससे मिलने जा रहा हूँ! बात भी ठीक सी जँचती जान पड़ती है। गाँव में तो कोई ऐसा काम नहीं। खेती बारी के साथ घर भी न रहे। इसलिए कादिर

को साथ ले जाऊँगा।' कह कर हबीब कादिर के घर को चला दिया।

उसके पिता ने अधिक हठ नहीं किया। वे जानते थे हबीब उनका एकलौता बेटा है। वह कोई ऐसा काम नहीं करेगा, जो खान्दान के लिए हानिकारक हो सकता है। इसलिए चौपाल पर आकर बैठ रहा।

साँझ हो चली थी। सन सन करते उस गाँव में रहने वाले प्राणियों ने काम छोड़ दिया था। अपने अपने घर और जानवरों की सेवा में सब मग्न थे। कुछ लोग गायों और बैलोंको मंहगाई लेकर झिक रहे थे, तो कुछ भूसे और पुआल को लेकर अपना माथा पच्ची कर रहे थे। हबीब उस युवती के विषय में सोच रहा था। साथ ही उसके दिमाग में यह बात बैठ गई थी कि यदि उस युवती का परिवार जीवित रहता तो हबीब उनके हाथों में उनकी पुत्री को देखकर कितना खुश होता।

काश! उसके परिवार के भाँति उसकी रशीदा भी जीवित होती···! सहसा उसका ध्यान अपने पिता की ओर घूमा। उसे लगा, जैसे उसने पिता की बातों को भुलवा देना चाहा है। लेकिन अगर यह बात खुल गई तो । किन्तु उसने शादी करने से इनकार तो किया नहीं फिर उसके दिमाग में यह बात कैसे आ गई। अपने आप से उलझता वह कादिर के घर पहुँचा। परन्तु कादिर घर पर नहीं था। किसी दोस्त के यहाँ बैठा था। उसके घर के सामने के चबूतरे पर दो चार लोग बैठे थे। हबीब को उनसे मतलब नहीं। इसलिए उसने वहाँ बैठना अच्छा न समझ चुप चाप कादिर के बापके पास आकर बोला—'चाचा! कादिर कहाँ गया है?'

'रहमान के यहाँ बैठा होगा। सुना है, वह शहर से रात को आया है।'

'सच,' हबीब ने चौंक कर पूछा। मानो शहर जाने के लिए उसे कोई साधन मिल गया हो।

कादिर का द्वार छोड़, धीमे धीमें उसने रहमत के मकान की ओर पाँव बढ़ाया। कादिर के घर से थोड़ी दूर पर ही रहमत का घर था। इसलिए हबीब को पहुँचते देर न हुई। रहमत के घर के सामने एक बैठक थी। उसमें लगभग गाँव के सभी लोग आकर अपना काम नहीं करते, बल्कि दिन भर की मेहनत से थकने के बाद यहाँ मन बहलाव के लिए आते थे। लगभग पचास वर्ष से यह बैठक हिन्दू-मुसलमान दोनों को सेवा करता आया था। लेकिन आज इस बैठक में भी वह शान शौकत और चहल-पहल नहीं थी, जो कुछ दिन पूर्व रहा करती थी। हबीब बैठक के बाहर आकर ठिठक गया। उसने बैठक की ओर देखा। फिर दबे पाँव दरवाजे की ओर बढ़कर बोला—'अरे: भाई रहमत!'

आवाज सुनते ही रहमत बाहर निकल आया। दरवाजे पर हबीब को खड़ा देख, खुशी के मारे फूल उठा। उसने हबीब का हाथ पकड़ लिया और हंसकर बोला—'अरे! भाई तुम तो जेल गए थे।'

'हाँ। गुनाह करने वाले आदमी के लिए जेल एक ऐसा स्थान है, जहाँ आदमी जाकर इज्जत और गर्व खो देता है, तो उसके बदले में अनुभव और अपने को समझने लगता है।' कहते हुए वह बैठक में बिछी चौकी पर बैठ गया।

उसी चौकी पर एक ओर कादिर बैठा था। उसे देखकर जाने वह क्यों चुप रहा। कुछ देर बाद जब तीनों

बैठ गए, तो हबीब ने ही रहमत को छेड़ते हुए कहा—'भाई। तुम तो एकदम बदल गए हो।'

'ऐसा न सोचो। मैं वही हूँ। अब शहर में काम भी हम लोगों का आसानी से चल रहा है। मैं तो इसलिए आया हूँ कि तुम लोग भी शहर चलकर कुछ व्यापार शुरू करो।'

'अरे भाई। अपने लोगों की इतनी हिम्मत कहाँ, जो वहाँ ठहर सकें।' कादिर ने व्यंग करते हुए कहा।

'नहीं। शहर में पहले तो बड़ी मुसीबत थी, लेकिन जब से काफिरों को निकाल दिया गया है हम चैन से रहते हैं।'

'लेकिन दूसरे की चीज लूटकर खाने से पेट का दाना कैसे पचता है रहमत ?' हबीब ने पूछा।

'अरे छोड़ो भी इन बातों को। इनमें क्या रखा है। तुम अपनी कहो। सुना है चाचा ने तुम्हारे लिए कोई लड़की चुन रखी है। उसके साथ तुम्हारा निकाह कराना चाहते हैं ?'

'हाँ।' और अपने बगल में बैठे हुए कादिर की ओर देखते हुए कहा—'और इस कादिर से क्यों नहीं पूछते।'

'इसने तो स्वयं इस केस को बनाया है। अपने लिए भी एक युवती चुन ली है। लेकिन वास्तव में बात यह है कि जब तक अपने पैरों पर खड़ा न हो जाय शादी उसके लिए एक कठिनाई बन जाती है। इसलिए मेरा ख्याल है कि कादिर के साथ मुझे भी शहर ले चलो। वहाँ अगर कुछ काम धाम कर । को तो अच्छा है।'

'मैं कब कहता हूँ नहीं। हाँ हबीब उस खूबसूरत छोकरी रशीदा का क्या हुआ ? वह है या नहीं।'

'नहीं ! वह इस दुनियाँ से चल बसी।' कहकर हबीब की आँखें भर आईं जिसे कादिर ने देखा और कुछ गम्भीर सा होकर बोला—'अरे। तुम तो उदास क्यों हो गए? भाई, औरत तो बहुत मिल सकती है। लेकिन मान लो अगर तुम न रहो, तो तुम्हारे अब्बा को लड़का कहाँ से मिल सकता है?'

'यह बात कोई अपील नहीं रखती है। और यदि लड़की वालों की लड़की न रहे, तो उस माँ को लड़की कहाँ से मिल सकती है। यह बेकार बातें हैं। यदि एक औरत से अधिक की लालसा आदमी करता है, तो वह औरत के दिल का साथी नहीं रहता, बल्कि उसके यौवन का भूखा होता है। भाई रहमान। आज का इनसान औरत को प्यार नहीं करता, बल्कि उसकी खूबसूरती और जवानी को प्यार करता है। जिन्दगी में आदमी दुनियाँ का सुख चाहता है, तो उसे केवल एक औरत पर विश्वास करना चाहिए।'

'यह तुम्हारा ख्याल गलत है किसी बहुत बड़े आदमी का कहना है कि औरत मर्दों की सबसे बड़ी कमजोरी है।'

'इसे मैं नहीं मान सकता। औरत इनसान के जिन्दगी की एक ऐसी ताकत है, जिसे मर्द अपने हाथों बिगाड़ भी सकता है और बना भी सकता है। औरत का दूसरा नाम कुदरत है। अपने-अपने समझ का फेर है।'

'खैर छोड़ो भी इन बातों को। मैं तुमसे बहस करना नहीं चाहता। यह बताओ निकाह कब हो रहा है।'

'यह तो तुम्हारे हाथ में है। अगर शहर में काम दिला दो, तो निकाह तो अपने हाथ की चीज है।' हबीब ने रहमत से अपनी विवशता दिखाते हुए कहा।

'इसके लिए मैं तैयार हूँ। अगर मान लो, वहाँ काम न मिले तो कोई रोजगार ही कर लेना।'

'जैसे भी कहोगे। हमें कोई इतराज नहीं है।

'सच !' रहमत ने पूछा।

'हाँ।'

'तो तुम और कादिर परसों मेरे साथ चल पड़ो। तब तक मेरी दूकान पर काम करना। फिर देखा जायेगा। क्यों रही बात पक्की ?'

'बिलकुल पक्की रही।' कादिर और हबीब ने एक साथ ही चिल्लाकर कहा।

रात के सात बज गए। रहमान बैठक से उठकर भीतर गया। भीतर से लैम्प लेकर आया। लैम्प बाहर बने दीपदान पर रखकर हबीब के निकट बैठते हुए उसने कहा—'क्यों ! भाई ! अपनी बीबी का नाम क्या रखना चाहते हो ?'

'पहले कादिर से क्यों नहीं पूछते ?' कादिर को लक्ष्य करके कहा।

'अच्छा भाई कादिर तुम बताओ ! तुमने क्या रखा है नाम ?'

'रज्जो बाई !'

'वाह भाई ! तुमने कमाल कर दिया। जब नाम तुमने ऐसा रक्खा है, फिर उनका बदन तो ठीक वैसा ही होगा।"

'हाँ। रहमान वाकई ऐसी लड़की बड़े भाग्य से मिलती है। यार जब आँगन में चलती है, तो मालूम होता है कि सारा आँगन किसी फूल की महक से महँक उठता है।'

'तुम किस्मत वाले हो।' फिर हबीब की ओर देखकर पूछा—'क्यों। तुम्हारी क्या दशा है ?'

'मेरी बीबी तो इसने काली चुनी है। फिर भी मैं उसे प्यार करता हूँ।'

'हाँ। तुम तो औरत की खूबसूरती से सम्बन्ध नहीं रखते। तुम बड़े ख्याल वाले हो। इसलिए तुम्हारा हिस्सा भी वैसा ही है।'

'जैसा समझो।' कहकर वह उठ खड़ा हुआ।

उसके साथ ही नादिर ने चौकी छोड़ दी। दोनों बैठक से बाहर निकल आए। उनके साथ ही रहमान कुछ दूर तक पहुँचाने भी आया। अपने मकान से थोड़ी दूर आकर वह घर की ओर लौटने लगा तो हबीब ने पुनः ध्यान दिलाते हुए कहा—'भाई! ख्याल रखना। परसों हम लोग अपना सामान लेकर तुम्हारे यहाँ आ जाएँगे।'

'जरूर...जरूर।' कहकर वह लौट गया।

रास्ते में हबीब ने कादिर की दिमागी ताकत को एक दूसरी ओर मोड़ना चाहा। अतः अर्ज करते हुए कहा—'कादिर! अभी निकाह मत करो। शहर से जब कमा कर लौटेंगे तब एक साथ ही शादी करेंगे। क्यों ठीक रही न बात।'

'बातें तुम्हारी सभी ठीक रहती हैं। लेकिन अधिक दिन तक उन्हें अपने घर में रखना ठीक नहीं! उधर से भारत सरकार ने हर शहरों में अपना कर्मचारी तैनात कर रखा है। शहर में बहुत से काफिरों की लड़कियों को लोग ढूँढ ढूँढ कर निकाल रहे हैं। यदि हम लोगों की करतूतें उन्हें मालूम हो गई, तो जल्दी ही सब लोग पकड़े जायंगे और देखते देखते हमें हथकड़ी डाल दी जायगी। इसलिए जितना जल्दी हो सके निकाह करा लेना ही अच्छा है।'

'देखा, तुमने। गलती और जुर्म करने वाले आदमी का दिमाग इसी तरह कमजोर हो जाता है। खैर, अब घर के करीब आ रहे हैं। मैं भी चल रहा हूँ, तुम कल मिलना। फिर इस विषय पर बातें होंगी।'

तत्पश्चात हबीब अपने घर की ओर चला गया। और कादिर अपने घर।

८

टीले पर रशीदा के साथ शील के परिवार ने एक एक करके हफ्ते गुजार दिए। कितनी रातें आईं और सुबह शाम के साथ विदा हो गईं। रशीदा इस कुटी के सन्यासी का रहन-सहन और बर्ताव देखकर कुछ ऐसी आकर्षित हुई कि उसे यह आश्रम छोड़ने में कुछ महसूस सा होता। सन्यासी ने उनके साथ कोई अनुचित बर्ताव नहीं किया। इसलिए न तो शील ही भविष्य के विषय में चिन्तित थी और न रशीदा ही। दिन भर शील मन्दिर के अन्य कामों को लवलीन होकर करती। शाम को सब लोग एक साथ हो भगवान की आरती करते। जब मस्जिद में नमाज पढ़ने का समय होता, तो फकीर के साथ सब लोग मस्जिद में जाते। परस्पर की भावना प्रेम की उस धारा में बह गई थी, जहाँ स्वार्थ और अपनत्व की प्रबल लहरें नहीं उठतीं। रशीदा अपने विगत जीवन का चित्र एक बार खींचना चाहकर भी, न जाने क्यों अपने हाथ में स्मृति की तूलिका नहीं उठाती। हाँ कभी कभी जब एकान्त पाती तो उसे हबीब की सूरत उसकी काली कजरारी आँखों में एक छाया बनकर नाच उठती। तब उसे लगता, जैसे जिस वस्तु को वह

बार-बार भूलना चाहती है—उसकी ओर इस तरह तेजी के साथ क्यों बढ़ती जा रही है ? इसी तरह रशीदा रोज उलझती रहती।

आज सुबह सुबह उठी तो जल्दी से मन्दिर का सारा काज करके शील के साथ टीले से नीचे उतर आई। टीले से थोड़ी दूर पर कमला नदी बहती थी। बरसात में यह नदी गर्व से फूली नहीं समाती। टीले से टकराती जब इसकी वेगवती धारा अनायास ही मन्दिर की ओर बढ़ती तो सन्यासी और फकीर में वाद विवाद हो जाता। रशीदा और शील ने कई बार सन्यासी के मुँह से इस नदी की तारीफ सुनी थी। अतः नदी के किनारे जाकर उसे देखने की अभिलाषा उनके हृदय में जागृति होना स्वाभाविक था। रोज तो प्रोग्राम बनाने में समय बीत जाता। लेकिन आज दोनों ने मन्दिर और मसजिद का सारा काम खतम किया और टीले से नीचे आ गईं। तब दिन के ग्यारह बज गए थे। धूप नहीं निकल सकी थी। आसमान कुछ सफेद बादलों से ढका था कुछ साफ था। इस तरह कभी धूप और कभी छाँव के नीचे रशीदा और शील उस नदी की ओर चल पड़ीं। टीले से उतरते उतरते बारह बज गए तो दोनों समतल भूमि पर पहुँचीं। टीले की सीमा छोड़ कमला नदी के किनारे आकर खड़ी हो गईं। नदी की कल-कल धारा आज टीले से टकरा कर नहीं बह रही थी, बल्कि टीले से लगभग एक फलांग बालुकामय जमीन छोड़ कर दूर चली गई थी। किनारे पर उगे जंगली पेड़ों के साथ बाँस के लम्बे लम्बे पेड़ भूत सा अपना हाथ फैलाए खड़े थे। एक क्षण तक रशीदा और शील चुपचाप खड़ी उस ओर देखती रहीं। उस पार लीची के पेड़ खड़े थे। अतएव

किनारे के दूसरी ओर की भूमि पर खड़े पेड़ों की ओर देख-कर शील ने पूछा—'रशीदी ! सामने किस फल के पेड़ हैं ?'

नदी के समतल भूमि पर उतरते हुए रशीदा ने उत्तर दिया—'लगते हैं जैसे लीची के हों ?' फिर किनारे को छोड़ नीचे आ गई।

उसके साथ ही शीली भी उतर पड़ी। समतल भूमि पर उतरते ही नदी के जल पर दृष्टि घूमी। नीला नीला नीर सा जल। उसमें उछलती डूबती मछलियाँ और दो आने जाने वाली नौकाएँ। नदी का दृश्य देखकर शीली का हृदय उस पार जाने के लिए मचल उठा। उसने नदी का जल हाथ में उठाते हुए कहा—'देखती हो रशीदा ! कितना सुन्दर जल है। इस जल में न अहं है, न विकार। अपने हृदय के अन्दर न जाने कितनों को यह स्थान देता है। चाहे कोई आदमी हो, या जानवर। इसमें राग नहीं है। द्वेष नहीं है।'

'कविता करने लगी तू' रशीदा ने शील के समीप बैठते हुए पूछा।

'नहीं।' इसमें कविता की कौन बात है ? तुम खुद सोच कर देखो न। जल में कोई स्पर्धा और किसी के प्रति ईर्ष्या नहीं है। संसार के सभी प्राणी इसके लिए एक समान हैं। खैर, छोड़ो भी इन बातों को। चलो तैर कर उस पार चलेंगे।'

'नहीं। आवो इस बालू पर बैठें शीला कुछ बातें होगी। आखिर अब क्या करना चाहिए। इस तरह कुटी में रहते लगभग सप्ताह पर सप्ताह व्यतीत हो गए। इस सुनसान दुनिया में न कोई दूसरा आदमी है, और न जीवन का कोई सुख।' कहती हुई रशीदा शील के समीप आ बैठी।

दोनों ने नदी के उस नीले और स्वच्छ जल में अपना पैर डाल दिया। पैर की अँगुलियों से पानी के छींटे उछालने लगीं। यौवन की रूप-रेखा ही अलग होती है चाहे वह औरत हो या मर्द। नारी और पुरुष केवल प्रकृति के आकर्षण द्वारा अपने को इस विशाल दुनियाँ में जीवित रखता है। यदि दोनों में आकर्षण न होता, तो सम्भवतः विश्व का विकास अपनी चरम सीमा पर पहुँचने के लिए लालायित नहीं रहता। शीली अभी तक किसी पुरुष के आकर्षण का केन्द्र नहीं बन सकी थी। लेकिन रशीदा का जीवन पुरुष के आकर्षण की ओर बहुत पहले झुक चुका था। इसलिए शीली किसी भावी आशंका के विषय में अधिक नहीं सोचती। यदि सोचती भी तो केवल प्राण-रक्षा के विषय में। किन्तु रशीदा के मस्तिष्क में हबीब की तस्वीर एक बार खिंच चुकी थी। अतः उसके ध्यान का दो भागों में विभाजित होना स्वाभाविक सा था। इसलिए वह किसी काम में मन लगाना चाहती तो हबीब छाया के रूप में आकर उसके सम्मुख खड़ा हो जाता। तब रशीदा किसी से बातें करना नहीं चाहती। नदी का जल और उसके हृदय पर किल्लोल करने वाली मछलियों का उन्माद और रोमान्स देखकर रशीदा का मन अपने भावी अतीत की ओर चला गया था। एक दूसरे के निकट पहुँचने के बाद भी दोनों एक दूसरे से अलग हो गए। रशीदा की आँखें नदी के जल की ओर जरूर लगी थीं। किन्तु दिमाग अपने गाँव में घूम रहा था। चेहरे पर चिन्ता की रेखाएँ नाच रही थीं। शील ने उसे देखा और नारी होने के नाते एक दूसरी नारी की मनोदशा को समझते उसे देर नहीं लगी। अपनी सहेली के मुँख पर चिन्ता की रेखाओं को देखकर

उसने मौन भंग करते हुए पूछा—'देखो ! रशीदा बहन ! आज तुम कुछ उदास सी मालूम पड़ती हो। किन्तु तुम्हारी चिन्ता का कारण मैं समझती हूँ !'

'चिन्तित नहीं हूँ शील ! सोचती हूँ आदमी अपने भाग्य और भविष्य को अपने आप बिगाड़ता और बनाता है।' रशीदा ने एक लम्बी स्वाँस खींच कर कहा।

'यह तो ठीक है। लेकिन तुम किसी और के विषय में नहीं सोच रही हो, बल्कि हबीब भाई की याद आ रही है।' कह कर शील खिलखिला पड़ी।

शील की बात सुनते ही रशीदा कुछ झेंप सी गई। फिर अपने को सम्भालकर ताना देती हुई बोली—'बच्ची ! अभी दिल का सौदा नहीं किया है नहीं तो समझती। तू मुझसे भी अधिक बावली हो उठती !'

'रहने भी दो। क्यों बातें बना रही हो। आने वाले भविष्य की बात मत छेड़ो। अपने वर्तमान को कहो।' कह कर शील ने नदी का जल अपने चिल्लू के उठाया और रशीदा के काले केशों पर डालती हुई बोली—'रशीदा ! हबीब भाई तो जेल में थे। जाने अब वे किस तरह हैं ? क्या हुआ उनका ?'

'हाँ शीली ! यही सोच रही हूँ। अब जाने मैंने अपने आप क्या कर लिया है। कुछ समझ में नहीं आता। अब्बा भी नहीं रहे।'

'तो तुम लौट जाओ न। गाँव में जाकर तुम उनका पता पा सकती हो।'

'ऐसा न कहो शीला। अब मैं उस गाँव में लौट कर जाना नहीं चाहती, जहाँ आपस की एकता और हमदर्दी हमेशा के लिए मिट गई हो, जहाँ अपना, बेगाना सा व्यवहार करे,

उस देश में जाकर रही सही इज्जत को मिटाना मैं नहीं चाहती।'

'फिर हबीब भाई साहब का क्या होगा?' पानी से पैर खींचते हुए शील उठ पड़ी।

उसके साथ ही रशीदा ने अपना दुपट्टा सम्भाला और उठकर किनारे की ओर बढ़ती हुई बोली—'यह सवाल कुछ टेढ़ा है। फिर भी यदि किसी को ढूँढ़ निकालने की आवश्यकता इनसान अपने हृदय के सहारे महसूस करता है, तो वह उसे अवश्य मिलता है। जिन्दगी में मैंने भी एक बाजी लगाई है। यदि जीतते जीतते मैं हार भी गई, तो मेरा हार हार नहीं समझा जायगी।' हार में ही जीत रहती है।'

'चलो चलो! अधिक शायरी भी अच्छी नहीं होती। मेरा विचार था कि उस पार चलते। सामने लीची के पेड़ों में असंख्य लीचियाँ लटक रही हैं। चलकर उन्हें तोड़ते और रख लेते।'

'जरूर। यह काम हमारा नहीं है। मर्दों का है। पेड़ पर हम लोग नहीं चढ़ सकतीं। यह बेकार की बातें हैं। चलो अब टीले पर चलें, दिन काफी ढल गया है। सन्यासी जी इन्तजार कर रहे होंगे।'

'लो चलो चलती हूँ, लेकिन अब यहाँ ठहरना ठीक नहीं। हम लोग सांसारिक आदमी हैं। इन तपस्वियों में साथ रहना ठीक नही। मेहमान् भी किसी का अधिक दिन तक नहीं रहना चाहिए। अधिक मेहमानी, मेहमानों की नजारों में कुछ खटकने लगती है। इसलिए मेरा ख्याल है अब इस स्थान को छोड़ कर शहर में चलना चाहिए।' वाक्य पूरा कर शील और रशीदा दोनों किनारे पर आ खड़ी हुईं। सामने टीले पर सन्यासी इन दोनों की हरकत देख रहा था। परन्तु शील

और रशीदा को मानों उस दुनिया से कोई मतलब नहीं। रशीदा शील का हाथ पकड़े टीले पर चढ़ने लगी। अभी दो कदम ही बढ़ पाई थी कि पीछे से सन्यासी ने आवाज दी—'अरी ओ रशीदा ! टीले पर न जा।'

आवाज आकर रशीदा के कानों में टकराई। उसने पीछे घूम कर देखा। मन्दिर का सन्यासी अपने हाथों में त्रिशूल लिए खड़ा था। उसे देखते ही बोली—'क्या है बाबा !'

'कुछ नहीं। मैं कहता हूँ नीचे लौट आ।'

सन्यासी की बातें विस्मय और भय के रूप में बदल गईं। रशीदा शील के साथ एक उस स्थान पर थम गई। फिर मुस्कराकर शील से बोला—'देखती है यह सन्यासी कितना डरपोक है।'

तब तक सन्यासी ने आकर अपने हाथ में लटके कमंडल से जल छिड़कते हुए कहा—'बेटी ! रशीदा ! पिता के साथ हम लोग मन्दिर मसजिद छोड़ कर झाड़ी में छिप रहे हैं।'

'सो क्यों सन्यासी जी ?'

'जंगल के बाहर रहने वालों को पता चला है कि किसी टीले पर एक मन्दिर है उस पर काफ़िर ठहरे हुए हैं।'

'किस ने कहा ?'

'पता नहीं। लेकिन तुम लोग अभी नदी किनारे घूम रहे थे न, तब पार से किसी ने देख लिया। उसने पार के बसने वाले लोगों को सूचना दे दी है। सुना है। वे इस जंगल में आग लगाने वाले हैं।

'लेकिन हम लोगों ने किसी आदमी को तो नहीं देखा बाबा।'

'तुम नहीं देख सकती। जो आदमी विश्वास को अपना धर्म समझता है, वह दूसरे की बुराई देखने की फिकर नहीं

करता। उनके दिल में गर्व और स्वार्थ को भावना इतनी अधिक है कि वे अपने तथा दूसरे को एक आदमी नहीं समझते। इन बातों में क्या रखा है। आज यह सभ्यता का बताव अंग्रेजों ने अपने हाथ से डालकर हमारे दो साथियों में अनमनी का बीज बो दिया। इस पर सोचना ही व्यर्थ होगा। आओ झाड़ी में छिप रहें।'

'लेकिन भगवान की पूजा कौन करेगा ?'

'भगवान मन्दिर में ही नहीं है वह हृदय में है। इन बातों में न पड़कर जल्दी चल। बातें बना रही है। अभी उनका हमला होगा।'

'और फकीरे बाबा।'

'उसने भी मसजिद छोड़ दिया है। वह इस देश में नहीं रहना चाहता, जिस देश में मन्दिर, मसजिद पर अधिकार हो। जहाँ प्रत्येक व्यक्ति के विचारों को पूरा अधिकार न हो। अतः आज किसी तरह प्राण की रक्षा करने के पश्चात् हम शहर चलेंगे। भारत के लिए रोजाना गाड़ियाँ छूट रही हैं। स्टेशन चलकर टिकट ले लें और भारत की ओर चलें।

'रशीदा कुछ अधिक न सोच सकी। उसने अपने समीप खड़ी शील को साथ ले सन्यासी के पीछे चल पड़ी। तीनों मौन थे। गोधूलि की उस लालिमा में जङ्गलों की पत्तियाँ पीली-पीली सी हो उठी थीं। सन्यासी आगे चल रहा था। उसके पीछे रशीदा और शील। दोनों चुप थीं। शील का हृदय भय के बोझिल विचारों से दबता जा रहा था। पर रशीदा खोयी, अनमनी और उदास होकर कदम रख रही थी। कभी-कभी उसे लगता सन्यासी और फकीर दोनों डाकू तो नहीं हैं जो हमें धोखा देना चाहते है। फिर

दूसरे क्षण ख्याल आता, लेकिन अब तक इन लोगों ने हमारे साथ कोई अनुचित व्यवहार नहीं किया। फिर ऐसे कलुषित विचार किसी के प्रति क्यों उठते हैं। इसलिए कि उस व्यक्ति की प्रतिभा देखकर भी कोई उसे पहचान नहीं सकता। मनोविज्ञान दुनियाँ में बहुत बढ़ गया है, लेकिन मनोविज्ञान के युग में भी मनुष्य बहुत पीछे है। इस तरह रशीदा कुछ समझ और नासमझी के कारण निर्णय न कर सकी। विचारों की गुत्थियों को सुलझाती झाड़ी के निकट जब सन्यासी पहुँचा, तो उसने रुककर कहा— 'इस झाड़ी में चलो रशीदा बेटी।'

रशीदा ने झाड़ी की ओर देखा। छोटी-मोटी असंख्य झाड़ियाँ उसके आस पास फैली हुई थीं। उनके बीच पतली सी पगडण्डी बनी थी। जिसके दोनों ओर बेर के काँटे उगे हुए थे। रास्ता सकरा था, इसलिए चलना भी कठिन था। फिर भी सन्यासी की बातों को रशीदा ने एक बार तौला। उसने सोचा, सन्यासी जब उसे बेटी मानता है, तब वह ऐसा करे। तो रशीदा उसका गला घोट देगी। इन विचारों की खाई में डूबती रही वह। लेकिन सहसा सन्यासी ने ध्यान भंग करते हुए कहा— 'अरे। तुम लोग डरती हो। 'अच्छा आओ पहले मैं चलता हूं।' कहकर सन्यासी ने काँटों को एक ओर हटाते हुए अपना पैर आगे बढ़ाया।

उसके पीछे शीला और रशीदा। लगभग एक फर्लांग पहुँचने के बाद सन्यासी एक गिरे हुए मकान के समीप जाकर ठहर गया। तब रजनी का अन्धकार भी उतर पड़ा था। उस टिमटिमाते तारों के बीच उसने दृष्टि उठाकर देखा। पश्चात अपने अगल बगल देखकर बोला—'रहीम! यह लो दोनों पगली को ढूँढ लाया।'

तभी मसजिद में रहने वाला फरीद उस गिरे मकान के एक भाग से निकला। पश्चात सबको साथ लेकर उस मकान के भीतरी भाग में प्रवेश किया। मकान से थोड़ी दूर पर सन्यासी ने शील के माता पिता को लाकर रख छोड़ा था। उस स्थान पर पहुँचकर, ज्यों उसने घूमकर बाहर निकलना चाहा एक धड़ाकेकी आवाज हुई और उस आवाज के साथ ही एक सनसनाती हुई गोली की तरह आदमियों की आवाज उस अन्धकार को चीरकर कहीं विलीन हो गई। जिसे सुनते ही है सन्यासी उचक गया। उसने फकीर की ओर सन्देह युक्त दृष्टि से देखा। फिर सावधान करते हुए बोला— 'फरीद। सावधान रहना। मन्दिर और मसजिद पर पार रहने वाले निवासियों ने आक्रमण कर दिया है। मैं उस ओर जा रहा हूँ। तुम इन लोगों को साथ लेकर स्टेशन की ओर चलो। मैं रात के दस बजे मिलूँगा। देखना पिछले रास्ते से निकलना। स्टेशन पर पहुँचाने के लिए तुम्हें सावधानी के साथ आगे बढ़ना चाहिए।'

'आप किसी बात की फिकर न करें। अपने जिन्दा रहते मैं किसी तरह की आँच न आने दूँगा।'

'मुझे विश्वास है।' कहकर सन्यासी चला गया।

'फरीद कुछ देर तक खड़ा रहा। फिर रशीदा की ओर देखा, तो उसे लगा, जैसे इन दोनों लड़कियों का हृदय सूख गया है। अतः सान्तावना देते हुए बोला—'तुम लोग डर रही हो। पगलों मौत से डरना हो मौत को बुलाना है। आओ मैं सब को साथ लेकर स्टेशन चलता हूँ। वहाँ से भारत जाने के लिए सरकार मुफ्त रेल दौड़ा रही है। हम लोग भी भारत चलें।'

'लेकिन रात को इस काले अन्धकार में भला रास्ता कैसे दीख पड़ेगा।'

'इसकी फिकर मत करो बेटी! रास्ता मेरा देखा हुआ है। बस इस समय जल्दी करो नहीं, तो जाने क्या आ पड़े।'

फरीद की बात कुछ समझ में आई या नहीं, लेकिन रशीदा ने सबको चलने के लिए राजी कर लिया और शीघ्रता पूर्वक सबको साथ लेकर जाने कितने टेढ़े मेढ़े रास्ते पार करता वह सबके साथ स्टेशन की ओर चल पड़ा।'

६

कादिर का साथ छोड़ने के उपरान्त हबीब अपने घर पहुँचा। सामने उसके पिता बैठे थे। दरवाजे पर एक छोटा सा कनस्टर रखा था जो कुर्सी का काम कर रहा था। उस कनस्टर पर हबीब का बाप बैठा किसी से बातें कर रहा था। पहले तो हबीब उस व्यक्ति को न पहचान सका। समीप पहुँचते ही उसने देखा। कादिर के अब्बा बैठे थे और किसी तरह की गुप्त बातें कर रहे थे। अतः हबीब दरवाजे के भीतर चुपके से प्रवेश कर दालान में निकल आया। घर में आकर देखा, तो वह लड़की खाना बना कर दालान में बिछी चटाई पर लेटी आराम कर रही है। उससे हटकर थोड़ी दूर पर दीवाल से लगे दीप दान पर एक दीपक जल रहा था। उसके टिमटिमाते प्रकाश में लेटी वह युवती भली लगी। किन्तु हबीब की आँखों में कामुक किरणों का तारतम्य नहीं था, बल्कि स्निग्ध और

शीतल छाया थी। जिसमें एक हार की एक गहरी छाप पड़ी हुई थी। व्यवस्था की ओर उसका ध्यान घूमा। उसे देखने में हबीब तल्लीन हो गया। परन्तु सहसा उसके पिता की कर्कश आवाज ने उसे सचेत कर दिया। दालान में लगे दरवाजे के समीप आकर उनकी बातों को सुनने का उपक्रम कर रहा था कि उसके पिता के निकट बैठने वाले कादिर के बाप ने भौं को सिकोड़ते हुए कहा—'नहीं! नहीं! ऐसा न कहो। गाँव में सरकार की ओर से आदमी और जासूस घूम रहे हैं। हमारा और तुम्हारा नाम भी शहर के थानेदार को पता चल गया है। मुल्ला साहब को आरजू मिन्नत करके मैंने माफी माँगी है। उनका कहना है कि जल्दी निकाह हो जाना चाहिए।'

'लेकिन हबीब नौकरी करना चाहता है। जब तक वह अपने पैर पर खड़ा नहीं हो जाता वह अपनी शादी करना नहीं चाहता।'

'तो दोनों लड़कियों को लेकर वे यहाँ से लाहौर चले जाँए।'

'हाँ। इस मुसीबत से छुटकारा पाने के लिए सब से सहल उपाय यह जान पड़ता है।' फिर हबीब के विषय में कहा—'हबीब आज जाय तो उससे पूछ लूँ।'

'भाई। उसे पूछना क्या है? कादिर के साथ रहमान ने बात की है। हबीब भी शहर जाना चाहता है और कादिर भी। बस दोनों निकाह कर लें। उसके बाद यहाँ से रात की ट्रेन से लाहौर के लिए रवाना हो जाँय।'

'जैसा कहो?'

'तो पक्की रही बात।'

'हाँ।'

कहकर ज्यों बूढ़े ने उठना चाहा हबीब दालान के सामने आकर बोला—'अब्बा ! दारोगा आ गया है। मैं अभी-अभी भाग कर आया हूँ। आप लोग जल्दी इस लड़की को हम लोगों के साथ कर दें। ताकि सुबह होते-होते हम स्टेशन पर पहुँच जाँय। नहीं, तो जाने कैसी बला मोल लेनी पड़े।'

'सच बोल रहा है, या गुस्ताखी कर रहा है।' कादिर के अब्बा ने पूछा।

'नहीं। सच कह रहा हूँ। कल रहमान अपने शहर जा रहा है। उसने हम लोगों से वादा किया है कि वहाँ तुम लोगों को काम दिला दूँगा।'

'क्यों भाई। क्या सोचते हो ?'

'सोचना कैसा ! जितना शीघ्र हो सके तुम और कादिर मकान छोड़कर बाहर चले जावो। साथ ही तुम लोग दोनों लड़कियों को लेकर अपने-अपने ननिहाल जाकर कुछ दिन तक रहो। अमन होते ही घर पर आ जाना। कैसी मुसीबत है। एक बार सरकार ने लाचार करके ऐसा काण्ड कराया। दूसरी ओर अब हमें स्वयं जेल का भागी भी बनाना चाहती है।'

'हाँ। सरकार तो राजनीति पर चलती है। हकूमत को बचाने के लिये उसे हर तरह की नीति के सहारे ही अपनी कामयाबी हासिल करनी है। दुनियाँ की नज़रों में यह गुनाह साबित हुआ इसलिये सरकार को ऐसी नीति बर्तनी पड़ रही है। हमारी भी न जाने कितने बहिनें के साथ वहाँ के लोगों ने किया होगा। अत: किसी की इज्जत और अधिकार को छीनना किसी एक व्यक्ति या पार्टी का कोई

फर्ज नहीं है। अब भागने के सिवा दूसरा कोई रास्ता भी नहीं है।'

'तो कादिर को मैं अभी भेजता हूँ।' उसके बाप ने हबीब के पिता की ओर देखकर पूछा।

'हाँ! भेज दो। मैं तब तक तैयारी करा देता हूँ।'

'तैयारी तो पीछे होगी। पहले तुम मेरे साथ चलो न। शायद कादिर न मान सके।'

'दारोगा का नाम सुनकर उसकी नानी मर जायेगी। बात मानना तो एक साधारण सी बात है। हबीब ने धमकाते हुए कहा।

बात दोनों बूढ्ढों के दिमाग में पैठ गई। उन्हें लगा, जैसे हबीब सच बोल रहा है। क्योंकि हबीब के अब्बा को तो नहीं; लेकिन कादिर के पिता को किसी न किसी तरह सूचना मिल गई थी कि सरकार भूले भटके व्यक्तियों को छान बीन कर रही है। एक दूसरी लड़की को बल पूर्वक अपने घर में रखने वाला आदमी मुलजिम करार दिया जाता है। इस भय से कादिर के बाप का दिमाग खराब हो रहा था। इसलिये हबीब की सूझ उसे पसन्द आई। उसके अब्बा को लेकर उसने घर की ओर चल पड़ा।

रह गया हबीब। अपनी चाल को सफलीभूत होती देख उसे कितनी खुशी हुई। मानों इनसानियत से विद्रोह करने पर भी वह इनसान का होकर रहेगा, उस युवती की वह जीवन रक्षा कर सकेगा। किसी को बचाने में एक प्राणी का हृदय कितना खुश होता है। इससे भी अधिक हबीब को खुशी हुई। साथ ही रशीदा का खोज निकालने का समय भी उसे मिल जायगा। अपने आप उलझता वह दालान में पड़ी युवती के निकट आकर खड़ा हो गया। अपनी जीत

पर उसे कितनी खुशी हुई थी उसे उसके सम्मुख व्यक्त करना वह चाहता था। इसलिये निकट बैठते हुए बोला, 'सो गई तुम ?'

'आप !' युवती ने अपने को सम्भाल कर कहा।

'हाँ। घबराओ मत। आज रात को तुम्हें मेरे साथ चलना है।'

'कहाँ।' आश्चर्य चकित दृष्टि से उसने देखा।

'शहर। तुम्हारे पिता के पास तुम्हें पहुँचा दूँगा।'

'वे जीवित नहीं हैं।'

'कोई भी तो होगा। तुम्हारे परिवार का यदि कोई आदमी जिन्दा होगा तो मैं उसे सौंप दूँगा।'

'भविष्य की बात मत सोचो। वर्तमान में जो संघर्ष है उसको भविष्य अपने आप मिटा सकता है। जहाँ चाहे ले चलें।'

'तुम दुखी हो गई। शायद तुम मेरे साथ चलने के लिए तैयार नहीं हो ?'

'नहीं। सोचती हूँ जो इस दुनियाँ से उठ गया उसका पाना कठिन है। फिर आपको लोग मुसलमान समझ कर बुरा बर्ताव न करेंगे ?'

'तुम इसकी चिन्ता न करो। तुम्हारी ही तरह एक लड़की थी, जिसका नाम शील था। रशीदा ने उसके परिवार की इज्जत बचाने के लिये अपना घर भी छोड़ दिया। भारत से भाग भागकर हमारे भाई यहाँ आए कि यहाँ अपनी जाति और सच्चे इसलाम का राज्य होगा। लेकिन रशीदा खुद इस देश को छोड़कर चली गई। फिर यदि मैं रशीदा को अपनी मानता हूँ, तो उसके विचारों को क्यों न मानूँगा। अलावा इसके दूसरा कोई रस्ता नहीं है।

उस गाँव में दो लड़कियाँ हैं । एक के साथ कादिर अपनी शादी करना चाहता है, दूसरी तुम हो । लेकिन मेरा विचार है कि कादिर की लालसा और स्वार्थ मिट्टी में मिला दूँ ।'

'क्यों आप अपने ही एक भाई के साथ विश्वासघात करेंगे ?'

'किसी आदमी के धर्म और मजहब को बदलने का अधिकार आदमी को नहीं है । फिर आज की दुनियाँ इतना आगे बढ़ गई है कि इन छोटी छोटी बातों को लेकर आदमी का विचार भी एक दाइरे में घूमता रह जाता है । अब देर न करो । अब्बा कादिर को समझाने गए हैं । अभी आते होंगे । आते ही हम लोग यहाँ से चल पड़ेंगे ।'

'लेकिन ! मेरा हृदय न जाने क्यों धड़क रहा है ।'

'यह कमजोरी है । तुम्हारे भाई के समान हूँ । मुझे किसी दूसरी नजरों से न देखो । रशीदा से मैंने बहुत कुछ सीखा है । तुम तैयार हो जावो ।'

'लेकिन रास्ते में किसी ने अगर सन्देह किया तो क्या होगा ?'

'तुम्हारा नाम क्या है ?'

'नाम मेरा निर्मला है । आप अब तक मेरा नाम भी नहीं जान सके ।'

'नहीं । बस इतना जानता हूँ कि तुम रशीदा की एक अमानत हो । अमानत को सजोकर तब तक रखूँगा, जब तक कि तुम्हारे परिवार का कोई आदमी नहीं मिल जायगा ।'

'मैं आपको क्या समझूँ—अपना सहारा, एक साधू ?'

'कुछ नहीं, केवल एक इनसान ।'

'अगर आप इनसान हैं, तो ' ।

'हाँ एक इनसान के साथ जो दूसरे इनसान का फर्ज है। उसे पूरा करना हमारा फर्ज है। एर्श. १ मेरी जिन्दगी है और तुम फर्ज। तुम दूसरे की अमानत हो।' कहकर हबीब जल्दी से बाहर निकल आया।

अपने बैठक में आकर कपड़ा वगैरह ठीक करने लगा। दूसरी ओर निर्मला रास्ते में खाने पीने के लिये कुछ सामान एक गठरी में बाँधकर तैयार हो गई। तैयारी तो उसने कर ली, लेकिन रास्ते के आदमियों की कल्पना कर उसका मन कभी कभी उदास हो जाता। गठरी बाँधकर एक कोने में दुबकी सी बैठी रही। तभी हबीब आ गया। इसे कोने में बैठी देखकर बोला—'अपना सामान वगैरह ठीक कर चुकी तुम ?'

'हाँ। कौन सा इतना सामान है जिसके सजाने में एक जमाना लग जाता।'

'तो तुम यहीं रहो। मैं अभी कादिर को लेकर आ रहा हूँ।' कहकर हबीब दालान से निकलने के लिए आगे बढ़ा था कि दरवाजे पर उसके पिता के जूते ने अपनी चरमराहट से उसे रोक दिया।

अब्बा के पैर की आवाज सुनकर हबीब ज्यों का त्यों उसी स्थान पर ठहर गया। तब उसके अब्बा जी खुद तशरीफ लाए। उसको तैयार देखकर बोले—'तुम तैयार हो गए बेटा। कादिर भी तैयार है। उस लड़की के साथ वह अभी-अभी आ रहा है। तुम निर्मला को साथ ले लो। शहर में पहुँच कर खत लिखना।' 'जरूर लिखूँगा। तुम्हें भी बुला लूँगा अब्बा। खेती बारी तो सब खतम सी हो गई है। जब नौकरी ही करना है, तो क्यों न सरकार की नौकरी की जाय।'

'तुमसे ऐसी ही उम्मीद थी। हाँ देखो कादिर का कुछ अधिक ख्याल रखना। रहमान से मिल कर हम लोगों ने तय कर दिया है। वह खुद तुम लोगों के साथ ही जायगा।'

'तो वे लोग आ रहे है, या नहीं।'

'आने की बात नहीं। ये सब नदी के किनारे मिलेंगे। कादिर के बाप ने उस लड़की को अपने रस्म रिवाज के अनुसार सारी पोशाक पहना दी है। तू भी सम्भल कर जाना। निर्मला को सिलवार और डुपट्टा में ले जा, ताकि कोई देखने वाला भापने न पाए।'

'इसके लिए आप फिकर न करें।' कहकर हबीब दालान की ओर फिर मुड़ा और निर्मला की बाँधी गठरी को अपने हाथ में लेकर घर से बाहर निकल पड़ा।

आगे हबीब और उसके पीछे निर्मला दोनों रात की उस मौनता को भंग करते नदी की ओर चल पड़े। हबीब के अब्बा ने कुछ देर तक दोनों को पहुँचा दिया। फिर लौटने लगे तो हबीब ने खुद रोकते हुए कहा—'चलो न अब्बा नदी के किनारे से फिर लौट आना?'

हबीब के अब्बा ने कुछ उत्तर देना चाहा कि पीछे से किसी ने चिल्ला कर कहा—'अरे हबीब हम लोग भी आ गए!'

आवाज़ रहमान की थी। इसलिए हबीब को पहचानते देर न लगी। थम कर उसी स्थान पर वह खड़ा हो गया! जब रहमान कादिर उस युवती के साथ उसके निकट पहुँच गए तो हबीब ने अपने अब्बा को लौटाते हुए कहा—'अब्बा तुम जावो न! रात में कहाँ तक जावोगे?'

'अच्छी बात है बेटा। मैं जाता हूँ। तुम लोग सम्भल कर जाना!' तत्पश्चात हबीब के अब्बा ने घर की राह ली।

और वह मंडली भूलती भटकती स्टेशन की ओर चल पड़ी !

१०

सन्यासी फकीर पर जब रशीदा और शील के परिवार का भार देकर चला गया, तो उसने बड़ी सावधानी के साथ सब को स्टेशन पहुँचा दिया। स्टेशन पर आकर देखा, तो सन्यासी पहले से खड़ा था। स्टेशन के इर्द गिर्द और भी अन्य यात्री अपना अपना सामान लिए बैठे थे। यात्रिया में अधिकतर अपने अपने गाँवों को छोड़ कर भागने वाले शरणार्थी ही थे। कुछ बंगाली बाबू और कुछ बिहार और युक्त प्रान्त के रहने वाले निवासी। मुसाफिर-खाना भर चुका था। लोगों ने बाहर भी अपना कदम इस रूप में जमा रखा था कि स्टेशन के भीतर प्रवेश करना कठिन था। रशीदा के साथ कादिर ने सन्यासी के निकट पहुँच कर पूछा।—'गाड़ी की क्या दशा है ?'

'गाड़ी अभी छूट रही है। मैंने जगह ले रखी है। तुम लोग मेरे साथ आवो !'

फकीर ने किसी तरह की आना कानी नहीं की। उसने सन्यासी के पद का अनुकरण किया। स्टेशन के प्लेटफार्म पर आकर भारत जाने वाले एक एक्सप्रेस में सब को बैठा दिया। और स्वयं सन्यासी को साथ लेकर स्टेशन पर लगी एक खोंचे वाले को ओर बढ़ा। खोंचे के समीप आकर उसने कुछ फल वगैरह खरीदा और लौटना चाहता था कि सन्यासी बोल उठा।फकीर ! हम लोग भी भारत चलें। जहाँ मन्दिर मसजिद का अर्थ और अन्तर हो वहाँ ठहरना व्यर्थ है।'

'मुझे कोई एतराज नहीं है। खुदा हर जगह है। चाहे यहाँ रहूँ या वहाँ रहूँ तो। यहाँ तो खुदा की बताई सभी बातों के बिरुद्ध ही काम हो रहा है।'

तब तक वह डिब्बा आ गया। फकीर ने अपने हाथ के फलों को रशीदा की ओर बढ़ा दिया। पश्चात स्वयं डिब्बे में सन्यासी के साथ आकर बैठ गया। गाड़ी छूट गई। एकसप्रेस ने अपनी चाल तेज की और अब रेल की लम्बी चौड़ी पटरी पर दौड़ती अपने शक्ति का परिचय देने लगी। डिब्बे में जितने यात्री थे सभी की सूरत देखने लायक थी। किसी की आँख बैठ गई थी तो किसी का दाहिना हाथ पट्टी से लपेट कर कागज का एक नमूना बना था। किसी का सिर बँधा था, तो किसी के पैर में कारपेट की चौड़ी पट्टियों का बन्धन लगा था। डिब्बे में शान्ति थी। रेल तेजी के साथ अपने मंजिल की ओर बढ़ती जा रही थी। रशीदा और शील का परिवार सन्यासी के इस सहानु-भूति को देखकर मन ही मन लाख आशीषें दे रहा था। फकीर के सामने ही एक दूसरा आदमी बैठा था जो देखने में किसी दल का स्वयं-सेवक जान पड़ता था। लेकिन समीप होकर भी दोनों आपस में कभी बात नहीं करते थे। रशीदा के मन में आया कि वह उस युवक से कुछ पूछ ले। लेकिन नारी-सुलभ-लज्जा के कारण वह बोल न सकी। इस तरह कुछ दूसरी ओर बैठने वाले व्यक्तियों में अजाव शोर गुल मचा था। अपने अपने गाँव की कहानी सब कह रहे थे। कोई अपनी बहादुरी की डींग हाँक रहा था, तो कोई किसी की हालत का उल्लेख करता। किन्तु किसी की रक्षा करने की बात अभी तक नहीं उठी थी। उठती कैसे? उस समय तो सबको अपनी अपनी पड़ी हुई थी। गाड़ी

चल रही थी। ट्रेन कदम पर कदम पेड़ पौधों और लाइन के बगल में लगे तार के खम्भे को पीछे छोड़ती जा रही थी। एक जिले से दूसरे जिले में उसका ठहरना निश्चित था। अतः अगले स्टेशन पर आकर गाड़ी रुक गई। गाड़ी रुकते ही फकीर ने प्रश्न किया। आप लोगों को किसी वस्तु की आवश्यकता है ?'

'नहीं ! आवश्यकता नहीं है। होगी तो आपसे पहले ही बता देंगे।'

'तब तक मैं बाहर जा रहा हूँ।' कहकर फकीर बाहर उतर गया।

प्लेटफार्म का एक पूरा चक्कर दे गया। पश्चात एक टिकट कलेक्टर के समीप आकर खड़ा हो गया। स्टेशन मास्टर भी समीप खड़ा था। उनकी बात चीत का रंग रूप देखकर उसके मन में संदेह का बीज उग आया। दोनों के निकट से गुजरते हुए उसने सुना। एक टिकट बाबू दूसरे टिकट बाबू से कह रहा था— 'लाइन खराब हो गयी है। सुना जाता है कि कटिहार के आगे किसी ने लाइन काट दी है। साथ ही आने वाली गाड़ी के यात्रियों की हत्या करने के लिए सभी लोग तैयार हैं। क्या किया जाय कुछ समझ में नहीं आता।'

अब फकीर से न रहा गया। उसने आगे बढ़कर टिकट बाबू से पूछा 'बाबू साहब ! गाड़ी क्यों रुक गई है ?'

'लोगों ने लाइन काट दी है। साथ ही इस ट्रेन पर हमला करने के लिए लाइन के निकट बसने वाले गाँव के निवासियों ने उपद्रव मचा रखा है इसलिए गाड़ी तीन घन्टे के बाद इस स्थान से प्रस्थान करेगी।'

'तब हम लोग गाड़ी से उतर जाँय।'

'नहीं। इसकी व्यवस्था की गई है। गाड़ी के साथ एक और डिब्बा जोड़ा जा रहा है, जिसमें यात्रियों के हिफाजत के लिए कुछ सशस्त्र सैनिक भी जा रहे हैं। आप लोग बेफिकर रहें। सरकार इसका प्रबन्ध कर रही है।' कहकर टिकट बाबू एक ओर चला गया।

अब फकीर का ठहरना भी व्यर्थ था। उसने अपना पैर डिब्बे की ओर बढ़ाया किन्तु अपने साथियों के सम्मुख इस रहस्य को वह व्यक्त न कर सका। प्रतीक्षा करते-करते जब सुबह होने को आई तो गाड़ी ने एक सीटी दी और आगे के लिए अपना कदम बढ़ाया। रेल के पीछे सैनिकों का एक डिब्बा भी जोड़ दिया गया। परन्तु हजारों मतवालों के सामने पाँच आदमियों को यह छोटी सी टुकड़ी क्या कर सकती थी। फिर भी एक सहारा था। और इस तरह तारों के बुझते प्रकाश में गाड़ी स्टेशन पर स्टेशन छोड़ती आगे चली जा रही थी। लेकिन सहसा गाड़ी की चाल धीमी हुई। ईंजन ड्राइवर ने बार बार सिटी की आवाज देकर गाड़ी को एक स्थान पर रोक दिया। गार्ड और ड्राइवर जल्दी जल्दी नीचे उतर पड़े। आगे एक फर्लांग तक लाइन खोलकर नीचे लुढ़का दी गई थी। लाइन के बगल बगल दानों ओर गाँव में रहने वाले निवासी बल्लम और लाठी लेकर नर संहार करने के लिए उद्यत थे। गाड़ी के रुकते ही भीड़ डिब्बे में बैठे व्यक्तियों पर टूट पड़ी। पीछे लगे डिब्बे से सैनिक भी उतर पड़े। दूसरे पक्ष के लोगों के पास भी बन्दूकें थीं। इसलिए दोनों ओर से सामना का संघर्ष इस रूप में व्याप्त हुआ कि जाने कितने आदमी विद्रोह भरी भावना से जलकर सदा के लिए राख हो गए। जो भाग सका, सो बच भी सका। जो न भाग सका, वह

तलवार के घाट उतार दिया गया। मनुष्य की सारी अभिलाषा केवल स्वार्थ में परिणित होकर भूत की तरह नाच रही थी। सभ्यता की साड़ी में पैवन्द लग चुके थे। रशीदा और शील के परिवार को सन्यासी और फकीर ने पहले ही नीचे उतार लिया था। और उनकी रक्षा के निमित्त स्टेशन से दूर जाने वाली पगडण्डी को पकड़कर चलना चाहते थे कि सनसनाती हुई एक गोली आई और फकीर का हृदय चूमकर कहाँ अदृश्य हो गई। फकीर लड़खड़ा कर जमीन पर गिर गया। सन्यासी ने सहारा देकर उठाया। रशीदा और शील का हृदय अपने आप जल उठा। रशीदा झटपट अपनी साड़ी का अंचल फाड़कर फकीर के सीने में लगे घाव पर पट्टी बाँधने लगी। शील ने उस फकीर का सिर दबाते हुए कहा—'आप लोगों को हमने कितना कष्ट दिया है। शायद किसी वक्त भी हम लोग इसका बदला न चुका सकेंगे।'

'बदला की क्या आवश्यकता। हर एक आदमी को अपना फर्ज अदा करना चाहिए। तुम लोग संकट में थीं। तुम्हारा मदद करना हमारा फर्ज था। फर्ज से जिन्दगी का दर्जा ऊँचा नहीं होता। मुझे यहीं छोड़ दो। तुम लोग अपनी हिफाजत करो। मेरी जिन्दगी तो अब चन्द मिन्टों की है।' फिर सन्यासी की ओर संकेत करके बोला— 'तुम इन लोगों की हिफाजत अपने मरने दम तक करना।'

पश्चात उस फकीर का शरीर शिथिल हो गया। सन्यासी ने उसे अपने गोद में उठा लिया और जङ्गल की ओर बढ़ना चाहता था तभी चार उपद्रव कारियोंने आकर सबको घेर लिया। इस माया से किसी का मुक्त होना कठिन था। फिर भी रशीदा को एक ओर हटाता हुआ सन्यासी ने कड़क

कर कहा—'तुम लोग अपनी खैर चाहते हो, तो सामने से हट जावो। वरना मुझे गलत कदम उठाना पड़ेगा।'

'चुप रह धूर्त साधु!' एक ने आगे वढ़ कर कहा। इसके बाद अपने जेब से गैस की शीशी निकाल कर प्रयोग किया जिसके प्रभाव से सब लोग बेहोश होगए और उपद्रवकारी उन्हें छोड़ अपने स्थान की ओर वढ़ निकले।

किन्तु पुलिस का पहरा भी कोई कम न था। सुबह हो चुकी थी। दिन में पुलिस अपनी अँगुली छोड़कर गोली चला रही थी। उन आतातताइयों को भागते देख चार पाँच पुलिस उनके पीछे दौड़ पड़े। और सब लोगों को घेर लिया। एक बार और मुठ भेड़ हुई। दोनों दलों ने अपने अपने दिल की मुराद खुल कर पुरी कर ली। अन्त में पुलिस ने प्रत्येक व्यक्ति को अपने अधिकार में ले लिया। पश्चात अपनी लारी से शहर के अस्पताल, में भेज दिया। इस हाथा पाई का परिणाम यह निकला कि रशीदा को भी चोट आई और शील को भी। इसलिए दोनों को सरकार ने सरकारी अस्पताल में भेज दिया और स्वयं अन्य यात्रियों की रक्षा करने में लग गई।

११

दूसरी ओर हबीब अपने साथियों के साथ जब स्टेशन पहुँचा तो यात्रियों को सुनगुन से उसे पता चला कि ट्रेन में दुर्घटना हो गई है। गाँव के लोगों ने गाड़ी के यात्रियों को रोक कर लूट पाट भी की है। अतः अब दूसरी ट्रेन से यात्रा करनी होगी। हबीब ने सुना तो उसका हृदय जाने कैसा हो उठा। एक बार उसके मन में आया कि वह अपने

तमाम भाइयों को इस अपराध का दण्ड दे दे। किन्तु साधन विहीन मनुष्य शासक सा केवल विचार रख कर तो कुछ नहीं कर सकता। फिर हबीब जिस सरकार के देश में रहता है उसके विरुद्ध आवाज उठाकर सरकार की नजरों में वह मुलजिम बनना नहीं चाहता फिर इस विद्रोह का अन्त कैसे हो? हबीब इस प्रश्न का जल्दी से जल्दी निपटा लेना चाहता है। अन्त में जब उसे कोई उपाय नहीं सूझा तो प्लेट-फार्म पर बनी बेंच पर बैठते हुए रहमान से बोला—'भाई रहमान! गाड़ी के आने में देर है। तब तक आवो कुछ रास्ता काटने का प्रबन्ध कर लें।'

'रास्ता काटने का प्रबन्ध कैसे होगा?'

'यार! तुम भी वही रह गए। अरे आवो स्टाल से कोई किताब ही खरीद लें। दुनिया के बड़े शायर और लेखकों की इस मजहब के विषय में क्या राय है।'

छोड़ो भी इन बातों को। पेट का प्रश्न जटिल होता जा रहा है। फिर आज के इनसान के पास इतना पैसा कहाँ, जो पाँच सात रुपयें की किताबें खरीद सके। समय और पर-स्पर की स्वार्थ भावना ने आदमी के रहन सहन को इतना साधारण बना दिया है कि लोगों की इच्छा साहित्य की ओर से उठती जा रही है। मुझे तो कोई शौक नहीं है। कभी काल अपने शहर से कोई रिसाला ले लेता हूँ। किन्तु उसमें कोई ऐसी बात नहीं रहती जिसके पढ़ने से कुछ जानकारी बढ़ सके। इससे अच्छा है कि सामने जो रेल का डिब्बा लगा है न उसी में चल कर बैठें।

'जैसा कहो।' दबी जबान से हबीब ने कहा। पश्चात बेंच से उठ पड़ा।

निर्मला, कादिर और उनकी भावी पत्नी को साथ ले कर रहमान और हबीब दूसरा पड़ाव पर लगे डिब्बे में जा कर बैठ रहे। शेष यात्री प्लेटफार्म पर लेटे रहे। कुछ टहल रहे। इस तरह रोज की तरह प्लेटफार्म पर चहल पहल तो थी, किन्तु उस चहल पहल से मायूसी और गमगीनी इस तरह टपक रही थी मानो प्रत्येक व्यक्ति श्मशान घाट से लौटा हो। दूसरे डिब्बे में हबीब बैठा सब कुछ तमाशा देख रहा था। सहसा उसकी नजर सामने की ओर घूमी तो एक युवती को देखकर वह एकाएक बोल उठा—'कादिर ! वह देखो। शायद रशीदा तो नहीं है।'

'रशीदा !' कादिर ने चौंक कर पूछा।

'कैसी बातें करते हो। अरी रशीदा तो कब की मर चुकी है। दिन में ही स्वप्न देख रहे हो क्या ?

'जैसा समझो। लेकिन मैं जो कुछ कह रहा हूँ ठीक है। वह सामने से गई है। तुम लोग ठहरो। मैं अभी आया।' फिर कादिर की ओर घूम कर बोला—'आवो कादिर मेरे साथ !'

पश्चात हबीब कादिर के साथ डिब्बे से उतर पड़ा। फिर झटपट प्लेटफार्म पर पहुँचा। किन्तु उस युवती को देख कर जाने क्यों वह निराश होकर लौट पड़ा और वैराग्य भरे स्वर में कादिर को ओर देख कर बोला—'कादिर मैं सन्देह के जाल में फँस गया था। वह रशीदा नहीं है।'

'मैंने तो बहुत पहले कहा था कि रशीदा कहाँ से आ गई। जिसे जन्नत में पहुँचे महीने हो गए उसको तुम इस दुनिया में देखना चाहते हो। आवो चलें।'

'नहीं कादिर ! वह मरी नहीं है। मेरा ख्याल है। वह भारत चली गई। वह इसलाम की सच्ची बँदी है। जो दूसरों की भलाई करता है उसकी मदद खुदा खुद

करता है।' रेल के डिब्बे के समीप पहुँचते ही हबीब ने कहा।

उत्तर में कादिर मुसकरा कर बोला—'तुम भी अजीब सी बातें करते हो। लाख वह दूसरों की भलाई चाहती है, लेकिन काफिरों के देश में कैसे जा सकती है जब कि वहाँ इसलाम को एक नीची नजर से देखा जाता है।'

'तुम पढ़ लिखकर भी दुनिया और युग के साथ नहीं हो। आज रशीदा के विषय में तुम्हारे ऐसे ख्याल है। किन्तु यह नहीं जानते। हिन्दुस्तान में आकर हमने जो कुछ भी किया। यहाँ के निवासियों ने अपने कलेजे पर पत्थर रख कर अपने यहाँ स्थान दिया। सोचो, कादिर! जिनके खानदान के नमक और पानी से हमने अपनी आबादी बढ़ाई, जिनके साहित्य और विचारों से हम जानवर से आदमी बने। उनके विषय में ऐसी धारणा बना लेना कोई बड़प्पन नहीं है। आवो चलो बैठें। गाड़ी में ही वादा विवाद कर लेंगे।' कहकर हबीब ने डिब्बे का फाटक खोला और अपने उस स्थान पर जाकर बैठ गया।

कादिर ने उसके पद का अनुकरण किया। रहमान डिब्बे में बैठा सिगरेट की लम्बी लम्बी कशें खींच रहा था। उसके सामने एक बूढ़ा मुल्ला बैठा था। उसने भी एक बीड़ी सुलगा रखी थी जिसकी गन्ध से सारा डिब्बा धुँआ धुँआ हो रहा था। हबीब को सिगरेट और बीड़ी से प्रेम नहीं। मानों इस युग में रहकर भी वह इन व्यर्थ की चीजों से अनभिज्ञ है।

अपनी सीट पर बैठते ही हबीब ने मुस्कराकर कहा—'रहमान भाई! सिगरेट पीना क्यों नहीं छोड़ते?'

'सिगरेट की बातें तो छोड़ो। यह बताओ तुम्हारी रशीदा मिली या नहीं ?'

'रशीदा नहीं थी। उसके जैसी ही एक युवती थी। मुझे भ्रम हो गया था।'

'यार तुम्हारी हालत तो बस ठीक दीवाने की तरह है। फरहाद ने शीरीं के लिए पहाड़ से सिर तोड़ डाला और मजनू मियाँ भटकते भटकते रेगीस्तान के खजूर बन गए। अरे ! यह प्रेम मुहब्बत की बातें तो केवल एक अफसाना बनकर रह जाती हैं। न प्रेम है न मुहब्बत ! केवल कोरी वासना को लेकर आज की दुनियाँ बेचैन है और उनमें तुम्हारा भी नाम है।'

'रहमान ! शायद तुमने आदमी और औरत को समझने में गलती की है। प्रेम और मुहब्बत न तो कोई करता है, न कोई उसे कर सकता है। यह तो अपने अपने मन की बात है। दुनिया में हर तरह के लोग हैं। प्रत्येक आदमी को कोई न कोई चीज अच्छी जरूर लगती है। जिस चीज को आदमी सबसे अधिक अपने निकट समझता है उसे वह आकर्षित करती है। आकर्षण का नाम ही मुहब्बत है। जब मर्द और औरत का सहयोग दुनियाँ में जरूरी है और निकाह करना ही है, तो क्यों न एक बार यदि किसी युवती को जबान देकर उसके इज्जत की रक्षा की जाय ताकि मुहब्बत और प्रेम जैसा पवित्र अदार बदनाम न होने पाये।'

'यह तुम्हारा ख़्याल-ख्याल है। मुहब्बत कुरबानी चाहती है !'

'कुरबानी का अर्थ है अपने सुख को छोड़कर दूसरे की भलाई करना और अधिक सुख देना। मुहब्बत में एक औरत के

दिल को लेकर था उसे एक बार अपना साथी बनाकर त्याग देना कुर्बानी नहीं है। जिन्दगी सबसे बड़ी कम-जोरी है, जो इनसान की तरक्की में एक टीला बनकर खड़ी हो जाती है। किन्तु, नारी पुरुष का इतना बड़ा जो रूप फैला है वह केवल वासना और विधान बनाने में ही लुप्त है। रशीदा से मैंने कभी मुहब्बत नहीं की। उसे मेरे घर वालों ने ही चुना। उसके पिता को तुम जानते ही हो। कोई धनी आदमी नहीं थे। मेरे अब्बा जान कुछ लेना चाहते थे और यह मेरे वसूल के खिलाफ था। अन्त में अब्बा ने इस बात पर समझौता कर लिया कि उनके मरने के बाद मैं उनको कब्र में भेज दूँगा। फिर उनकी सारी जायदाद का मालिक बन कर दौलत का इस्तेमाल करूँगा। लेकिन यह बात मुझे कुछ खटकती सी जान पड़ी। एक लड़की के जीवन का प्रश्न था। भारत या पाकिस्तान दोनों आजाद हो गए। लोगों के विचार भी आजाद होने चाहिए, लेकिन इसमें हम लोग पिछड़ गए। शादी तय करने का फर्ज परि-वार को है, पर सौदा करने का अधिकार नहीं। और तब से मैं रशीदा को समझ लो अपनी मानने लगा। इरादा भी है कि जिन्दगी के आखिरी दम तक उससे अपनी भूलों के लिए क्षमा मागूँगा।'

'तब तो यार तुम सचमुच बड़े दिल वाले मालूम होते हो। अगर इस तरह की बातें सोच बैठे हो तो कामयाबी तुम्हारे हाथ रहेगी।' फिर गाड़ी के विषय में चिन्तित हो कर बोला—'पता, लगाओ न ! गाड़ी छूटेगी या यों ही मुसा-फिर खाने की सैर करते जिन्दगी बीत जायेगी।'

'हाँ ! शाम होने को आई और अभी तक कोई···'

'इसकी जिम्मेदारी भी हमारे ऊपर है, रेलवे लाइनों

को तोड़ने के उपरान्त भी तुम ऐसा क्यों पूछते हो। देश हम लोग बाँट चुके। फिर भी हमारी आत्मा की प्यास नहीं बुझ सकी। मानो, कादिर। अगर हम दोनों साथ होकर एक दूसरे के साथ भाई-भाई सा कन्धा मिला कर इस हिन्दुस्तान को ऊपर उठाने के लिए होड़ लगाते तो शायद कोई देश हम लोगों का मुकाबला नहीं कर सकता।'

हबीब के चुप होते ही रहमान झल्लाकर बोला—'रहने भी दो। यार मुझे तो ऐसा लगता है कि काफिरों ने तुम्हें अपना पानी पिला दिया है।'

'ऐसा ही समझ लो। लेकिन पानी-वही पानी तुम पीते हो। मैं भी पीता हूँ और यह दुनियाँ पीती है। फिर तुम्हारे विचार क्यों ऐसे हैं, और लोगों के और ?'

'यह तो सभी एक सा नहीं हो सकता।'

'लेकिन आदमी सूरत शकल और मजहबी ख्यालातों से अलग होते हुए भी एक है। खैर, छोड़ो भी इन बातों में क्या है। आवो स्टेशन मास्टर से पूछ ताछ की जाय कि ट्रेन कब छूटेगी। अभी एक थोड़ी सी गड़बड़ी से गाड़ियाँ लेट हो रही है। कल जब यहाँ के रहने वाले वहाँ और वहाँ के यहाँ आ जायँगे तब दोनों देशों की दशा क्या होगी।'

अपना वाक्य पूरा कर हबीब बर्थ से उठना चाहता था कि गाड़ी ने अपनी सीटी दी। डिब्बे में बैठे मुसाफिरों के जान में जान आगई। हबीब ने दरवाजे के समीप खड़ा होकर बाहर झाँक कर देखा। नीचे एक रेलवे कर्मचारी खड़ा था। सम्भवतः हबीब के डिब्बे का निरीक्षण वह कर चुका था। और अब अगले डिब्बे की बारी थी। इसलिये वह इधर निकल आया था। उसे नीचे खड़े देख हबीब ने प्रश्न किया—'भाई जान! गाड़ी छूटेगी भी या यहीं रहेगी।'

'कहाँ जाना है आपको ?' उसने प्रश्न किया।

'यह गाड़ी कहाँ जा रही है ?' हबीब ने पूछा।

'यह आगे एक्सप्रेस उलट गई है। उसमें जो घायल व्यक्ति हैं उन्हें लेने के लिए जा रही है।'

'तो हम इसमें से उत्तर जाँय ?' हबीब ने पूछा।

'नहीं यह ट्रेन आपको भारत और पाकिस्तान की सीमा पर ले जाकर छोड़ देगी। उसके बाद आपको आगे जाने वाली दूसरी ट्रेन मिलेगी। लेकिन आप भारत जाना चाहते हैं या पाकिस्तान ?'

'गाड़ी जिस ओर चली जाय। इस वक्त न तो भारत का प्रश्न है और न पाकिस्तान का बल्कि जिन्दगी बचाने की फिकर है।'

'ओ तो आप भी गाँधीवाद के शागिर्द मालूम पड़ते हैं।'

'मैं किसी का शागिर्द नहीं हूँ। किन्तु अपने दिमाग से खुद सोचता हूँ कि सैकड़ों वर्ष एक साथ रहकर भी हम आपस में क्यों लड़ते हैं।

'महाशय इसकी बात आप भूल जाँय। अब वह दिन नहीं रहे। आज दुनियाँ की तमाम जातियाँ आगे बढ़ती जा रही हैं। और आप अपने ही जाति की बुराई करते हैं।' पावइन्ट मैंने कुछ उभरता हुआ दीख पड़ा।

हबीब ने कुछ अधिक कहना-सुनना उचित नहीं समझा। चुप चाप अपनी सीट पर आकर बैठा रहा और इस तरह लगभग दस बजे रात तक गाड़ी खुल गई। पैसेन्जर की रफ्तार भी न्यारी ही होती है। तीस मील की दूरी कभी तैंतालीस मिनट में पूरी होती है और कभी तीन घन्टे में। लेकिन गाड़ी खुल जाने पर जैसे हर एक मुसाफिर को अपने स्थान पर पहुँचने की जल्दी पड़ी रहती है। उसी तरह हबीब

रहमान और कादिर को जल्दी पड़ी थी कि जितनी जल्दी हो सके वे शहर में पहुँच जाँय।

हबीब विचारों के संघर्ष में पिसता रेल के साथ अपने घर से बहुत दूर भागा जा रहा था। उसके साथ ही आसमान के तारे और जमीन के पेड़ पौधे उसके पीछे छूटते जा रहे थे। जिसकी छाया के नीचे उसने अपने तमाम हिन्दू और मुसलमान दोस्तों के साथ बचपन बिताया, जहाँ की जमीन और पानी से दोनों के शरीर को पाल-पोसकर उतना बड़ा किया आज वे दोनों भाई आपस में लड़कर आपस का फैला चाहते थे। इन्हीं विचारों का भौतिक हल चाहता था हबीब। लेकिन हल करीब होते हुए भी, मानों उससे बहुत दूर था। और दूसरी ओर एक गाड़ी थी, जो अपने धुन में सब को लेकर अनजान दिशा की ओर भागी जा रही थी। डिब्बे में चारों ओर शान्ति छाई थी। रात का समय और उसमें भी घायल और पीड़ित यात्री। इस डिब्बे में स्थान पाकर अपने घर सा आराम पाकर बेफिकर होकर कुछ तो सो रहे थे। कुछ रास्ता कटने के लिये गप्पें हाँकने में ही मस्त थे। निर्मल और कादिर के साथ वाली युवती की आँखें गाड़ी के झोंकों से झपने लगी थीं। साथ ही हबीब और कादिर की यह आज्ञा थी कि वे उनसे बात न करें। इसलिए वे दोनों चुप हबीब, कादिर और रहमान की बातें सुनती रहीं। परन्तु किसी ने कभी छेड़ छाड़ नहीं की। डब्बे के यात्री गाँवों में होने वाले उपद्रवों में अधिकतर हबीब के गाँव का ही नाम ले लेकर बातें करते। सहसा किसी ने डब्बे के एक कोने से एक फकीर की ओर इशारा करते हुए कहा—'जी! आप कहाँ से आ रहे हैं?'

'जी! जिस मोहल्ले और गाँव की बात करते हैं वह

गाँव मेरे गाँव से लगभग तीन मील के फासले पर है।'

'तो आप इधर कहाँ जा रहे हैं?' उस आदमी ने पुनः पूछा।

'हिन्दुस्तान जा रहा हूँ। और आप लोग?' फकीर ने पूछा।

'हम लोग सीमा पर जा रहे हैं। इरादा है कलकत्ता में चलकर व्यापार करेंगे?'

'तो आप भी हिन्दुस्तान चल रहे हैं।'

'हाँ!'

'खैर। ठीक है। अब साथ हो चलेंगे।' फकीर ने उस आदमी की ओर देखकर कहा।

हबीब का ध्यान उस ओर ही था। अतः सुनते ही जाने क्यों वह उसके विषय में परिचय प्राप्त करने के लिए आकुल हो उठा। अपने विचारों को समेट कर उठा और उठकर फकीर के वर्फ के समीप जाकर अर्ज करते हुआ कहा— जी। आप कहाँ के रहने वाले हैं?'

'मछुआ वाड़ी।'

'हाँ। हाँ। तब तो हमारे निकट के पड़ोसी हैं। मेरा भी गाँव वहीं है। लेकिन मठ में तो अब फकीरों का रहना होता है। आप वहाँ से क्यों भाग रहे हैं?'

'मत पूछो मैं उन फकीरों के साथ रहना पसन्द नहीं करता जो फकीरी को तिजारत की नजर से देखते हैं।'

'बाबा आप तो काफी पहुँचे हुए जान पड़ते हैं।'

'नहीं। मैं तो केवल तुम्हारे जैसा मुसलमान हूँ। खुदा की सच्ची नेक सलाह को समझकर दुनियाँ में चलता हूँ। लेकिन जहाँ खुदा की सलाह केवल एक दलील समझी जाती है वहाँ की प्रत्येक चीजों से हमें सख्त नफरत है।'

हबीब फकीर की बातों से अधिक प्रभावित हुआ। कुछ देर तक खड़ा, फकीर की ओर ध्यान से देखता रहा। फकीर के साथ बैठने वाले प्रत्येक यात्री आश्चर्य में पड़े उसकी ओर देख रहे थे। अपनी ओर एकटक देखता देखकर फकीर के मन में आया कि वह उन यात्रियों को सीख दे। किन्तु सहसा गाड़ी ने अपना ब्रेक दिया और एक छोटा सा स्टेशन आ गया। गाड़ी के रुकते ही सब का ध्यान प्लेटफार्म की ओर घूम गया जाने कितने यात्री ट्रेन की प्रतीक्षा में अपना सामान सिर पर उठाए जगह पाने के लिए एक छोर से दूसरे छोर की ओर भाग दौड़ मचा रहे थे। परन्तु गाड़ी तो पहले से ही भरी थी। उसमें जगह कहाँ, जो किसी और को जगह मिल सकती। उतरने वालों की संख्या नहीं थी। केवल चढ़ने वाले ही दीख पड़ते। मानों दुनियाँ छोड़कर मनुष्य कहीं जाने को तैयार बैठा था। प्लेटफार्म का दृश्य देख हबीब मन ही मन कुछ सोच रहा था कि गाड़ी ने फिर सीटी दिया और आगे की ओर बढ़ निकली।

एक धक्के के साथ फकीर और हबीब दोनों सम्भल गए। शायद प्लेटफार्म से कोई व्यक्ति ट्रेन में न चढ़ सका। परन्तु यहाँ किसको किसी की पड़ी थी। घायल की गति घायल व्यक्ति समझता है, किन्तु जब उसका घाव भर जाता है, तो वह अपनी दर्द, पीड़ा और घाव को भूल भी जाता है। फिर गाड़ी के लोग भी जब अपने लिए जगह बना लेते हैं, तो दूसरे यात्री की वे परवाह भी नहीं करते। इस तरह अगर हबीब के डिब्बे वालों ने किसी यात्री को पनाह नहीं दिया, तो इसमें कोई कसूरवार नहीं रहा। हबीब ने भी इस ओर विशेष रूप से ध्यान नहीं दिया। चुपचाप बैठा फकीर की ओर देख रहा था। इतने समय

में फकीर ने अपनी चिलम निकाल ली थी और उसमें कक्कड़ भर कर पीने की तैयारी कर रहा था। हबीब के बगल में एक दूसरा व्यक्ति बैठा था, जो देखने में एक आगा सा लग रहा था। फकीर को चिलम भरते देख उसने अर्ज करते-हुए कहा—'दादा! मेरी ओर भी जरा...।'

'अरे। तुम समझते हो। यह गाँजा है।'

'और नहीं तो क्या? बाबा का प्रसाद अगर मिल जाय तो मैं...।'

'नहीं। गाँजा नहीं है। यह सादा तम्बाकू है। तम्बाकू पीने की आदत कुछ पहले से ही पड़ गई है। मेरी यात्रा हमेशा सफर में ही बीतती है। फिर सूखी चिलम पी लेता हूँ। मेरे गाँव में एक आदमी रहता था। वह सूखी चिलम पीकर रात भर खेतों की रखवाली किया करता था। इस तरह हर आदमी को किसी न किसी चीज की आदत पड़ जाती है।' फकीर ने अपनी चिलम भर ली और एक बार कस कर जो दम लगाया तो उसमें आग सी उठ गई। एक कश खींचने के बाद चिलम उसने उस आदमी की ओर बढ़ा दिया। आगा ने जाने क्यों इनकार भी नहीं किया।

उसने चिलम को लेकर एक कश खींचा और दूसरे आदमी के मुँह पर धुआँ फेंक कर बोला—'सचमुच। फकीर दादा। तुमने तो कमाल की चिलम बनाई है।'

'अरे यह क्या है। मोहना गाँव में मेरे दोस्त की एक बेटी थी, जिसके हाथ की चिलम भर कर देते ही नशा हो जाता। मन में फकीरी जाग आती। लेकिन वह गाँजे की चिलम नहीं होती बल्कि खेत का उपजा हुआ तम्बाकू होता उसके प्यार और बोली में कितना मिठास भरा था। उस मिठास की तुलना तुम नहीं कर सकते।'

'लेकिन आप रशीदा को कैसे जानते हैं ? वह तो मेरे गाँव में रहती थी ?' हबीब ने रशीदा के विषय में परिचय प्राप्त करने के लिए पूछा।

'मैं ? अपने गाँव से अक्सर उसके यहाँ जाया करता था। उसके पिता से मेरी अच्छी दोस्ती थी। लेकिन जिस रोज हमला हुआ उसके ठीक दो रोज पहले मैं शहर चला आया था। आने पर ज्ञात हुआ कि रशीदा अपने परिवार के साथ कैम्प में चली गई। उसके पड़ोस में श्याम भाई रहते थे। उनका भी पता न चला। अन्त में विवश होकर मैं अपने घर चला आया। लेकिन मेरे गाँव की दशा भी ठीक नहीं। कैम्प के एक आदमी ने बताया कि रशीदा शील के साथ भारत चली गई। इसलिए मैं भारत जा रहा हूँ। वह मेरे दोस्त की बेटी थी। दोस्त की बेटी भी अपनी ही बेटी होती है। उसका पता लगाना जरूरी है।'

'तब तो आप हमारे भी वालिद हुए।'

'सो कैसे ! क्या तुम उधर के रहने वाले हो ? फकीर ने पूछा।—हबीब ने सिर हिलाकर उत्तर दिया — 'हाँ।'

'तभी गाड़ी एक झटके के साथ खड़ी हो गई। यह कोई दूसरा स्टेशन था। हबीब के डब्बे से यह काफी दूर था अतः वह उस डिब्बे से स्टेशन का नाम तो न देख सका। किन्तु एक चाय बेचने वाले से पूछा तो उसने बताया कि—तमुलापुर है। तमुलापुर कोई नया स्टेशन खुला था, जिसकी जानकारी हबीब क्या अन्य किसी और को नहीं थी। इसलिए उसने विशेष रूप से ध्यान भी नहीं दिया। पुनः उस चाय वाले से कुछ पूछना चाहता था कि गाड़ी खुल गई। अब अगले स्टेशन पर हबीब को उतर जाना था। क्योंकि रेलवे लाइन उखाड़ डाली गई थी। इसलिए उसने फकीर

को सम्बोधित करके कहा— 'फकीर बाबा ! अगले स्टेशन से तो पैदल ही चलना होगा ?'

'हाँ। ऐसा सुना है। उस स्टेशन से मैं भारत जाने वाली गाड़ी पकड़ लूँगा और तुम लोग कहाँ जा रहे हो ?'

'हम लोगों को तो ढाका जाना है। वहीं पर मेरे एक दोस्त अपना कारबार करते हैं।'

'तो आप लोग अपने बाल बच्चों के साथ जा रहे हैं ?'

'हाँ। आप भी कभी आइए न ?'

'पता लिख दो। मैं आऊँगा ! मेरा काम ही है। एक स्थान से दूसरे जगह भ्रमण करना।'

'अच्छी बात है।' कहकर उसने अपने से कुछ दूरी पर बैठे रहमान की ओर देखकर बोला— 'रहमान ढाका का पता लिख देना। फकीर दादा तो बड़े काम के आदमी हैं ?'

'आदाब वर्ज है दादा !' रहमान ने अपने जेब से कलम निकालकर एक कागज पर कुछ लिखते हुए कहा।

पश्चात उसने उस कागज को हबीब के हाथों में रख दिया। हबीब ने उसे फकीर को दिया, तो उसने अपनी झोली रखते हुए कहा— 'इस पर आप का नाम लिखा है, या नहीं ?'

'मेरा नाम हबीब है। मोहना गाँव में रहता हूँ। रशीदा का पता अगर आपको मालूम हो सके, तो मुझे एक कार्ड डाल दीजियेगा।'

'रशीदा से तुम्हारा क्या सम्बन्ध ?'

'वह मेरे बचपन की सहेली है। उसके अब्बा और मेरे अब्बा भी बचपन में एक दूसरे के साथी थे।'

'क्या नाम है तुम्हारे अब्बा का ?'

'नादिर हुसेन ?'

'अरे नासिर हुसेन तो मेरे साथ मुल्ला साहब के यहाँ पढ़ने आया करते थे। कहो, बेटा। आज कल उनकी खेती बारी का क्या हाल है ?'

'खेती बारी को इस आपस के झगड़े ने इस तरह बरबाद कर दिया है कि गाँव में ठहरना मुश्किल हो गया है।'

'ऐसा कैसे चलेगा। सब लोग गाँव छोड़कर अगर बाहर में ही भाग निकलोगे तो गाँव की उपज और रहन सहन को सम्भालने को कोई न रह जायेगा ?'

'नहीं दादा। ऐसी बात नहीं है। हम शहर से कुछ सीख कर आएँगे, तो गाँवों को भी शहर के रहन सहन में ढाल देंगे। फिर इधर फसल और मवेशियों की कमी के कारण और भी मुसीबत आ गई है।'

'तो वहाँ कुछ कारबार ठीक कर रक्खा है या योंही घूमने फिरने के लिए ?'

'नहीं। वह रहमान भाई का कारबार है। उनके साथ ही कुछ काम करेंगे। फिर झगड़ा फसाद के मिटते ही, हम अपने घर आ जाएंगे।'

'तुम नवजवानों से ऐसी ही उम्मीद है।'

'हाँ। लेकिन रशीदा का पता आप जरूर देंगे न ?'

'उसके मिलते ही मैं खत दूँगा।'

'लेकिन इतने बड़े देश में उसका पता कैसे चल सकेगा ?'

'फकीर। दर दर घूमने वाले आदमी की नजरों से लगभग न जाने कितने तरह के लोग गुजरते हैं और उनमें वह कितनों को पहचान कर भी उनसे अपना भेद नहीं खोलता। मेरा जीवन भले ही बरबाद हो जाय, किन्तु अपने प्यारे

दोस्तों की दोनों बेटियों को ढूँढ कर उनका विवाह अपने सहारे करूँगा। इसीलिए मैंने अपनी मसजिद छोड़ दी है।'

'आपने मसजिद छोड़ दी है, फिर उसमें चिराग कौन जलाएगा?' 'चिराग। चिराग तो उसी रोज बुझ गया हबीब, जिस रोज कि हम लोगों ने अपने को हिन्दुस्तानी न जान कर, एक दूसरे से अलग अलग जाना। मन्दिर और मसजिद दोनों से राम और खुदा ने अपना निवास हटा लिया और रह गई केवल मन्दिर मसजिद की दीवारें जिन पर सिर पटक पटक कर आज का आदमी चीख और चिल्ला रहा है। अब चिराग की बात नहीं है। तुम एक मसजिद की बात करते हो। जाने कितने मन्दिर और मसजिद की ईंटे खिसक खिसक कर खंडहर बन कर रह गई हैं। मैं इन पर किसी से कुछ सुनना नहीं चाहता, हबीब! मैं तो एक फकीर हूँ। फकीर राम और रहीम में फर्क नहीं मानता। मैं केवल एक इनसान हूँ। और प्रत्येक इनसान का हूँ। हाँ! जब कभी घर जाना तो अपने अब्बा से कह देना कि एक फकीर उन्हें याद कर रहा था।'

'जरूर...जरूर। क्यों न कहूँगा दादा' कह कर हबीब ने हाथ जोड़ सिर झुका लिया।

तब तक स्टेशन आया। गाड़ी रुकी और टिड्डियों के दल सा यात्री दल नीचे उतर पड़ा। सब के साथ हबीब कादिर रहमान और उनके साथ की दोनों औरतें भी नीचे उतरीं। फकीर ने नीचे उतरते समय हबीब से बिदा ली और भारत जाने वाली ट्रेन की प्रतीक्षा करने के लिए आगे की ओर चल पड़ा। हबीब, रहमान के साथ कादिर ने उसे दुआ सलामत की और दूसरी ट्रेन की इन्तजारी में प्लेटफार्म पर बैठ रहे। फकीर उनसे अलग हो गया।

१२

मसीहाबाद में जो रेलवे दुर्घटना हुई थी। उसमें जितने लोग घायल हुए। सभी अस्पताल में पहुँच गए थे। अस्पताल के कर्मचारियों ने सब की सेवा खूब की। साथ ही डाक्टरों ने घायल व्यक्तियों को सँजों सँजो कर सुधारा। बहुत से ऐसे रोगी थे जिनको अभी तक होश नहीं आया था। उनमें रशीदा और शील का भी स्थान था। रात से लगातार पट्टी बदली जा रही थी। किन्तु रशीदा को होश नहीं आया। उसके सिरहाने एक नर्स आइस बैग लेकर बैठी थी। दूसरे वार्ड में शील भी बेहोश पड़ी थी। डाक्टर परेशान था। लगभग चौबीस घन्टे के उपरान्त रशीदा की आँखें खुली। आँख खुलते ही उसने एक बार उस कैम्प में खड़े बैठे जाने कितने नर्सों को देखा, तो घबरा सी गई। सब लोग थे। लेकिन उसकी सहेली शील नहीं थी। जिसे वह अपने घर से सम्भालती आरही थी, न तो वह थी और न उसके माँ बाप। अतः रशीदा का मजबूत दिल जाने क्यों धड़क उठा। उसने चोट की परवाह न कर उठना चाहा, तभी समीप बैठी हुई नर्स ने उसे लिटाते हुए कहा—'आप लेटी रहें। अभी आप उठने लायक नहीं है।'

'मैं कहाँ हूँ। मेरी सहेली शील कहाँ है?'

'वह आ जायगी। अभी आपकी हालत ठीक नहीं है।'

'लेकिन मैं कहाँ आ गई?'

'अस्पताल में।'

'और मेरे चाचा?'

'वे दूसरे वार्ड में हैं।' रशीदा को घबड़ाते देख नर्स ने धीरज देने के लिए कहा।

'उन्हें आप बुला दें।

'अब नर्स क्या जवाब दे। जब वह स्वयं उसके चाचा से अनभिज्ञ थी। साथ ही उसका ध्यान रशीदा के साथ आने वाले एक रोगी की ओर गई। उसे लगा, हो न हो। वह बूढ़ा इस लड़की का चाचा हो। इसलिए वार्ड से निकल कर सर्जन के कमरे में दौड़ आई। रोगियों की लिस्ट देखकर उसने सर्जन से पूछा—'वार्ड नं० १४ में जो लड़की आई है। उसके साथ एक बूढ़ा आदमी भी था। वह किस वार्ड में रखा गया है?'

'क्यों क्या बात है?'

'वह उसे देखना चाहती है?'

'होश आ गया उसे?' सर्जन ने पूछा।

'हाँ।'

'खैर, देखो। उस रोगी को पता न चले। वह रोगी खतम हो गया। उसके साथ शायद उसकी बूढ़ी औरत थी। उसने भी अपना शरीर छोड़ दिया है। केवल एक लड़की बच रही है। मिस्टर वर्मा उसकी देखभाल कर रहे हैं। यदि चार बजे तक उसे होश आ गया तो शायद वह जीवित बच जाय। नहीं, तो······

'सर्जन की बातें सुन नर्स की आँखें भरने लगी। सम्भवतः नारी का कोमल हृदय एक नारी के करुण अवसाद भविष्य को सोच कर सिहर उठा था। उसे रोते देख सर्जन ने पुनः दुखी होकर कहा—'नर्स! तुम रोती है। यह अस्पताल है। जिन्दगी और मौत के बीच में ही इसकी नींव पड़ी है। तुम

उस रोगी के सम्मुख इस घटना को तब तक मत कहना, जब तक वह पूर्ण रूप से स्वस्थ न हो जाय ?'

'ऐसा ही करूँगी !' फिर उस लड़की की ओर ध्यान देकर बोली—'उसकी दशा कैसी है ?'

'डाक्टर वर्मा देख रेख कर रहे हैं। साथ ही एक स्वयं सेवक जो उनके साथ आया था। उसके पास बैठा है। मेरा ख्याल है। आज रात को उसे होश आ जाना चाहिए।'

'मैं भी देख लूँ उसे ?' नर्स ने सर्जन के कमरे से निकलते हुए पूछा।'

'देख सकती हो। लेकिन उस युवती के साथ एक स्वयं सेवक बैठा है। उसे मेरे पास भेज दो।' सर्जन ने नर्स को सावधान किया।

'अच्छी बात है।' कहती हुई नर्स शील के वार्ड की ओर चली गई।'

रह गया सर्जन, जो सैकड़ों मरीज के चार्ट को बड़ी सावधानी के साथ देख रहा था। कैसे विचित्र लगते थे, वे प्राणी जिनकी हत्या हो चुकी थी। जिनका जीवन बदल चुका था। सहस्रों बच्चों और माताओं का सोहाग सदा के लिए मिट गया था। जिसे देखकर सर्जन का हृदय बैठा जा रहा था। प्रत्येक चार्ट को तस्वीरों को देखकर सहसा एक स्थान पर उसने देखा। एक छब्बीस वर्षीय युवक को तस्वीर चिपकी हुई थी। उसे देखते ही सर्जन का सिर घुम गया। अपने आप कुछ सोचना चाहता था कि डाक्टर ने निकट पहुँचकर पूछा—'सर ! आपने मुझे याद किया है ?'

'हाँ। वर्मा !' फिर चार्ट की तस्वीर की ओर संकेत करते हुए कहा—'इस तस्वीर को देखते हो ?'

'जी !' तस्वीर को हाथ में लेते हुए वर्मा ने कहा। फिर उस तस्वीर को ध्यानपूर्वक देख कर बोला—'यह तस्वीर तो राज भैया की है।'

'नहीं। यह तो नहीं कह सकता। हाँ उस जैसी लगती जरूर है। मेरा ख्याल है। वह इस भूकम्प में कहीं दब गया।'

'सो तो मुझे भी लगता है।'

'खैर ! डाक्टर हो। डाक्टर को धीरज नहीं खोना चाहिए। तुम्हारे मरीज की क्या हालत है। उसने करवट ली या नहीं ?' बात बदलने के अभिप्राय से उसने कहा।

'मरीज को दस बजे रात तक होश आने की सम्भावना है।'

'वैसे हालत तो उसकी ठीक है।'

'हाँ !' कोई विशेष चिन्ता की बात नहीं है।'

'अच्छा ! तुम अपने वार्ड में चलो। मैं राजू के विषय में टूककाल द्वारा पता लगा लूँ कि वह कौन है। राजू का कालेज भी बन्द हो गया होगा। कहीं उसे कुछ हो गया तो और मुसीबत आ पड़ेगी।'

'नहीं ! सर ! राजू भैया तो स्वयं चालाक है। वह कहीं न कहीं सुरक्षित अवश्य होंगे।'

'यह कैसे मालूम है आपको ?'

'तस्वीर यह साफ बता रही है कि वह इस मन्दिर के रक्षा के लिए लड़ा होगा।'

तभी सर्जन के कमरे की घन्टी टनटना उठी। डा० वर्मा ने दौड़ कर रीसीवर उठा लिया। फिर कान से लगाया तो आवाज आई—'आप कहाँ से बोल रहे है।'

'लखीमपुर कैम्प से ?'

आवाज सुनते ही दूसरे ओर से आवाज आई—'मि० गोपाल जी आपके यहाँ जो सीविल सर्जन न। उनको फोन पर बुला दें।'

उत्तर में उसने कहा—'आप कहाँ से बोल रहे हैं?'

'मैं कलकत्ता से बोल रहा हूँ। उनके लड़के को सख्त चोट आई है।'

'ओ! आप फोन पर ठहरो। मैं अभी अभी उन्हें बुला रहा हूँ।' कहकर आवाज बन्द हो गई।

डाक्टर वर्मा ने सर्जन को जाकर सूचना दी। पुत्र की दशा सुनकर सर्जन अपने गले में लटके हुए आला को उतार कर टेबुल पर रख दिया। पश्चात टेलीफोन को उठाते हुए आने वाली आवाज की प्रतीक्षा करने लगे। डा० वर्मा उनके सामने खड़े रहे। सहसा कलकत्ते एक्सचेन्ज आफिस के कर्मचारी ने सचेत करते हुए कहा—'आप मि० नरेन्द्र कुमार वर्मा।'

'जी! राजन कैसे हैं।'

'मैं ही हूँ राजन पिता जी। मुझे चोट अवश्य आई है लेकिन आप घबराए नहीं। सुबह को गाड़ी से मैं आप की सेवा में पहुँच रहा हूँ।

'गाड़ी से मत आना बेटा? हवाई जहाज से आ सको तो अच्छा है।'

'ऐसा ही करूँगा!' कहकर आवाज ने नमस्ते की और फोन रख दिया।

'उसके साथ ही सर्जन नरेन्द्र ने खुशी में उछल कर अपने दोस्त और सहयोगी डाक्टर की ओर देख कर कहा—'जावो वर्मा! उस रोगी की देख भाल करो। मेरा

राजन बच गया। समय और प्रकृति सब रोगियों को इसी तरह नई जिन्दगी दें।'

'बड़ी खुशी की बात है। अब राजन की शादी भी कर दीजिये ?' मुस्कराकर वह चला गया।

सर्जन एक क्षण तक खोया सा अपने बेटे का सुख स्वप्न देखता रहा। तब तक नर्स आ पड़ी। उसे कुछ चिन्तित देख नरेन्द्र ने पूछा—'कहो। रोगी की मूर्च्छा दूर हुई या नहीं ?'

'रोगी होश में आ गयी है। किन्तु वह अपने माँ बाप से मिलने के लिए तैयार है। साथ ही अपनी सहेली को याद करती है जिसका नाम रशीदा है।'

'अचेत अवस्था में वह जिसका-जिसका नाम ले रही है। सब लोगों का नाम नोट करलो। शायद वह रोगी अपने पूरे परिवार के साथ हो।'

'सो तो उसके साथ आने वाले स्वयं सेवक ने सब कुछ नोट कर रखा है। लेकिन एक बात समझ में नहीं आती, कि रशीदा का नाम क्यों बार बार लेती है।'

'तुम जिस वार्ड में काम कर रही हो। उसमें कोई मुसलमान की युवती है न ?'

'हाँ। वह शील नामक युवती से मिलना चाहती है।' कहकर नर्स आगे बढ़ना चाहती थी कि बाहर से चपरासी ने आकर एक कागज का टुकड़ा सर्जन के सम्मुख टेबुल पर रखते हुये कहा—'हजूर ! एक सन्यासी आप से मिलना चाहता है।'

'सन्यासी ?' कुछ चौंकर सर्जन ने पूछा। फिर चपरासी से कहा—'जाकर भीतर भेज दो उसे ?'

'भीतर।'

'हाँ। मैं उससे बात तो कर लूँ ।'

'आप भी अजीब आदमी हैं सर !' नर्स ने मुस्काते हुए सर्जन से कहा ।

'क्यों...

'सन्यासी कुछ चन्दा वगैरह माँगने आया होगा ।'

'हाँ चन्दा देना कोई नियम के विरुद्ध नहीं है नर्स ! आज इतने लोगों का घर द्वार जो छूट गया है। उनके जीवन और उदर की रक्षा के निमित्त प्रत्येक प्राणी अपने व्यय का एक अंश उनके हित दे दे तो कोई हानि नहीं ।'

'अरे साहब ! उस परिवार के साथ भी एक फकीर और सन्यासी थे जिनकी जिन्दगी कब की जन्नत में पहुँच चुकी है ।'

'वे मर गए !'

'हाँ ।' कहकर नर्स थर्मामीटर लिये अपने वार्ड की ओर चली गई।

इतने में चपरासी के साथ एक सन्यासी ने प्रवेश किया। सर्जन ने एकटक उसे देखा। उसके शरीर और चेहरे को देख कर ऐसा लगता था, मानों वह सचमुच सन्यासी है। उभरा हुआ सीना, चढ़ी हुई आँखें और चेहरे से सूखी टपक रही थी। सन्यासी चुपचाप आकर सर्जन के सामने की कुर्सी पर बैठ गया। थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद सर्जन ने स्वयं प्रश्न किया—'कैसे आपने तकलीफ किया ।'

'साहब। एक अर्ज है। मेरे गाँव के कुछ आदमी घायल होकर आपके वार्ड में आये हैं। मैं उनसे मिलना चाहता हूँ।'

'नाम ?'

'श्याम और कादिर। उसके साथ दोनों बेटियाँ भी थीं।'

'अपको कैसे पता चला कि वे लोग इसी कैम्प में हैं?' सर्जन ने विषय को आगे बढ़ाने के अभिप्राय से कहा।

'जिस रोज गाड़ी पटरी से उतरी है। उसी ट्रेन से उन लोगों ने मेरे एक साथी के साथ घर छोड़ा था। मुझे अभी तक ठीक पता नहीं। यदि आपके यहाँ इस नाम के कोई आदमी हों, तो उनसे मेरी भेंट करा दें।

'आपने जो नाम बताया है। उस नाम के कई मरीज हैं। फिर उनमें कितने मर चुके हैं। कैसे पता लग सकता है। हाँ! वार्ड में जाकर तुम सब को देख सकते हो। सम्भव है उनमें आपका कोई परिचित हो।' कहकर सर्जन ने टेबुल पर रखी घन्टी को टनटनाया तो बाहर से चपरासी ने बन्दगी करते हुये प्रवेश करके पूछा—'हजूर?'

'एक काम करो। सन्यासी जी को प्रत्येक वार्ड में घुमा दो। आपके सम्बन्धी भी इस दुर्घटना के शिकार हुए हैं?'

'आइए।' कहकर चपरासी ने सन्यासी को अपने साथ लिया और एक एक करके प्रत्येक वार्ड का निरीक्षण करना आरम्भ किया। परन्तु सन्यासी किसीको न पहचान सका। रशीदा के सामने से गुजरा लेकिन उसका पीला सा चेहरा देखकर उसे विश्वास नहीं हो सका। इसी तरह शील के कमरे से निकल गया। अन्त में विवश होकर वह प्रत्येक वार्ड से घूमता बाहर निकल आया।

पुनः सर्जन के कमरे में जाकर सावधान होकर बड़ी सोच भरी भाषा में बोला—'आपको शुक्रिया! वे लोग इस वार्ड में नहीं हैं।'

चपरासी के साथ ही सन्यासी बाहर निकल गया। तब उसके चेहरे पर एक अजीब और गरीब सी रेखाएँ नाँच रही थी। किसी भावी आशंका से उसका हृदय डोल उठा

था। पाँव लड़खड़ाये दोस्त को ढूढ़ने के लिये निकला किन्तु निराशा ने ही अपना हाथ और खोया सा सन्यासी शहर की ओर चला गया।

१३

फकरी ने जब हबीब रहमान और कादिर का साथ छोड़ दिया तो अस्पताल की ओर चला आया था। किन्तु हबीब अपने दोस्तों के साथ प्लेटफार्म पर ही बैठा था। तीनों बैठे गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहे थे कि स्टेशन मास्टर ने मुसाफिर को सचेत करते हुए कहा-'आप लोग। अपना अपना सामान ठीक कर लें। और सामने जो कम्पार्टमेन्ट लगा है। उसमें जाकर बैठें। गाड़ी सात बजे रातको यहाँ से छूट जायेगी।'

यात्रियों के दिल को तसल्ली हुई लोगों ने अपने अपने घर का काल्पनिक सुख देखा। यात्रा करना आसान होता है किन्तु मंजिल तक पहुँचना समय के हाथ है। फ़िर भी जो हताश हो चुके थे। उनके लिए इतना सुन लेना बहुत था। अन्य लोगों की भाँति हबीब और रहमान भी दोनों यात्रियों के साथ अपना कदम उस ट्रेन की ओर बढ़ाया।

गाड़ी के निकट पहुँचकर हबीब अपने दल बल सहित एक डब्बे में बैठ गया। उसके साथ ही अन्य बीसों यात्रियों ने भी अपना डेरा डंडा उसी डिब्बे में जमाया। फिर उस डिब्बे की दशा यों हो गई, मानों मुर्गी का दरबा हो। गाड़ी छूटने में अभी काफी देर थी। लेकिन जगह न मिलने के कारण लोगों ने रेला रेली लगा रखा था। देश की आजादी का असल फायदा वे लोग उठा रहे थे। उनका भी दोष नहीं था। कारण कि अपना जान सबको प्यारी होती है। लेकिन

हबीब अपनी जान बचाना नहीं चाहता था, बल्कि उन दो लड़कियों की रक्षा करना चाहता था। शहर में चल कर वह क्या करेगा। यह उसके दोस्तों को नहीं मालूम! इस लिए हबीब चुप था। सब की सुनता जा रहा था। भीड़ के कारण वैसे ही साँस लेने की फुरसत न थी। लोगों का दम घुट रहा था। कुछ लोग समाज में झूठी सच्ची खबरें छाप कर निकालने वालों अखबारों से पंखा कर रहे थे। यों ही पेच ताँव में पड़ा पड़ा हबीब से जब न रहा गया तो उसने कादिर से बातचीत आरम्भ कर समय काटना अच्छा समझा। अतः कादिर की ओर देख कर बोला—'कादिर! जरा घड़ी, तो देखना? कितना बजा है?'

'साढ़े पाँच।'

'ओह! अभी डेढ़ घंटे की देरी है।' हबीब ने नाक सिकोड़ते हुए उत्तर दिया।

'हाँ! तब तक सुनाओ कुछ पुरानी कहानी।'

'पुरानी कहानी क्या कहूँ। देखते हो। यह नई कहानी कितनी दर्दीली बनती जा रही है। मैं तो यही सोचता हूँ कि जाने शहर में पहुँचने पर कैसी मुसीबत आ पड़े।'

'मुसीबत क्या आ पड़ेगी? अरे अब तो अपना राज है। अपनी दुनियाँ है। अपने लोग हैं, फिर डर क्यों?' रहमान ने बीच में छेड़ते हुए कहा।

'ऐसा तो केवल तुम्हारा अपना सोचना है। दुनियाँ में कोई चीज किसी की नहीं होती, बल्कि सारे समाज की होती है। जिसे राज दुनिया और अपने को अपना समझते हो। वह केवल मिट्टी से ही बना है। जमीन ही सब की जननी है। उस जमीन पर प्रत्येक इनसान का बराबर अधिकार है। केवल अपने अपने समझ का फेर है।' क्यों भाई कादिर!'

'मुझे पता नहीं। हाँ। इतना अवश्य है कि तुम अपने जाति की बुराई हमेशा करते हो।'

'यह तुम्हारे मुँह से सुनकर मैं स्वयं चकित रह जाता हूँ। जाति और धर्म यह केवल एक दीवार की भाँति रह गया है। दुनिया इससे भी कहीं आगे बढ़ चली है। आदमी आदमी होकर भी केवल एक जाति का सहारा लेकर जानवर बन रहा है। दुनियाँ के चाल के साथ आदमी को चलना पड़ता है। पहले लोग पत्थरों के औजार से लड़ाई के मैदान में अपनी बहादुरी का परिचय देते थे। किन्तु अब दुनिया केवल बमों की लड़ाई पर आकर ठहर गई। हवाई ताकत की लड़ाई ही सब को कामयाबी हासिल करा सकती है।'

छोड़ो। यार तुमने कोई बात छिड़ी नहीं कि सारी दुनिया की बातों की तवारीख सुनाना शुरू कर देते हो!'

'तवारीख पर ही तुम्हारे जन्म और मौत की तारीख याद रहती है।'

'आगे बढ़कर बोलना भी कठिनाई के रूप में सम्मुख आ जाता है।'

हबीब अब कुछ न बोल सका। क्योंकि साँस धीरे-धीरे नीचे उतर पड़ी थी। गाड़ी में इंजिन लग गया था। सामने प्लेटफार्म पर गार्ड खड़ा झन्डी दिखा रहा था। हबीब की नजर उस ओर घूमी और उसने रहमान को सावधान करते हुए कहा—'रहमान! सामान ठीक कर लो। गाड़ी छूटने वाली है।'

'सामान ठीक है। तुम चिन्ता न करो।' रहमान ने हबीब को सावधान किया।

तब तक गार्ड की आखिरी सीटी हुई और ट्रेन उस स्टेशन को छोड़कर आगे बढ़ी। अब लोगों की जान में जान

आई। गर्मी और प्यास भी कम हुई। और गाड़ी एक स्टेशन को पीछे छोड़ती दूसरे की ओर भागने लगी।

सुबह दस बजते बजते ट्रेन ढाका जकशंन पर पहुँची। रहमान अपने साथियों के साथ प्लेटफार्म पर उतर पड़ा। स्टेशन से बाहर निकल कर टाँगा किया और अपने निवास स्थान पर पहुँच गया। हबीब शहर में लगी दुकानों और सवारियों को देखता जा रहा था। ढाका शहर में अब वह रौनक थी। सदियों से व्यापार का केन्द्र ढाका अपनी जर्जरावस्था में पड़ा कराह रहा हो। ऐसा हबीब ने महसूस किया। अतः रहमान से बोला—'यार! शहर की रौनक क्यों मारी गई!'

'अरे। यह तो होता रहता है। समाज और संसार के बदलने के साथ साथ शहर और गाँवों का वातावरण भी बदल जाता है। क्यों, तुम्हें शहर अच्छा नहीं लग रहा है क्या?'

'अच्छा लगने की बात नहीं! आज से तीन वर्ष पहले जब मैं ढाका आया था कितना अमन चैन था। शहर कितना गुलजार और ाबाद लगता था। लेकिन अब उसकी दशा कुछ अजीब सी मालूम पड़ रही है।'

तब तक टाँगे वाले ने चौराहे की मोड़ पर घोड़े को मोड़ते हुए पूछा—'हजूर कितनी दूर होगी आपकी बस्ती?'

'बस सामने वाली गली के पास टाँगा रोक दो।' उसके आगे रास्ता नहीं है।' रहमान ने टाँगे वाले से कहा।

टाँगे वाले ने अपने घोड़े की बागडोर खींच ली। च च च करते ही उसका घोड़ा ठहर गया। रहमान अपने साथियों के साथ नीचे उतर पड़ा। पश्चात् सामने खड़े एक कुली को

बुलाकर सामान उठाया और मकान की ओर चल पड़ा। टाँगो वाला अपना भाड़ा लेकर चलता बना।

मकान पर पहुँचते-पहुँचते दिन के दस बज गए। रहमान ज्योहीं अपने मकान पर पहुँचा। इसके पास पड़ोसियों ने दुआ सलामत की भरमार कर दी। आपस की पूछ ताछ के बाद उसने अपने मकान का ताला खोला। दूकान जिसके सुपुर्द कर गया था। जब वह आया, तो उससे हबीब और कादिर का परिचय कराया। तभी दोनों युवतियों की ओर उसकी दृष्टि घूम गई। और हबीब को छेड़ते हुए उसने कहा—'यह मुर्गी कब से पाल ली उसने ?'

'अरे यार। यह मुर्गियाँ मेरी नहीं हैं, बल्कि हबीब और कादिर भाई ने पाल रखी है। ये लोग हमारे बचपन के साथी है। गाँव से काम वगैरह के लिये यहाँ आए हैं।'

'बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर।' इस युवक ने हबीब और कादिर से हाथ मिलाया।

अन्त में रहमान ने अपने मकान के भीतर सब के साथ पाँव रखा। एक महीने की अनुपस्थिति के कारण मकान के हर घरों में मानों गर्दा जम गया था। जिसे देखते ही रहमान हबीब की ओर देखकर कहा—'कहो! इन लोगों से, वे इस घर को अपना समझें ?'

दोनों युवतियां ने बात सुन ली। और चुपचाप एक कमरे की ओर बढ़ी। रहमान स्वयं बैठक में चला गया। बाहर आकर हबीब कादिर के खाने पीने का इन्तजाम करने के लिये अपने दोस्त को बुलाया। फिर उसे प्रत्येक चीजों को जल्दी से जल्दी इन्तजाम करने के लिए कहकर, स्वयं गोपी के यहाँ चला गया। खाने पीने की जरूरी चीजे मँगाकर उसने भीतर भेज दिया।

और उस दिन के बाद तीनों एक दोस्त की तरह रहने लगे। किन्तु रहमान की नीयत, उसकी कामुक आँखों ने तीनों में मतभेद कराके ही छोड़ा। हबीब और कादिर के लिए यह स्थान नया था। ढाका शहर उसके लिये बिलकुल नया था। नई रोशनी और नई सड़कों को देखकर हबीब तो इतना अधिक आश्चर्य की खाई में न डूब सका। किन्तु कादिर भौंचक्का सा रह गया था। इसकी आँखें बड़ी अट्टालिकाओं को देखकर चकित रह गई थी। हबीब जब कभी एकान्त पाता तो कादिर को साथ ले घूमने के लिये चल पड़ता। रहमान अपनी दूकान की देखभाल करने लगा! साथ ही हबीब और कादिर की होने वाली पत्नियों का पूरा ख्याल रखता। उस मेहमानी और आदर सम्मान में उसका क्या छिपा था। अथवा किस स्वार्थ के वशीभूत हो, रहमान दोनों युवतियों की अधिक देख भाल करता। सम्भवतः हबीब और कादिर इस रहस्य को न समझ सके। दिन ब दिन तीनों की दोस्ती सीमा पार करती गई।

१४

'आज तुम्हारी पट्टी खुल जायेगी।' नर्स रशीदा के समीप खड़ा हो, उसके काले बालों को सहलाते हुये कहा।

'सच! बहिन!' रशीदा की उत्सुक आँखे नर्स की आँखों में समा गई! मानों अपने जीवन को छुटकारा पाकर उसका हृदय गदगद हो उठा हो।'

'हाँ। आज सर्जन साहब ने आज्ञा दे दी है कि हर मरीज की पट्टी खोलकर उसे बाग में टहलाया जाय!'

'बैठो ! बहिन !' तुमने मेरा काम तो नहीं किया न ?' रशीदा ने नर्स का हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचा, तो नर्स उसके निकट ही बैठ गई।

फिर उसके चोट की ओर देखती हुई बोली—'घाव तो भर गया है। खैर ! अस्पताल से जाने के बाद रोगी भूल जाते हैं !' नर्स ने उदासीन होकर कहा।

'हाँ ! अस्पताल तो इनसान को नई जिन्दगी देने वाला कुदरत का दूसरा घर है। कितना अच्छा है। तुम लोगों का जीवन। दूसरों की सेवा करना। एक जिन्दगी को बरबाद होने से बचाकर उसके परिवार को सुख और शान्ति की सीमा पर पुनः ले जाना। कितना अच्छा है !'

'हाँ ! जो जिसने किसी स्थान या विषय का अनुभव नहीं किया। उसे दूसरे का विषय और काम अच्छा लगता है। लेकिन काम कोई न अच्छा होता है न खराब, बल्कि अपने रुचि का प्रभाव है। जिसकी जैसी रुचि होती है। वह किसी न किसी दिन अपनी निर्धारित की हुई सीमा पर पहुँच कर ही रहता है।'

'यह तुम दर्शन की बातें करती हो ! मेरी समझ में कुछ नहीं आती। मैं तो स्वयं चाहती हूँ कि अब नर्स बन जाऊँ।'

'नर्स बन जाऊँ। ऐसा कभी-कभी सोचती हूँ।'

'और तुम्हारे परिवार के लोग...।' नर्स ने पूछा ?

परिवार का नाम सुनते ही रशीदा का चेहरा जाने क्यों कुछ उतर सा-गया। लेकिन क्षण भर में उसने अपनी मनो-दशा को सम्भाल लिया। लेकिन दुख से बोझिल बादल तो बरस कर ही रहते हैं। रशीदा की आँखों में भी कुछ उमड़ आए। और रशीदा के लेटे-लेटे गालों के दोनों आँसू ओर बह

चले। नर्स यह देखकर कुछ न समझ सकी। उसने अपने रूमाल से उसके गालों पर लुढ़के हुए दो मोती के बिन्दु कण को उठाते हुए पूछा—'अरे। तुम तो रोने लगी। मेरी बातें कुछ काँटे सी चुभ तो नहीं गई ?'

'नहीं-नहीं, बहिन ! चुभेगी क्यों ? परिवार के विषय में पूछती हो न, तो मेरे वे परिवार तो कब का नाता छोड़ दिया है मुझसे। अब मैं केवल अकेली हूँ।'

'लेकिन उस रोज तुम शील नामक लड़की को पूछ रही थी। यह सब कौन हैं।'

'वह मेरी सहेली है। उसके परिवार के साथ ही मैं रहती थी। लेकिन अब तो उसने भी साथ छोड़ दिया है। और इस दुनियाँ में अकेली रह गई हूँ।'

'और तुम्हारे वे...।' नर्स ने उससे कुछ दबी जबान में पूछा।

रशीदा लजा सी गई। फिर संयम और सचेत होकर बोली—'वे। वे तो अपना बनकर भी बेगाना बन गए। हम दोनों के विचार आपस में एक दूसरे से भिन्न थे।'

'तो तुम अपने पति से झगड़ा भी करती थी ?'

'नहीं। मेरी सगाई हुई थी। शादी नहीं हो सकी थी।'

'तो तुम दूसरी शादी भी तो कर सकती हो ?'

'हाँ। लेकिन यह बचपन का लगाया पौधा, इतनी जल्दी कैसे उखाड़कर फेंक दिया जाय, बहिन। योजना सोचती हूँ। देखती हूँ। दुनियाँ में औरत एक पुरुष के लिए अपना सब कुछ त्याग कर देती है लेकिन पुरुष फिर भी अपनी चालाकी से नहीं बाज आता। औरत को वह अपनी दोस्त या एक घनिष्ट मित्र समझ कर उसे आनन्द का एक साधन समझता है। उन्होंने भी मुझे एक औरत समझ कर अपने मन की किया।'

'तो क्या तुम घर से झगड़ कर चली जा रही थी ?'

'नहीं। गाँव में आपस की कलह ने अपना घेरा डाला। मैं इनसानियत का पक्ष लेकर लड़ी और वे चन्द गुमराह करने वाले लीडरों के साथ रहे। बस इतना ही काफी होगा।' कहती कहती रशीदा की नीली आँखों पर आँसुओं का एक परदा पड़ गया।

जिसे देखकर नर्स से न रहा गया। वह उठती हुई बोली—'अच्छा! अब आराम कर लो। अभी तुम्हारी तबियत अच्छी तरह ठीक न हो सकी है। साथ ही भरोसा ही भगवान का दिया हुआ वह सहारा है, जिसके आधार पर तुम विश्वास और साहस के साथ मंजिल की आखिरी सीमा पर पहुँच सकती हो। अगर तुम सच्चे दिल से उन्हें प्यार करती हो, तो उनका दर्शन अवश्य होगा।'

'यह तो मैं भी सोचती हूँ, लेकिन...

'लेकिन वेकिन कुछ नहीं। इस समय तुम आराम करो।' कहती हुई नर्स वार्ड के बाहर निकल गई।

रह गई रशीदा जो तरह तरह के विचारों में पड़ी रही। दिन काफी चढ़ आया था। अस्पताल के कैम्प से प्रत्येक रोगियों को बाहर लाकर पड़ी चारपाई पर लिटा दिया गया था किन्तु रशीदा ने बाहर जाने से इनकार कर दिया। वह चुपचाप अपने कमरे में लेटी लेटी जाने क्या सोचती थी कभी शील की आँखें तो कभी उसके पिता श्याम और माता का एकाएक अलग हो जाने के विषय में वह चिन्तित हो उठती। इसी पशोपेश में पड़ी जब उसने करवट ली तो नर्स ने पुनः कमरे में प्रवेश किया और उसके बेडिंग के समीप आकर बोली—'तुम बाहर नहीं चलोगी ?'

'नहीं। बाहर जाने की तबियत नहीं। आवो न बैठो इस समय ड्यूटी पर हो या खाली हो ?'

ड्यूटी तो मेरी सुबह खतम हो गई। केवल तुम्हारे कहने से चली गई। तुमसे कुछ अपना दिल मिल गया है कि अलग होना ही मैं नहीं चाहती ?'

'सो क्यों। मैंने तो तुम्हारे साथ कोई भलाई भी नहीं की, फिर...

'भलाई और बुराई का प्रश्न नहीं उठता। तुम्हारी तरह मेरी एक बहिन को गायब हुए आज माह बीतने को आए। इसलिए सोचती हूँ। न जाने वह कहाँ होगी। तुम्हारी ही तरह क्या कहीं जीवित होगी ?' नर्स की आँखों में एक विषाद की रेखा खींचीं जिसे देख कर रशीदा का मन कुछ उथल पुथल सा होकर रह गया।

वह कुछ कहना चाहती थी कि नर्स पुनः बोल उठी—'क्यों। एकटक क्यों देख रही हो ? मेरा चेहरा भयानक लग रहा है क्या ?'

'नहीं ! तुम्हारे चेहरे पर एक सच्चे हमदर्द और साथी की तरह कुछ ऐसी रेखायें नाच रही है, जिसे देखकर मेर मन बाँसों उछल रहा है।'

'सच !' कहती हुई नर्स उससे चिपक गई।

शील के बाद अपनी सहेली या बहिन जैसा यह प्रथम प्यार मिला। रशीदा का गला भर आया। वह चारपाई से उठ बैठी। नर्स को अपनी गोद में छिपाती हुई बोली—'रोवो न बहिन। यह तो दुनियाँ है। आदमी तो इस मुसाफिर खाने में एक पड़ोसी की तरह कुछ दिन रहता है, फिर अपना मकान छोड़कर चला जाता है। जब तक वह तुम्हारे

साथ रही तब तक तुम्हारी रही। जाने के बाद कौन किसका साथ देता है।'

'लेकिन वह गई कहाँ? वह तो एक मुसलमान भाई के घेरे में पड़ गई।'

'घेरे में पड़ गई! यह क्या कह रही हो तुम?

'सच कह रही हूँ, बहिन। गाँव से मेरे कुछ सहेलियों ने पत्र लिखा है कि तुम्हारी बहिन एक मुसलमान के हाथ पड़ गई है। और मेरा अनुमान है कि उसके साथ उसने निकाह भी कर लिया हो।'

'तुम्हें यह कैसे पता चला। तुम्हारी वह सहेली कहाँ रहती है?'

'वह सहेली बँगाल के छोटे से गाँव की है।

'बँगाल की है वह?' रशीदा ने उत्सुकता प्रकट की।

'हाँ। मेरा मकान भी तो वहीं है। मोहन गाँव का नाम सुना है तुमने?'

'हाँ। मेरा निवास स्थान भी वहीं है।'

'मोहना की रहने वाली हो तुम?' खुशी में नर्स उछल पड़ी।

'हाँ, लेकिन वहाँ तुम्हें मैंने कभी नहीं देखा!'

'मेडिकल से पास करने के बाद मैं कलकत्ता के एक अस्पताल में नर्स हो गई थी। आरम्भ से ही मेरे चाचा यहाँ रहते थे। थोड़ा परिवार गाँव में रहता था। इस तरह जो लोग शहर में थे, वे किसी न किसी रूप में बच भी गए, लेकिन गाँवों में शासकों ने जी भर कर शोषण किया। उसी शोषण में मेरा परिवार भी...।

'क्या नाम था उसका?'

'निर्मला!' नर्स ने पूछा।

'तुमने सरकार को सूचना दी है न ?'

'हाँ। सरकार अपने तई बहुत लोगों को खोज कर निकाल चुकी है। उसका नाम भी मैंने भेज दिया है। देखूँ क्या होता है।'

'होगा क्या! अगर मोहना के किसी व्यक्ति के पास तुम्हारी बहिन होगी, तो मैं उसे निकाल लाऊँगा।

'निकाल कर भी क्या करोगी, जब की समाज उसे स्वीकार नहीं कर सकता। मेरे समाज में तलाक का इन्तजाम नहीं है। जीवन में एक बार ही कोई युवती किसी का हाथ पकड़ सकती है। फिर...।

'इसे तो मैं पसन्द करती हूँ। मेरे मजहब में तलाक है, लेकिन यह मनुष्य के चरित्र को दुर्बल बना देता है। न पुरुष पुरुष रह जाता है, और न नारी नारी! दोनों की अविश्वास भावना को ही हम तलाक कह सकते हैं। अपने अपने विचारों का अलग अलग मार्ग होता है। किन्तु मैं इसमें विश्वास नहीं करती।'

'क्यों! मान लो तुम्हारे वे अगर जीवन भर न मिले,, तो ' ?'

तो मैं तुम्हारी तरह इस अस्पताल में सैकड़ों की सेवा करूँगी।' जीवन में जिसे एक बार अपना माना और जाना उससे अलग होकर केवल इच्छाओं की पूर्ति करना ही नारीत्व नहीं है।'

'एक बात कहूँ बहिन! मुझे ऐसा लगता है कि तुम हिन्दू बाला हो। क्योंकि उर्दू के साथ साथ हिन्दी भी तुम अच्छी तरह से बोल लेती हो।'

मेरे गाँव में हिन्दी स्कूल था। उसे मेरी सहेली जो शील थी न। उसके पिता ने ही उसे बनाया था। उस स्कूल में हिन्दी -

और उर्दू साथ साथ पढ़ाया जाता था इसलिए यह कोई आवश्यक नहीं है। फिर अब हिन्दी उर्दू का प्रश्न नहीं है। अब तो हम दोनों की सभ्यता ने एक दूसरे का कुछ ऐसा ले दे लिया है कि उसका बहिष्कार कठिन सा जान पड़ता है। मेरे ख्याल से तुम्हें भी अब इस विचार को अपने दिमाग से निकाल देना चाहिए।'

'नहीं नहीं। मैं तो ऐसा कभी नहीं सोचती। मेरा कर्तव्य है, प्रत्येक व्यक्ति के दुख के साथ खेलना। उसे धीरज और शान्ति देना। मल मूत्र और पीब भरे नर्क को साफ कर व्यक्ति को एक नई जिन्दगी देना! मैं माँ भी हूँ। बहिन भी हूँ। प्रेमिका भी हूँ मनुष्य रुग्णा अवस्था में जैसा भी समझ ले!'

'समझने की बात क्या है? जो चीज आँखों के सामने हो। उसे समझने की आवश्यकता नहीं! जो चीज देखी और परखी हुई हो उसके विषय में किसी से पूछना और उसके प्रति अविश्वास करना ही इनसान की जिन्दगी को तरक्की करने से रोक देती हैं। तुम ऐसा न समझ लो! नर्स तो मनुष्य को नई जिन्दगी देने वाली एक ऐसी शक्ति है जिसके द्वारा हम लोग एक बार पुनः जीवित हो उठते हैं। फिर ऐसा क्यों सोचती हो?'

'सोचने की क्या बात है। तुम सचमुच बड़ी अच्छी हो।'

'जैसी समझ लो। फिर अपनी कलाई पर चिपकी घड़ी की ओर देखकर बोली—'अच्छा! अब चल रही हूँ। दूसरे वार्ड में एक तुम्हारी जैसी ही रोगणी है। बड़ी अच्छी है।'

'तो उससे भी तुमने दोस्ती करली है?' यशोदा ने पूछा।

'हाँ ! आजाद विचार वालों से जाने क्यों मेरा मन बार बार बात चीत करने के लिए आतुर हो उठता है।'

'सो तो तुम्हारे देखने से ही मालूम होता है।'

'अच्छा चलो।' कहकर नर्स दूसरे वार्ड की ओर चलना चाहती थी कि रशीदा ने उसे रोकते हुए प्रश्न किया—'बहिन एक बात बताओ।' इस रोगी का क्या नाम है ?'

'नाम तो यह अपना शील बताती है। उसके पिता का नाम श्याम है।'

'श्याम ?' रशीदा ने चौंकते हुए पूछा।

'रशीदा के चेहरे पर विस्मय की रेखाएँ देखते ही नर्स को लगा, जैसे उसके वाक्य ने रशीदा के हृदय में पहुँचकर बिजली सा प्रहार तो नहीं किया। जिसके परिणाम स्वरूप वह चौंक पड़ी है। अतः रशीदा के निकट जाकर बोली—'तू चौंक क्यों रही है।

'कुछ नहीं ! मेरी सहेली का नाम शील था न ?'

'तो वही तो नहीं है।'

'कौन जाने ?'

'अच्छा मैं पता लगा लूँगा ! तुम बेफिक्र होकर आराम करो। मैं रात को आऊँगी !'

कहकर नर्स चली गई। रशीदा चारपाई पर लेट बगल में एक टेबुल पर रखी पत्रिका को पढ़ने लगी। पत्रिका उर्दू की थी।

प्रायः अच्छे अस्पतालों में रोगियों को जी बहलाने के लिए कुछ ऐसी पत्रिकाएँ रखी जाती थी जिनको पढ़कर रोगी की चेतना कुछ जाग सी जाती थी। प्रतिमास भारत के कोने-कोने से पत्र पत्रिकाओं का जमघट सा लग जाता। हिन्दी जानने वालों के लिए हिन्दी की पत्रिकाओं

का प्रबन्ध था और उर्दू वालों के लिए उर्दू की पत्रिकाओं का प्रबन्ध था। रशीदा को प्रतिक्षण कोई न कोई पत्रिका मिल जाती। किन्तु आज की पत्रिका में एक लेख निकला था। उसे देखते ही रशीदा का मन किसी जंगल की ओर भटक गया था। उसे लगा कि इस लेख का लेखक हबीब तो नहीं है! लेकिन उसने तो कभी कोई लेख लिखा नहीं। इसलिए रशीदा उस कहानी को कई बार पढ़ गई थी। कहानी पढ़ते-पढ़ते इस सीमा पर पहुँची कि वह कहानी उसके अन्तर के पानी से सींच सींच कर बनी है। काश! हबीब उसका साथी हो सकता। और तब एक एक करके हबीब के साथ अपने बचपन और जीवन की सुखद स्मृतियों की छाया सामने से चल चित्रों की तरह गुजरती जा रही थी। कभी आकाश की ओर उसकी दृष्टि जाती तो वह उसे लगता, मानों विचारों के बादल के बरसने से वह भीग कर बह जायगी। और जीवन भर हबीब को न पा सकेगी। फिर क्या होगा। अगर हबीब उसका विश्वास न करे तो! तब रशीदा भी अपना रास्ता बना लेगी। लेकिन अगर हबीब ने सच्चे दिल से इस्लाम को मान लिया होगा। तब मैं उसके पैरों पर गिर कर उसका स्वागत करूँगी। और तब!... ऐसे ही जाने क्या क्या सोचती। वह अलग हो गई विचारों से। ध्यान टूट गया। पुनः पत्रिका उठाकर पढ़ने लगी।

१५.

दूसरी ओर नर्स जब शील के वार्ड में पहुँची, तो शील अपने बिस्तर के साथ चिपकी सामने खड़े स्वयं सेवक से बातें कर रही थी। स्वयं सेवक के सम्मुख सर्जन का लड़का

खड़ा था। उसे देखते ही नर्स ने राजन की ओर बढ़कर पूछा — 'राजन ! बाबू ! नमस्ते।

'नमस्ते। ओ लेवा ! कहो। कैसे हो ?' राजन ने लेवा के बालों पर हाथ फेरते हुए कहा !' ओ अंग्रेजी सभ्यता में प्यार कहा जाता है।

'ठीक हूँ राजन बाबू। आप ने तो नई जिन्दगी . ।'

'हाँ ! लेकिन पिता जी अकसमात यहाँ कैसे आ गए लेवा ?'

'सरकार ने घायल व्यक्तियों के लिए जो कैम्प बनाया है न उसके रोगियों को इलाज करने के लिए भेजा है।'

'और कौन कौन आया है ?'

'मौसी भी आई है।'

'कहाँ है वह ?' राजन ने आश्चर्य चकित होकर पूछा।

'आप तो अजीब सी बातें करते हैं, राजन बाबू ? साहब से आपने नहीं पूछा ?'

'नहीं अभी आ रही हूँ। पिता जी से मिलने गया, तो उन्होंने कहा है वार्ड के रोगियों की देख भाल कर।' अतएव मैं चला आया।'

'क्यों। और वार्ड को देख लिया आपने ?'

'हाँ।' फिर शील को ओर दृष्टि फेर कर कहा—'इस रोगी की अवस्था कितने दिन से ऐसी है।'

ट्रेन दुर्घटना में इसके कलेजे पर आघात पहुँचा था। उसी से इसको बुखार आ रहा है। अब तो काफी ठीक प्रभाव हो गई है। नहीं तो दो रोज तक इसको होश नहीं आया।'

नर्स की बात पूरी भी न हो पाई थी, कि राजन ने शीली की कोमल कलाइयों को पकड़ कर एक बार नब्ज

को गति देखी। फिर नर्स की ओर देख कर कहा—'बुखार नहीं है। अब रोगी को अस्पताल से छुटकारा मिल जानी चाहिए।'

'हाँ। साहब ने कल इनको छुटकारा देने की सूचना दी है। लेकिन मेरा ख्याल है कि अभी कमजोरी काफी है। फिर इसका परिवार भी नहीं और न कोई अपना सगा सम्बन्धी है। सरकार उन्हें कहाँ स्थान दे रही है ?'

'कलकत्ता !' तुम प्रत्येक रोगी से उसकी इच्छानुसार राय ले लो ! कौन कहाँ जाना चाहता है ?'

'अवश्य !' नर्स ने उत्तर दिया।

राजन स्वयंसेवक के साथ दूसरे वर्ड की ओर पाँव बढ़ाया। तभी स्वयंसेवक ने राजन की ओर उत्सुक नेत्रों से देखा। फिर राजन को अँगुली पकड़ कर झक-झोरते हुए बोला—'आप इन लोगों को कहाँ भेज रहे हैं ?'

'कलकत्ता ! अस्पताल के प्रत्येक कर्मचारी को इक्कीस तारीख तक कलकत्ता पहुँच जाना चाहिए।'

'यह कोई आवश्यक तो नहीं है ?'

'आवश्यक है ! आप कौन हैं ?'

'मैं स्वयं सेवक हूँ।'

'तो आप को और सेवा करनी चाहिए।'

'लेकिन !'

'लेकिन वेकिन कुछ नहीं ! स्वार्थ की भावना लेकर सेवा नहीं हो सकती ! आखिर किस भावना से आप रोगियों को रोकना चाहते हैं ?'

'भावना ! कुछ नहीं है। मेरा ख्याल था रोगियों के शरीर में अभी तक कमजोरी काफी है। बस और कोई बात नहीं।' कहते हुए स्वयं सेवक भी एक ओर हट गए।

सम्भवतः राजन ने उनकी विचार धारा को समझ लिया था। स्वयं सेवक की आँखों में कामना की जो लहर उमड़ पड़ी थी। राजन से वह अदृश्य हो कर न रह सकी। उसकी मुद्रा पर उभरी इर रेखाओं ने भली भाँति स्पष्ट कर दिया था कि स्वयं सेवक की आत्मा निस्वार्थ की सीमा पर नहीं थी, बल्कि अपनत्व और अहं की भावना से उसके हृदय की शक्ति शिथिल पड़ गई थीं। राजन से खरा सा उत्तर पा कर वह अब रह गया। चुपचाप पुनः उस वार्ड को ओर लौटा, तो देखा कि नर्स शील से हिलमिल कर बातें कर रही थी। अतएव निराश होकर उसे वापस लौटना पड़ा। चुपचाप वार्ड के पीछे आकर शील और नर्स की वार्ता सुनने के हित एक स्थान पर खड़ा हो गया।

सहसा नर्स की आवाज आई! नर्स कुछ तेजी के साथ शील से बातें कर रही थी। स्वयंसेवक पुनः निकट आया। समीप पहुँचते ही उसने सुना नर्स ने शील से कहा—'तो तुम उसे वार्ड में क्यों आने देती हो?

'उसने हम लोगों की जान बचाई है, बहिन! रक्षा करने वाले रक्षक का बर्ताव चाहे कैसा भी हो, परन्तु अपनी ओर से कोई अनिष्ट नहीं करना चाहिये। दुश्मनी और ईर्ष्या की भावना ने आज की दुनियाँ को आगे बढ़ने से रोक रखा है। उसने हमारी जान बचाई है। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मेरी आत्मा का वह अधिकारी है। सेवा उसका फर्ज है। यदि फर्ज समझकर उसने ऐसा न किया, तो वह स्वार्थी है।'

'यह कैसे जानती हो।'

'उसकी बातें। उसका हाव भाव और उस की क्रियाओंको देखकर ऐसा लगता है, कि उसकी भावना कुत्सित होगई है।'

'तो उसने मेरी सहेली को छेड़ दिया है।' नर्स ने शील की दाईं बाह में चिकोटी काटते हुये पूछा।

'छोड़ो भी लेवा वहिन ! मुझे आदमी की परख खूब है। स्वयं सेवक से निस्वार्थ भाव से केवल सेवा करती है। फल की आशा से जो सेवा की जाती है। उसमें स्वार्थ की गन्ध पैठकर कीड़ा उत्पन्न कर देती है और तब परिणाम यह निकलता है कि बिषवत विचारकलुषित की सीमा पार कर जाते हैं। देखो न। मैं बीमारी से मर रही हूँ। और उस काहिल को अपनी शादी की पड़ी है।'

'ओ, तो वह मेरी रानी से शादी करना चाहता है। इसीलिये रोज रोज अपने पैरों को तकलीफ देता था !'

'हाँ। ऐसा ही समझ में आ रहा है। फिर क्या सोच रही हो। अच्छा तो है। इस तरह न जाने कहाँ कहाँ भटकती फिरोगी। एक जीवन साथी मिल जायेगा। बस उसके साथ अपना जीवन काट लोगी।'

'जानवर सा जीवन काटकर, केवल पेट भर कर और खुशी का खजाना लुटाते हुए दुनियाँ को छोड़ देना कोई मनुष्यता नहीं।'

'सो तो मैं समझती हूँ। परन्तु बिना विवाह के जीवन को कुछ अजीब सा रहता है शीलो बहिन ?'

'इससे मैं सहमत हूँ किन्तु इस युग में जब पुरुष विवाह को अधिक श्रेय नहीं देता, तब नारी ही क्यों सदा उसके पीछे-पीछे भागती रहे। जानती ही हो। पुरुष और नारी को लेकर आज इतना बड़ा लोक फैला है। नारी के आकर्षण पर ही आज विश्व की धुरी घुमी रही है। स्वयं सेवक ने जैसी धारणा बना ली है। उसकी धारण निर्मूल है।'

'लेकिन जब तक पृथ्वी किसी वस्तु को आकर्षित नहीं करती तब वह वस्तु उसके समीप नहीं आती।'

'किन्तु मैं पृथ्वी नहीं हूँ। मनुष्य हूँ। मैं जान बूझकर आग में अपना पैर नहीं रख सकती।'

'तो तुम्हें कहता कौन है।' आग में पैर रखना कोई नहीं चाहता। फिर भी पाँव अपने आप पड़ जाता है शील।' आर्कषण पर दुनियाँ स्थिर है। आर्कषण ही तो एक ऐसी वस्तु है कि जिसके आस पास दुनियाँ घूमती घूमती आज इस सीमा पर पहुँच गई है। खैर। छोड़ो इन बातों को। एक दिन तुमने कहा था—मेरी सहेली रशीदा को बुला दो।'

'हाँ! हाँ! वह अस्पताल में आई थी।'

'आई नहीं थी। इसी अस्पताल के साथ एक दूसरे कैम्प में तेरी तरह एक सेगर है, जो अपना नाम भी रशीदा बताती है।'

'रशीदा! रशीदा! कहाँ है बहिन!' कहती कहती जाने कस उत्तेजना में आकर उठ गई। जाने क्यों। शीघ्रता से उठ कर जब नर्स से मिलने के लिये उठी तो नर्स ने अपने हाथों से सम्भालते हुये कहा—'तुम इस तरह उतवाले पन में क्यों आ रही हो।'

नर्स की बात सुनते ही शील की उत्तेजना शिथिल बन कर रह गई। पुनः चारपाई पर लेटती हुई बोली—'उत्तेजना नहीं।

बहिन! वह मेरी सहेली रशीदा ही होगी।'

'तो इसमें घबड़ाने की कोई आवश्यकता नहीं। तुम इस वक्त चलो। मैं उससे मिला दूँगी।'

'सच।, बहिन!'

'और नहीं तो क्या झूठ।' चलो न। अभी अभी वह बाहर घूम लेने के लिये निकली है।'

'कितनी दूर है वह कैम्प।'

'केवल कुछ गजों का फासला है। अगर तुम चल सकती हो तो चलो।'

जाने कहाँ से शील के शरीर में शक्ति आ गई। उसने उठकर नर्स का सहारा लिया। यद्यपि अब शरीर में किसी तरह की कमजोरी नहीं थी। शील का शरीर भी स्वस्थ हो चला था। अतएव अपने बेडिंग से उठकर चल पड़ी। नर्स ने सहारा देकर रशीदा के कैम्प की ओर पाँव बढ़ाया।

तब साँझ होने चली थी। अस्पताल के कर्मचारी बाहर पड़ी हुई चारपाइयों को उठाकर कैम्प के भीतर रख रहे थे। नर्सों ने प्रत्येक रोगियों का टेम्पचर लेना आरम्भ कर दिया था। रशीदा की चारपाई उठाकर एक कर्मचारी ने कैम्प के भीतर रख दिया था। रशीदा अध करवटी लेटी अन्य रोगियों की ओर देख रही थी कि सामने से लेवा आती दीख पड़ी। उसके पीछे एक युवती चली आ रही थी। युवती का वेष भूषा तथा शरीर की मलिनता देखकर ऐसा लग रहा था, मानों रशीदा ने उसे कहीं नहीं देखा है। किन्तु रोगी होने के कारण वह उस चेहरे को पहचानने में असमर्थ है। किन्तु निकट पहुँचते ही उसने अपनी चारपाई छोड़दी और चीखती हुई खुशी में उछल कर बोली—'बहिन शील।'

शील की शक्ति में बिजली सी कोई ताकत दौड़ गई। नर्स का कन्धा छोड़कर वह दौड़कर रशीदा से चिपक गई। सहेलियों को इस मिलन को देखकर लेवा का हृदय गदगद हो उठा। बीच में टोकती हुई बोली—'अरे! मिलाप तो तुम लोगों का हो गया। अब इसकी मजदूरी क्या...।'

'मजदूरी ! बहिन ! इस समय हम लोगों के पास है क्या ? इस हृदय को सदा-सदा के लिए तुम्हें दान करती हूँ। 'रशीदा ने नर्स की कोमल अंगुलियों को अपने हाथ में पकड़ते हुए उत्तर दिया।

'नहीं! भाई। यह हृदय दान का सौदा मेरे लिए नहीं है। मुझे तो मिठाई चाहिए।'

'अच्छा मिठाई मिलेगी ?'

'तो मैं चलो ! मरीज को देखना है। आज रात की ड्यूटी है फिर मिलूँगी।' कहकर नर्स चली गई।

रह गया रशीदा और शील ! कितनी खुशी में थी आज वे दोनों। रशीदा की चारपाई पर बैठती हुई शील ने पूछा— 'क्यों ? तुम तो अच्छी रही ?'

'अच्छी क्या रही खाक ! चाचा चाची कहाँ है ?'

माँ बाप की बात सुनते ही शील की घिग्घी बंध गई। शील को रोते देख रशीदा की आँखे भी अनायास ही उमड़ पड़ी। पश्चात अपने आँचल से शील की आँखों को पोछते हुए उसने कहा— 'अरे ! रोती क्यों है तू।'

'भाग्य और संयोग के बीच रेखा खींचना कठिन है रशीदा ! जीवन में जिस वस्तु की हम लोगों ने कल्पना की वह कभी यथार्थ के रूप में दृष्टिगोचर न हुई। फिर क्या विश्वास इस जिन्दगी का ! पिता जी के साथ सन्यासी और फकीर ने भी हम लोगों का साथ छोड़ दिया था। अब केवल एक हम लोग ही शेष रह गए हैं। आगे जिन्दगी का क्या होगी कुछ पता नहीं।'

'धीरज ही सुख को सीमा पर पहुँचा देता है। किन्तु इसे त्याग कर आदमी दुर्बल होता है। और दुर्बलता उसे गर्त में ढकेल देती है। मुसीबतों की दरिया पार करते हुए

हमें घबड़ाना नहीं चाहिए शील ! भगवान ने भरोसा शब्द इसलिए प्रयोग किया है कि आदमी उसका सहारा लेकर अपने लक्ष्य पर पहुँच सके। खैर, छोड़ इन बातों को इतने दिन से इसी वार्ड में रह रही है। लेकिन अपनी बहिन को कभी तुमने याद नहीं किया ?'

'याद कैसे करती रशी ! चोट के दर्द से विह्वल होकर न जाने स्वप्न में क्या क्या बकती रही। पर तू यह तो बता तुझे कैसे पता चला कि मैं इसी कैम्प में रखी गई हूँ ! 'शील ने रशीदा के काले किसलय केषों पर अपनी अँगुलियों से फेरते हुए कहा।

शील से आज मिलकर रशीदा का हृदय खुशी के समुद्र में डूबने उतराने लगा। उसके हृदय में बार बार उठता कि शील को अपने सीने से वह कभी अलग न होने दे। इसी तरह लगभग घन्टे तक दोनों विगत वर्तमान और भविष्य को लेकर उलझती रही। अन्त में भविष्य की ओर ध्यान दिलाती हुई रशीदा बोली—'अस्पताल से अब छुटकारा मिल गया।'

'डाक्टर साहब ने हुक्म दिया है कि प्रत्येक व्यक्ति को कलकत्ता भेजा जा रहा है। और तुम...।

'अब कहाँ जाऊँगी ? साथ ही चलेंगे शील ! सरकार ने सबको स्थान देने के लिए 'वादा किया है। मेरा विचार है कि कलकत्ते में चलकर किसी स्कूल में अध्यापिका का काम कर लें। दूसरा तो कोई काम नजर नहीं आता।'

'लेकिन सरकार ने खाना कपड़ा देने के लिए प्रतिज्ञा किया है। फिर काम करने की क्या आवश्यकता है ?'

'भूलो मत। बिना मेहनत किए, किसी का खाना खाना भी कायरता की श्रेणी में रखा जाता है। जब हम लोगों के पास

बुद्धि है। हाथ पैर और मस्तिष्क में शक्ति है, फिर कायर और आलसी सा बैठ कर जिन्दगी के शेष दिन काट लेना कोई बुद्धिमानी नहीं है। ऐसी बातें कायर सोचा करते हैं।' अस्पताल से हमें छुटकारा मिल गया। अब हम लोग स्वस्थ हो गए हैं। कलकत्ता चलकर जीविका के लिए काम तो करना ही होगा।'

'लेकिन साधन क्या है। हमने बी० ए० एम० ए० पास नहीं किया, फिर अध्यापिका स्वप्न तो बेकार ही देख रही है।'

'बी० ए० एम० ए० से क्या होता है मनुष्य का अनुभव और कला पर अपना जीवन निर्वाह कर सकता है।' वैसे सुई और रेशम के बारीक काम को देखकर वहाँ के लोग आश्चर्य करने लगेंगे। घर में माँ ने जो कारीगरी सिखाई है। उससे हम दोनों अपनी जीविका आसानी से कमा सकती हैं। एक तार में मधुर स्वर नहीं निकलता, किन्तु दो तार के मिलते ही स्वर में, संगीत में एक मधुमय लहर उठ जाती है। अब तक मैं अकेली थी। अब तू आ गई। पुनः मेरी शक्ति दूनी हो गई है।

'सो सब समझती हूँ। परन्तु कलकत्ता जैसे विशाल नगर में कौन किसको पूछता है?'

'अरे। वहाँ सरकार की ओर से रहने का प्रबन्ध किया गया है। फिर तू क्यों घबराती है। बस दुख है तो चाची और चाचा के साथ शहीद होने वाले उस फकीर और सन्यासी को।'

'हाँ। परन्तु अब क्या होगा। रशीदी। जीवन का रोग हो सीमित हो गया है दुनिया जब विद्रोह की ज्वाला में

स्वयं भस्म होने के लिए तैयार होती है, तो अपने आस पास को वस्तुओं को भस्म कर देना ही वह अच्छा समझती है। वह एक ज्वाला थी जिसकी प्रचण्ड लपटों में पड़कर मानव दानव बन गया था। मैं सोचती हूँ। अब रोकर क्या करूँगी। कलेजे पर पत्थर रख कर जीवन में जीवित रहना ही पड़ता है। नीयत और मौत ही तो एक ऐसी वस्तु है, जिसके सम्मुख व्यक्ति का बस नहीं चलता। यही जीवन है। कर्म के पीछे पीछे मानव अपनत्व लिए घूम रहा है। जाने क्या करेगा यह मानव। और कहाँ पर जाकर रुकेगी इस दुनिया की प्रगति!'

'दुनिया की छोड़ अब अपनी देख! मेरा विचार है तू...।

'नहीं। बहिन। इससे मैं नफरत करती हूँ। जल्दी का विवाह भी सूखी जीवन के सम्मुख बाँध बन कर खड़ा हो जाता है। अभी इसकी क्या जल्दी पड़ी है। हाँ! तुम ..।' खिल खिलाकर शील हँस पड़ी।

रशीदा ने शील को चिढ़ाते हुए चिकोटी काटते हुए कहा—'मेरी फिकर क्यों करती है?'

'इसलिए कि तू मेरी फिकर करती है। हाँ। एक बात तुमसे बताने आई थी। उसे मैं भूल गई थी।'

'कौन सी बात?'

'स्वयं सेवक जी को पहचानती है न?'

'हाँ। जो बुशर्ट और पतलून में अस्पताल के आस पास फौजी सैनिक से प्रतिदिन कावयद कराने आते है। उनके विषय में कह रही है क्या?'

'हाँ! बड़ा मनहूस है रशीदी। मुझसे शादी करना चाहता था!'

'शादी !'

'हाँ !

'तो तूने स्वीकार कर लिया।'

'स्वीकार क्या खाक करती ! उसके चेहरे से तो ऐसा भाव टपकता है मानो सेवा करने के लिए वह संघ समाज में नहीं आया है।'

'लेकिन उसके अन्य साथियों ने तो हम लोगों के साथ जितनी हमदर्दी दिखाई उसकी बात भी नहीं उठ सकती। लेकिन यह कौन सा चण्डूल है। न जाने कहाँ से आ गया है यह।'

'कहीं से आया हो ? मुझसे क्या मतलब। मैंने उसे ऐसी डाँट बताई है कि फिर कभी किसी लड़की के बारे में वह ऐसी बातें न करेगा।'

''शाबाश।' कहकर रशीदा ने शील का हाथ चूम लिया तो वह लजा सी गई !

पश्चात वह कुछ कहना चाहती थी कि सामने से नर्स को आते देख दोनों चुप हो रहीं। नर्स सावधान होकर कैम्प की ओर बढ़ रही थी। उसके दायें हाथ में बादामी कागज था। सम्भवतः अस्पताल से छुटकारा दिलाने वाला नोटिस ही प्रतीत होता था। रशीदा की धारणा सही निकली। नर्स ने समीप आते ही नोटिस रशीदा की ओर बढ़ाते हुए कहा—'यह लो ! इस कागज पर अपना हस्ताक्षर कर दो !'

'हस्ताक्षर ! कैसा कागज है ? आपने इसके विषय में कुछ नहीं बताया !'

'सर्जन ने नोटिस दी है। कल आप लोगों को यहाँ से कलकत्ता के लिये रवाना कर दिया जायगा।'

'इसके विषय में शील से मैं सुन चुकी हूँ। अच्छा है बहिन! तुमने हम लोगों के साथ जो नेकी की है हम जहाँ कहीं भी रहेंगे तुम्हें याद करेंगे!'

'याद करने की कौन सी बात है? कैम्प भी कलकत्ता जा रहा है। यहाँ के सारे मरीज अच्छे हो गए। और अब अस्पताल के कर्मचारी यहाँ ठहरना पसन्द नहीं करते! कलकत्ते में बड़े अस्पताल में भेंट होगी ही। फिर घबड़ाने की कौन सी बात है। अगर तुम न आ सकोगी, तो मैं आया करूँगी। फिर शील की ओर घूम कर बोली—'क्यों बहिन! कलकत्ता चलोगी न।'

'क्यों नहीं! जब अपना देश छोड़ दिया। अपने घर में अपने हाथों आग लगा चुकी तो जीवन को कहीं न कहीं तो बिताना ही पड़ेगा चाहे भारत हो या पाकिस्तान।'

'तुम तो निराशा भरी बातों से ही मेरा स्वागत करती हो! ऐसी बातें मुझे अच्छी नहीं लगतीं। पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की बातें एक दिन भिन्न होते हुए भी एक हो जायंगी। दोनों देशों की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि एक के बिना दूसरे का काम नहीं चल सकता! यह तो क्षणिक उन्माद है जिसके प्रभाव से एक दूसरे को अपने से पृथक समझते हैं। किन्तु एक दिन ऐसा भी होगा जब पाकिस्तान को अपनी हठ छोड़ना ही पड़ेगा।'

'तुम्हारे मुँह में घी शक्कर!' कहकर शील उठ खड़ी हुई। नर्स के साथ अपने वार्ड की ओर चल पड़ी।

रशीदा चुपचाप चारपाई पर कुछ देर तक पड़ी रही। फिर दवा पीकर लेट रही। उसे लगा जैसे हबीब के मन की सीमा से वह अलग होने जा रही है। आज हबीब और उसके बीच में एक और मोटी दीवार खड़ी हो जायगी

जिसे पार करना दोनों के लिये कठिन हो जायेगा ! सम्भव है रशीदा अब रहमान से न मिल सके ! योहीं काल्पनिक दुनियाँ की सीमा पर घूमते घूमते जब रशीदा का मस्तिष्क शिथिल हो गया, तो वह नींद के गोद में जाकर लेट रही ।

दूसरे दिन सवेरे अस्पताल के कर्मचारियों के साथ सर्जन और डाक्टर राजन कलकत्ता के लिये रवाना हो गए। इनके साथ ही कैम्प के अन्य रोगियों के लिये एक डिब्बा रिजर्व कराया गया और उसमें सभी रोगियों को सुरक्षित स्थान दिला कर डाक्टर स्वयं रवाना हो गया। रशीदा और शील के साथ ही नर्स ने अपना आसन लगाया। और तब गाड़ी चल पड़ी।

१६

रात के दस बज गये थे। गुफा की सड़कों पर सन्नाटा छा गया था। केवल एक जाति का आधिपत्य जहाँ हो वहाँ पर भाँति भाँति की चीजें देखने को नहीं मिलतीं। ढाका जैसे विशाल नगर में रहमान कादिर और हबीब के लिये कारोबार करना कोई कठिन नहीं था। किन्तु रहमान ने टाल मटोल कर हबीब और कादिर को बेकार ही रखा था। हबीब रहमान की चालाकी से अनभिज्ञ न था। वैसे भी हबीब अपने बचपन से ही कुछ लिखने पढ़ने में अधिक मन लगाता था। परिणाम यह हुआ कि उसने कोई इम्तहान तो पास नहीं किया था, किन्तु अनुभव और बाहरी किताबों के अध्ययन ने उसे इस योग्य बना दिया था कि हबीब एक अच्छा लेखक बन गया था ! रशीदा की जुदाई ने उसके हृदय में एक अजीब सी हलचल मचा दी थी। वियोग की भावना

और क्रान्ति की भावनाओं के बोझिल वातावरण से दबकर जब मनुष्य की आत्मा कराह उठती है, तब वह उन भावनाओं का लेख या कहानी में लिखकर उसे साकार कर देता है। हबीब को भावनाओं ने प्रति दिन संघर्ष की सीमा से टकरा टकरा कर उसे लेखक और आलोचक बना दिया था। पहली कहानी जब हिन्दी की एक पत्रिका 'मंजरी' में प्रकाशित हुई थी। उसे पढ़कर अन्य कितने पत्रों के सम्पादकों ने उस कहानी को अनुवाद करके अपने पत्र में प्रकाशित किया था। किन्तु रशीदा ने उर्दू की पत्रिका के ही उसकी कहानी देखी थी। इस तरह हबीब का जीवन अब अल्हड़पन की सीमा से दूर हो गया था। दिन भर तो रहमान और कादिर के साथ ढाका में घूम घूम कर अपना समय काट देता। लेकिन अब ढाका शहर भी उसके लिये पुराना हो गया था। लोगों से बातचीत भी प्रायः वह नहीं करता। हाँ। कभी काल निर्मल और कादिर की भावी पत्नी को कुछ पढ़ा देता।

रोज की नाई आज रहमान और कादिर के साथ वह शहर घूमने के लिए न जा सका। चुप चाप कमरे में पड़ा किसी पुस्तक के पढ़ने में तल्लीन था। सामने निर्मल बैठी खाना बनाने के लिए चावल पिरो रही थी। तभी हबीब ने पुस्तक को बन्द करते हुए कहा—'क्यों निर्मल! इस शहर में तुम्हारी तबियत लगती है या नहीं?'

'क्यों! आप इस तरह क्यों पूछ रहे है?' निर्मल ने सिर ऊपर उठाकर पूछा।'

'ऐसे ही! तुम्हें तकलीफ तो नहीं है?'

'नहीं! आप लोगों के साथ रहकर तकलीफ कैसे हो सकती है! हाँ! प्रमिला बहिन का मन ऊब रहा है। वह

रोती रहती है। कई बार उसे समझा भी चुकी परन्तु वह मेरी नहीं मानती।'

'हाँ! कादिर ने उसे अपनी दासी समझ रखा है। लेकिन वह, अपनी पिछली जिन्दगी के विषय में कुछ नहीं बताती।'

'सो सब मैं जानती हूँ। वह विवाहित हैं।'

'विवाहित है?' हबीब ने पुस्तक को एक ओर रखते हुए पूछा।

'हाँ। उसके पति कलकत्ते में नौकरी करते हैं?'

'तुमने इसे अब तक गुप्त क्यों रखा?'

'क्या करती! अभी कल तक तो मुझे खुद पता नहीं था। फिर आप को कैसे बताती?'

'और तुम।'

'निर्मल कुछ झेंप सी गई। लजाते हुए उसने कहा—'जब आप मुझे अपनी बहिन समझते हैं, तब आप से क्या छिपाना।' मैं किसी की हो चुकी हूँ किन्तु उनका पता नहीं। फिर सेन्दूर लगाना भी व्यर्थ है।'

'अब समझा निर्मल! तुम लोग एक बार किसी की हो चुकी हो। फिर तुम्हें कैद रखकर जबरन शादी के लिए तैयार करना इसलाम का फर्ज नहीं है। मैं आज कादिर से साफ साफ कह दूँगा कि यह शादी नहीं हो सकती। फिर निर्मल के पति के विषय में पूछा—'तुम्हारे वे कहाँ रहते हैं?'

'वे भी कलकत्ता में रहते हैं। किसी जूट की फैक्टरी में काम करते हैं।'

हबीब को जाने क्यों खुशी हो रही थी। उसे लगा जैसे दो इनसान की जिन्दगी पुनः आबाद कर कितना खुश होगा

कुछ कहना चाहता था कि निर्मल बोल उठी—'आप। कादिर और रहमान से बैर मोल न लें। अन्यथा आपका जीवन सङ्कट में पड़ जायेगा ?'

'खतरे से मैं नहीं डरता। कादिर और रहमान के साथ मैं इनके सारे दल को भारत सरकार के हाथ में दिला दूँगा, निर्मल! समाज के साथ रहने वाला व्यक्ति यदि व्यक्ति के साथ विश्वासघात करता है, तो उसे दण्ड अवश्य मिलना चाहिए।'

'लेकिन अपना कोई वश न हो तब ?'

'वश तो मैं अपने आप बना दूँगा।' हबीब की सारी बातें केवल कल्पना बनकर नहीं रहती। मैं वादा करता हूँ निर्मल! अपनी जिन्दगी के अन्तिम घड़ियों तक तुम दोनों को बचाने के लिए प्रयत्न करूँगा। यदि ऐसा न कर सका, तो मैं स्वयं मिट जाऊँगा।'

मिट जाना ही कोई धर्म नहीं है। केवल थोड़े से लोभ के लिए अपने जीवन को सङ्कट में डालना मनुष्यता नहीं है। अब तो हम लोगों ने नकाम जीवन बिताना आरम्भ कर ही दिया। फिर आप को क्यों खतरे में डाला जाय। अब भूला हुआ आदमी किसी न किसी वक्त अपने स्थान पर पहुँच सकता है। किन्तु धूल में खोयी हुई वस्तु लाख ढूढ़ने पर भी नहीं मिलती, यदि मिल जाती है तो मनुष्य की प्रेरणा एक बार पुनः सजीव हो उठती है। जो बीत गई, इसे पुनः दुहराने से घाव हरा होता है। भरता नहीं।

'आखिर। इतनी बड़ी जिन्दगी को कैसे काट लोगी, निर्मल ?'

'वे मेरे हैं। कहीं भी रहे। खुश रहें। यही मेरी याचना है। मैं तो किसी तरह अपना जीवन काट लूँगी। मेरे पति

नहीं। मेरे साथी है। जीवन की समतल घाटी पर दौड़ने के पहले हम दोनों ने एक दूसरे को अच्छी तरह समझ लिया था। चुटकी भर सिन्दूर ही शादी का साइन बोर्ड नहीं है हबीब भाई ! मैं सिन्दूर नहीं लगाती तो आप ने समझा था कि निर्मल अविवाहित है। किन्तु सिन्दूर और शादी में अन्तर है। दो आत्माओं के चिरस्थायी मिलन को विवाह कहते हैं किन्तु विवाह में पति पत्नी की भावनाओं में एक झिझक और हिचक होती है। प्रेम और प्रेमिका के हृदय में आत्मीयता ! फिर भी मैं उन्हें कैसे भूल सकती हूँ।'

'और प्रमिला ?' बीच ही में हबीब ने पूछा।

'प्रमिला कुँवारी है। जीवन के उन्मादित घड़ियों का उसने कभी स्वप्न भी नहीं देखा।'

'सच। कहाँ है वह ?'

'सो रही होगी। कादिर उसे बहुत तंग करता है। अगर आप हम लोग पर कड़ी नजर न रखते तो शायद अब तक रहमान और कादिर की कामुक आँखों का शिकार हम ...

'नहीं। मैं ऐसा नहीं होने दूँगा। तुम कोई उपाय निकालो, जिससे तुम लोगों की रक्षा हो सके ?'

'मैं औरत हूँ। क्या कर सकती हूँ।'

'ऐसी बात को सोचना ही अपने आपको कमजोर बनाना है।' औरत शरीर से भले ही कमज़ोर होती हों, लेकिन हृदय में वह पुरुष से कहीं अधिक दृढ़ता और शक्ति रखती है। फिर मैं साथ हूँ। फिर घबराने की क्या आवश्यकता ?'

तब आपही बता दें। किस तरह हम लोग अपनी रक्षा कर सकती है।'

'रक्षा ! कोई किसी की रक्षा नहीं करता, जब तक बंदी अपने रक्षक सा स्वयं दृढ़ नहीं बन सकता। मैं अपना फर्ज अदा करूँगी ! मेरे समझ में एक बात आ रही है। मैं नदी के किनारे मोटर बोट लेकर बहुत पहले से तैयार रहूँगा !'

'फिर हम लोग कैसे आ।'

'अच्छा ऐसा क्यों न करें। मैं मोटर बोट का इन्तजाम करके वापस चला जाऊँ। फिर शाम को नदी के किनारे घूमने चलें। अवसर पाते ही हम लोग मोटर बोट में पहुँच जाँय और कादिर रहमान को एक ओर छोड़ दिया जाय। हुगली नदी से होकर दो दिन में हम कलकत्ता पहुँच जाएँगे।'

'राय तो अच्छी है। किन्तु रहमान और कादिर को यह भेद मालूम हो गया, तो आपकी जान चली जायगी।'

'जान तो कभी की चली गई है। अब उसके लिये चिन्ता करना व्यर्थ है। तुम प्रमिला को किसी तरह विश्वास दिला कर राजी कर लो।'

'वह तैयार है। रोज कहती है कि आवो बहिन। हम लोग किसी रोज यहाँ से भाग चलें।'

निर्मल ने अपना वाक्य पूरा किया। और कुछ कहना चाहती थी कि दरवाजे की साँकल खनखना उठी। हबीब और निर्मल सावधान होकर अपने-अपने काम में ऐसे लग गए, मानों साँकल की खन खनाहट उसने सुनी ही नहीं। लेकिन दूसरी बार जब फिर खट खट की आवाज आई तो हबीब ने उठकर दरवाजा खोल कर देखा। कादिर और रहमान दरवाजे पर खड़े थे। उनके मुहँ से शराब की गन्ध उड़ रही थी। हबीब ने समझ लिया। दोनों ने नशा खा रखी है। अतः रहमान जब दरवाजे के भीतर पाँव रखने लगा, तो हबीबने टोकते हुए पूछा—'क्यों। आज इतनी रात कहाँ रहे।'

'भैया छोड़ो भी। तुम आजाद सरकार की पब्लिक होकर ऐसी बातें करते हो। अरे! अब तो आजादी मिली है। खूब खाओ और पियो फिर मस्ती में जिन्दगी काट लो।' कहकर रहमान तो लड़खड़ा गया।

'हाँ ऐसा मैं नहीं कर सकता।' फिर कादिर की ओर घूमकर बोला—'कादिर! तुमने यह क्या कर डाला। आज मैं चाचा के पास खत लिख रहा हूँ।'

'हबीब! अब मैं खुद तुम्हारे चाचा के बराबर का हो गया हूँ।' अब इसकी बात छोड़ दी। अब्बा खुद शराब के शौकीन हैं, फिर यह आदत उनकी ही डाली हुई है। तब मैं कैसे समझूँ कि वे नाराज होंगे'।' कहता हुआ कादिर दालान में आकर बैठा तो हबीब ने दरवाजा बन्द कर लिया।

पश्चात तीनों दालान में आकर बैठ रहे। सामने की घड़ी ने टन से साढ़े बारह की सूचना दी। हबीब की आँखें दीवार की ओर गई तो उसने कादिर की ओर देखकर कहा—'कादिर। बारह बज गए। अब जाकर सो रहो।' नहीं तो नशा बहकने लगेगा?'

'अजी! सोने का समय नहीं। आज निर्मल और प्रमिला को इस दालान में नाचना पड़ेगा।'

'नाँच मनोरंजन का साधन है। लेकिन नशा के लिए नृत्य नहीं है। अब वे सो रही हैं। सुबह नाच देख लेना।' 'सुबह। नहीं नहीं। ऐसा नहीं हो सकता। आज निर्मल को नहीं तो प्रमिला को नाचना पड़ेगा। उस पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है। वह मेरी है।'

'न निर्मल मेरी है, न प्रमिला तुम्हारी है। जब उनकी इच्छा हम लोगों से शादी करने की नहीं है।' फिर बेकार तंग करने से क्या फायदा।'

'तुम उनकी ओर से क्यों बोल रहे हो ?'

'इसलिए कि वे मुझे अपना भाई समझती है ?'

'भाई ! भाई का नारा लगा कर तुम्हारे जैसे आदमियों ने इसलाम पर कलंक का धब्बा लगा दिया। रास्ते चलते अगर भाई बहन बनाया जाय तो शायद ....

'चुप रहो। अपनी पिछली तवारीख याद करो। हुमायूँ को एक हिन्दू लड़की ने भाई मान लिया। जिसके हित के लिये वह अपनी सारी सेना लेकर किले पर चढ़ गया था। और उसने अपनी बहिन की इज्जत और आन रख ली थी!

'तब अपनी राजधानी थी। अब वह युग नहीं रहा। ताली दोनों हो हाथ से बजती है, लेकिन उसकी आवाज दूर तक नहीं जाती। किन्तु एक सीटी की आवाजें क्षितिज में टकरा कर पुनः वापस लौट आती है। इसलिए एक की आवाज कहीं अच्छा है। तुम चुप रहो। अब अधिक किसी बात की आवश्यकता नहीं। कादिर गुस्से में भर उठा।

हबीब और रहमान की दुनिया ही अलग अलग थी। उसने चीखते हुए कहा—'हबीब तुम जाकर अफसाने लिखो। अगर हम लोगों के बीच में दीवार बनना चाहते हो, तो तुम मेरे घर से जा सकते हो ?'

'यह मैं बहुत पहले से जानता हूँ।' तुम्हें कहने की कोई आवश्यकता नहीं। अगर मेरी अच्छी बातें तुम्हें बुरी लगती है, तो तुम जैसा समझो, वैसा करो। रहमान अपने कमरे की ओर चला गया।

कादिर और रहमान एक दूसरे का मुँह देख रहे थे। हबीब को इस तरह नाराज होते देख कर कादिर का नशा उतरने लगा। उसने घबड़ाए हुए स्वर में कहा—'रहमान !

कहीं ऐसा न हो कि हबीब भारत सरकार के कर्मचारियों को इस बात की सूचना दे दें। तो क्या होगा।'

'भैया डरने से काम नहीं चलता। कहो तो आज रात इसको ......।'

'नहीं-नहीं। यह क्या सोचते हो। अपने एक भाई का खून करोगे ?'

'हाँ। मुझे ऐसे भाई की आवश्यकता नहीं, जो अपने घर में आग लगाकर दूसरे के घर को बुझावे।'

'भूलते हो रहमान।' कमरे से आकर हबीब बोल उठा।

'ओ। तुम अभी तक जाग रहे हो। आओ बैठो न। अब हम लोगों का नशा उतर रहा है।' रहमान ने हबीब की ओर देखते हुए कहा।

हबीब को लगा कि रहमान उस पर व्यंग बाण की वर्षा कर रहा है। अतएव सम्भलते हुए सामने रखी तिपाई पर बैठते हुए बोला। 'रहने भी दो। क्यों बातें बना रहे हो। शराब या हर एक नशा को किसी मजहब ने अच्छा नहीं कहा है। नशा मनुष्य की बुद्धि और विवेक को शिथिल बना देता है। आदमी इस काबिल नहीं रहता कि बुरा भला सोच सके।'

'राय तो तुम अच्छी दे लेते हो। क्यों न हो। जब शायरी और अफसानों से तुम्हें अधिक प्रेम है, तब उपदेशक बनकर अपनी शिक्षा पूरी क्यों नहीं कर सकते। लेकिन एक बात है हबीब। जब निर्मल और प्रतिमा को अपना बनाना है ही, फिर नाचने में क्या रखा है।'

'नाच और नशा में फर्क है रहमान। निर्मल और प्रतिमा तुम्हारी अपनी वस्तु नहीं, कि जैसे चाहो, उसका उपयोग

कर लो। वे दोनों एक अमानत सी तुम्हारे पास हैं। यदि तुम सच्चे इसलाम के भक्त हो तो तुम्हें चाहिए, कि उन्हें भारत सरकार को सुपुर्द कर दें।'

'लेकिन। जिसके लिए इतना कष्ट उठाया। जिसको इतनी दूरी से बाल बाल बचाकर इस मंजिल तक पहुँचाया उसे इसीलिए नहीं, कि दया और फकीर की तरह उसे त्याग दिया जाय।'

'किसी आदमी या चीज की हिफाजत, अगर अपने स्वार्थ के लिए की जाती है, तो वह आदमी बड़ा नहीं कहा जा सकता। निर्मल के विषय में मेरा बिचार ऐसा ही है। प्रतिमा कादिर की धरोहर है। उसका उपयोग तुम जिस रूप में करो। मुझे कोई मतलब नहीं।'

अपना वाक्य पूरा कर हबीब चुप हो गया, तो कादिर ने अपनी जबान सम्भाल कर कहा—'रहने भी दो! बड़े आए हो मुहम्मद साहब के साथी बनकर। अरे यह दुनिया है हबीब! वर्तमान देखकर अपना काम करो। भविष्य के गर्भ की बात छोड़ दो! तुम अगर नहीं रहना चाहते, तो अपना इन्तजाम कर लो।'

'इसके लिए म तैयार हूँ।' कहकर हबीब उतवालेपन में उठ खड़ा हुआ।

कमरे से निकल कर चलना चाहता था, कि रहमान उठकर उसे पकड़ लिया और अपने निकट बैठाते हुए बोला—

'भाई! नाराज न हो। इस समय रात काफी बीत चली है। कल इस पर विचार किया जायेगा?'

हबीब चुपचाप अपने स्थान पर आकर लेट रहा। निर्मल दरवाजे की आड़ से सब कुछ सुनती रही। अन्त में जब हबीब चारपाई पर लेटने लगा तो निर्मल ने सिरहाने

आकर पूछा—'क्यों आप लोगों में गरमा गरमी क्यों हो रही है?'

'कुछ नहीं निर्मल! प्रतिमा के पास जाकर सो रहो। इस समय मेरे पास समय भी नहीं है। तबियत कुछ घबड़ा रही है।'

'और इसकी जड़ हम लोग हैं।'

'नहीं निर्मल। ऐसा मत सोचो। भाई को बहिन बुरी नहीं लगती, और प्रतिमा को अपने साथ ले लो। सुबह तुम लोग...।

'लेकिन ये मनहूस कभी भी अपनी चाल से बाज नहीं आएगें।'

'मैं उनकी परवाह नहीं करता।' हबीब ने कुछ ऊँचे स्वर में कहा।

आवाज रहमान और कादिर के कानों में पड़ी। दोनों उठकर हबीब के समीप आगए और कादिर ने सावधान करते हुए कहा—'हबीब। हम लोगों ने तुम्हारी चालाकी समझ ली है।'

'जिसे तुम चालाकी समझते हो, वह तुम्हारे सामने हैं। तुम लोगों निर्मल और प्रतिमा को बेचना चाहते हो। यह भेद मुझसे छिपा नहीं है। तुम्हारे दिल, दिमाग और चालाकी में जो स्वार्थ और अपनापन छिपा हुआ है। उसे मैंने भली भाँति समझ लिया है।'

'समझकर तुम क्या कर सकते हो। जानते हो। यहाँ तुम्हारी सहायता करने वाला कोई नहीं है। सारा मोहल्ला अपने जाति से भरा पड़ा है। और यदि उन्हें इस बात का पता चल जाय कि तुम काफिर की सहायता करना अपना

फर्ज समझते हो, तो वे लोग तुम्हें तुरन्त इस दुनिया से अलग कर देंगे।'

'और सरकार?

'सरकार! सरकार को कैसे धोखा दिया जा सकता है। यह तुम अच्छी तरह देख सकते हो। सरकार स्वयं किसी काफिर को अपने यहाँ रखना नहीं चाहती।' कादिर ने चुटकी लेते हुए कहा। 'सरकार को सरकार बनाने वाले तुम लोग हो। तुम्हारी नीति और चाल पर तुम्हारी सरकार अधिक दिन तक नहीं चल सकती। भारत सरकार ने स्वयं तुम्हारे खोए हुए आदमियों को खोज कर यहाँ पर भेजने की कोशिश कर रही है। फिर ऐसी भावना क्यों?'

'सरकार की ओर से ऐसा आर्डर है कि काफिरों के साथ निकाह करने वाले आदमी जन्नत में पहुँचते हैं।'

'और अपने भाई को कत्ल करने के बाद आदमी दुनिया का राजा बन जाता है, क्यों? है न ऐसी ही बात?'

'मैं बहस नहीं करता। तुम अपना रास्ता नाप लो। मुझे आवश्यकता नहीं है। निर्मल तुम्हारी है। उस पर तुम्हारा अधिकार है, लेकिन प्रतिमा पर...।

'लेकिन जिस प्रतिमा को तुम अपनी समझते हो, वह तुम्हें फूटी आँखों से भी नहीं देखना चाहती।'

'चुप रहो हबीब। इज्जत सबको प्यारी होती है। किसी के इज्जत पर हमला करने का अधिकार तुम्हारा नहीं है। प्रतिमा को मैंने पाया है। वह मेरी है और तुम्हारे सामने उसे अपनी बना कर रखूँगा तुम आँख खोल कर देख सकते हो?'

'हठ और जिद्द से आदमी आगे नहीं बढ़ सकता। प्रतिमा तुम्हारी है, तो वह तुम्हारी होगी? इसमें मुझे

सन्देह है। किसी औरत के हृदय को बलपूर्वक जीतकर उसे अपना नहीं बना सकते। आज तुम्हारा बोल बाला है। कल की बात कोई नहीं जानता। समय कितनी तेजी के साथ अपना चक्कर पूरा कर रहा है। इसे तुमने कभी नहीं सोचा। कादिर। तुम जिस धर्म और मजहब का स्वप्न देख रहे हो। उसकी नींव अब खोखली हो चुकी है। मैं साफ साफ बातें करता हूँ। इसलिए तुम्हारी नजरों में एक कील की तरह चुभ रहा हूँ। परन्तु आज जैसे हम यहाँ करते हैं, वैसा ही काम अगर ये लोग करें तो तुम्हारे हृदय पर क्या असर पड़ेगा ?'

'इसके विषय में सोचना ही नहीं चाहता ! तुम अगर यहाँ नहीं रहना चाहते तो, अपना ..

'इसके लिए मैं इन्तजाम कर रहा हूँ। शायद कल सुबह तक तुम मुझे यहाँ नहीं देख सकोगे !' कहता हुआ हबीब उठकर अपनी चारपाई पर आकर पड़ रहा।

इधर घर में निर्मला धीरे धीरे सिसक रही थी। हबीब का हृदय कुछ अजीब सा होकर धड़क उठा। अपनी चारपाई से उसने कहा—'क्यों निर्मल ! रो रही हो क्या ?'

हबीब के प्रश्न ने निर्मला के हृदय पर शायद एक बिजली सा आघात किया और बादलों का एक जोर का फुहारा छूट निकला। प्रश्न का उत्तर न देकर वह चुप चाप सिसकती रही। हबीब बार बार समझाता रहा, पर निर्मला थी, जो आँसू बहाए जा रही थी। अन्त में जब वह चुप न हो सकी, तो हबीब ने कुछ खीझते हुए कहा—'अच्छा ! अब मैं तुमसे कभी नहीं बोल सकता ?'

अबकी बार निर्मला से न रहा गया। उसने सिसकते हुए कहा— 'नहीं ! नहीं ! ऐसा न कहो ! भाई हबीब ! तुम सहारा छोड़ दोगे, फिर...।

'रोने से क्या होता है ! कादिर पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है। चुप रहो ! सुबह होते ही हम दोनों इस स्थान से चल पड़ेंगे।'

'और प्रतिमा ?' निर्मला ने बीच ही में पूछा।

'प्रतिमा के पास जाकर तुम भी बात चीत कर लो। इस समय वह सो रही है।'

निर्मला ने प्रतिमा को जगाया और सारी बातें उससे बता दीं। बस यही मौका था कि उन दोनों को सोता छोड़ कर, यह लोग हबीब के साथ चल दें।

थोड़ी देर बाद निर्मला प्रतिमा के साथ बाहर निकल आई। पश्चात दोनों ने हबीब की युक्तिनुसार पिछले दरवाजेसे निकलकर नदीकी ओर जानेवाली सड़क पकड़ ली।

घनेरा रात की छाती पर हबीब निर्भयता पूर्वक इन दो महिलाओं के साथ अपना पाँव रख कर आगे बढ़ चला। भूखा प्यासा हबीब विचारों में डूबा नदी को जाने वाली सड़क को तय कर रहा था।

दोनों हबीब के साथ नदी के किनारे पहुँच गई। कलकत्ता जाने वाले यात्रियों के लिए एक बड़ी सी मोटर बोट तैयार थी। उसमें बिजली जल रही थी ! सुबह होने के कारण लोग अपने अपने कार्यों से निवृत हो रहे थे। तभी हबीब दोनों युवती के साथ नदी के किनारे पहुँच गया। उसके पास कुछ पैसे थे। उसने तीनों के लिए कलकत्ता के लिए टिकट खरीद लिया। फिर ड्राइवर ने उसे एक स्थान पर ले जाकर बैठा दिया। सुबह सात बजते बजते मोटर बोट कलकत्ता के लिए रवाना हो गई।

१७

अस्पताल के कैम्प के साथ रशीदा और शील कलकत्ता पहुँच गए। कलकत्ता पहुँचने पर उन्हें शरणार्थियों के एक कैम्प में स्थान मिल गया। परस्पर की इस विद्रोह भावना ने एक चिनगारी की तरह सुलग सुलग कर जो ज्वाला उत्पन्न की, उसके प्रभाव से भारत का शायद ही ऐसा कोई गाँव या शहर था, जो इससे पृथक रह सका हो। कैम्प लगभग एक मील के मैदान में पड़ा था! सैकड़ों धुले हुए सुहाग, अनाथ बच्चे, मासूम गोद में सिसकते हुए बच्चे, जो माता विहीन हो गए थे, उन्हें अस्पताल की नर्स देख भाल कर के जीवन दान दे रही थीं! रशीदा और शील का कैम्प सब कैम्पों से अलग एक नीम के पेड़ के नीचे पड़ा था। उसके बगल में एक भारतीय परिवार भी पड़ा था जिसमें केवल एक युवक रहता था और उसकी एक वृद्धा माँ!

जब से रशीदा और शील इस कैम्प में आई थीं तब से इस परिवार से उनकी कुछ न कुछ घनिष्ठता तो अवश्य हो गई थी। किन्तु आज तक दोनों परिवार में किसी तरह की बात नहीं हुई। रशीदा दिन भर कैम्प में पड़ी रहती। सरकार से जो कुछ सहयोग मिलता, उसे प्राप्त कर दोनों कुछ न कुछ काम करतीं। सुबह शील को स्वयं-सेवक लोग कुछ खाने पीने का सामान दे जाते! लेकिन बिना परिश्रम किए किसी का खाना खाना रशीदा और शील ने नहीं सीखा था।

कैम्प में आए उसे लगभग पाँचवा दिन था। धूप निकल आई थी। रशीदा शील के साथ कैम्प के बाहर निकल कर

धूप ले रही थी। दूसरे कैम्प के दरवाजे पर वह युवक बैठा किसी पुस्तक के पढ़ने में मग्न था। शील उसकी ओर एक टक देख रही थी।

इसी समय खाना आ गया। खाना खाकर दोनों धूप से बचने के लिए अपने कैम्प में पड़ रहीं। दूसरी ओर युवक ने खाना लाकर अपनी माँ को खिलाया और स्वयं खाकर एक चटाई पर लेट रहा।

आज जब साँझ की बेला ने धीरे धीरे छिपकर सन्नाटा पैदा कर दिया,तो युवक रोज की नाईं आज भी अपने कमरे से निकल कर कैम्प के बाहर के लान पर बैठा कुछ देर तक किताब पढ़ता रहा। फिर सहसा न जाने क्यों उठकर एक ओर चला गया। रशीदा और शील अपने कैम्प से एकटक उसकी ओर देखती रहीं। सहसा शील का हृदय न जाने क्यों उस युवक की ओर गुदगुदा उठा! उसने रशीदा के कन्धे पर अपना हाथ रखते हुए कहा—'रशी! बहिन! अजीब सा यह आदमी है। न किसी से बोले, न चाले! केवल गुमसुम सा अपना मुँह बनाए न जाने क्या सोचा करता है?'

'तो मुझे क्या! चाहे कोई गुम सुम सा रहे या चंचल! देख शील। किसी युवक के विषय में सोचना ही उसकी प्रतिभा से आकर्षित होना कहा जाता है! मुझे ऐसा लग रहा है तू मन ही मन कहीं भटकने लगी है।' मुसकुराते हुए रशीदा ने कहा।

'इसीलिये तो मैं तुमसे कोई बात नहीं कहती। मैं कहती हूँ कुछ और तू समझ लेती कुछ और फिर समाज की आँखें न जाने क्या समझेंगी!' शील ने कुछ रूठने का भाव प्रदर्शित किया जिसे रशीदा ने देखकर कहा—'शील! नारी! नारी

को धोखा नहीं दे सकती। नारी के मस्तिष्क को एक नारी जितनी सरलता पूर्वक समझ सकती है शायद पुरुष नहीं समझ सकता! फिर किसी को प्यार करना बुरा नहीं है, किन्तु प्यार को निबाहना, उसके भार को लेकर जीवन की समतल घाटी पर समानान्तर चलना कठिन होता है।'

रशीदा की भावना को आगे बढ़ते देख शील ने बीच ही में काटते हुये कहा—'भाई! इस प्यार, पुचकार के घेरे में शील नहीं खड़ी हो सकती?'

'यह मैं जानती हूँ! कोई व्यक्ति किसी सीमा से बँधना नहीं चाहता! प्यार, विद्रोह और परिवर्तन मनुष्य के हाथ की वस्तु नहीं है। नीयत और समय काल की शक्ति से प्राणी की आत्मा और विवेक भी बदल जाया करती है। अगर ऐसा न हो तो समय अपने आपको बलवान नहीं कह सकता। नारी और पुरुष दोनों के संघर्ष से समाज ने जो कुछ पाया है उसका थोड़ा बहुत भाग तो किसी न किसी रूप में प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर में सीमित रहता है। अगर तेरे आत्मा में ऐसी बात है, तो मैं उसे बुरा नहीं मानती। लेकिन किसी नाव पर चढ़ने के पूर्वक उसका निरीक्षण कर लेना आवश्यक है! शील! पुरुष रूप का लोभी होता है। हृदय से वह व्यापार करना नहीं जानता।'

'भाई तुम अपना लेक्चर बन्द करो। नहीं तो मैं उठकर चली जाऊँगी।'

'अच्छा भाई! अब माँफी चाहती हूँ। जब सच्ची बातें भी तझे बुरी लगती हैं, तब क्यों......'

'बुरी नहीं! मैंने कोई ऐसी बात नहीं की फिर यह भूमिका बाँधने की क्या आवश्यकता थी?'

'तो मैंने माँफी माँग ली।'

'माँफी मैं माँगती हूँ। तुम मुझे चिढ़ाया मत करो।' मुसकरा कर शील रशीदा के गले से लिपट गई।

रशीदा अभी कुछ और कहना चाहती थी कि बगल के कैम्प से वह वृद्धा टेकती हुई आकर शील के निकट खड़ी होकर बोली—'बेटी! मेरे बेटा! इधर आया है?'

परिचय के लिये उत्सुक आँखें परिचिता की ओर अपने आप घूम गईं। चाँद की उस चाँदनी में वृद्ध के सफेद बाल जूट की तरह सफेदी लिये चमक रहे थे। शील तो खोयी सी रह गई। किन्तु रशीदा से न रहा गया। उसने वृद्धा को अपने समीप बैठाते हुये पूछा—'किसे पूछ रही हो।' माँ।'

'नायर को।'

'नायर। यह कौन है। मैंने तो कभी नाम भी नहीं सुना!'

'नायर! उसे तुम लोग नहीं जानती।' वृद्धा ने आश्चर्य चाकित होकर पूछा। मानों उसके बेटे से सभी लोग परिचित हों।

'नहीं! नाम तो हम लोग नहीं जानतीं। किन्तु अभी उठकर वे कैम्प से बाहर गये हैं। आपको कोई काम तो नहीं है?'

'अरे काम क्या है। कैम्प में अंधेरा है। अभी तक लौट कर आया नहीं। लालटेन कैसे जले।'

'तो चलिये न मैं जला दू।' कहती हुई शील झटपट उठ खड़ी हुई।

शील वृद्धा को सहारा देकर उसके कैम्प में ले गई। तत्पश्चात लालटेन उतारकर उसे जलाकर लौटने लगी तो युवक ने दरवाजे पर आकर आवाज दिया—'माँ!'

शील दुबक कर भाग गई। युवक एकटक उसे देखता रह गया। उसे लगा! यह युवती कौन है। यहाँ क्यों आई।

उधेड़ बुन में पड़ा वह किसी निर्णय पर पहुँचना चाहता था कि उसकी माँ बोली—'क्यों ! कहाँ गया था बेटा ?'

'बाजार चला गया था ! माँ ! क्यों ! यह लड़की कौन थी ?'

'पड़ोस के कैम्प से बुला लाई थी । घर में दीपक जलाना था बेटा !'

'ओ ! समझा ?' कहकर युवक कोट उतार कर अर-गनी पर टाँगने लगा । फिर अपने हाथ में ली हुई वस्तु को माँ की चारपाई पर रखते हुए बोला—'माँ ! तुम घर में किसी को मत आने दिया करो ।'

'सो क्यों ? अभी तक तो कोई नहीं आया था । तुम जानते ही हो । मुझसे उठा नहीं जाता । किसी तरह उठकर उस कैम्प तक गई वह लड़की बड़ी भली मालूम पड़ती है ! दीपक जलाना था न ?'

'खैर ! कल से मैं स्वयं दीपक जला कर जाया करूँगा । लेकिन लड़कियों का अपने घर में आना मुझे अच्छा नहीं लगता ।'

'फिर बहू आयेगी तो तू कैसे रहेगा ?'

'इसकी कोई आवश्यकता नहीं माँ ! आज की दुनिया में शादी कोई अपना विशेष महत्व नहीं रखती ।'

'हाँ ! जमाना देख रही हूँ । आज कल के लड़के-लड़कियों में इस बात की सरगर्मी बहुत तेजी के साथ है । पर तेरे लिए तो शादी आवश्यक सी जान पड़ती है । मैं तो चार दिन की मेहमान हूँ । आज हूँ, कल जाने कब यहाँ से अपना डेरा कूँच कर दूँगी ।'

'ऐसा न कहो माँ । तुम न रहोगी तो मैं ··· ।'

'मैं कब तक रहूँगी ?' कहकर माँ अपनी चारपाई पर पड़ रही ।

युवक खाना खाने के बाद एक ओर लेट रहा। कैम्प की छोटी छोटी दरवाजों से चाँदनी की रोशनी कभी कभी नाच उठती। तब नायर का हृदय भी कुछ अजीब सा सिहरन लेकर सिहर उठता। उसे लगा, मानों जीवन में वह जो कुछ करना चाहता था, जिस सीमा और मंजिल पर पहुँचने के लिए उसने कदम उठाया था उससे वह वंचित सा रह गया। दूसरे क्षण उस युवती के विषय में सोच कर वह चिन्तित हो उठा। सहसा उसे याद आया। यह वाक्य—'औरत मर्दों की सबसे बड़ी कमजोरी है।' और आज वह भयभीत हो रहा था कि कहीं ऐसा न हो कि इस कमजोरी का शिकार वह स्वयं हो जाय।

दूसरी ओर कैम्प में नायर के घर से दीपक जला कर जब शील अपने कैम्प में लौटी तो रशीदा चारपाई पर अध-लेटी किसी पत्रिका को पढ़ने में मग्न थी। अतः उसे छेड़ते हुए बोली—'क्यों ? क्या पढ़ रही है ?'

'कुछ नहीं।' आज भी इस पत्रिका में कहानी प्रकाशित हुई है।'

'कहानी किसकी है।'

'हबीब नाम से है। किन्तु पूरा नाम रशी हबीब बख्श है।'

'तो हबीब भाई हो तो नहीं हैं ?' शील ने रशीदा के सिर के निकट बैठकर उसके बालों को अपनी अँगुलियों में लपेटते हुए पूछा ?

'नहीं ? अस्पताल में एक रोज मैंने पत्रिका में इस नाम से कहानी देखी थी, परन्तु यह समझ में नहीं आया कि वास्तव में यह कहानी किसकी है ?'

'तो इस अखबार के सम्पादक से क्यों नहीं पूछ

'एडीटर नहीं बताएगा। वह तो स्वयं मेरी ओर खिच कर अपने मतलब की बातें सोचने लगा। आज की दुनियाँ नारी को आकर्षण मात्र मान कर उसे व्यापार कर रही है। देखती नहीं है। हर पत्रिकाओं पर नारी का नग्न चित्र छाप कर ही सम्पादक जी अपने पत्र की ख्याति प्राप्त करते हैं। फिर इन सम्पादकों से किसी तरह की उम्मीद रखना बेकार है।'

'अच्छा तुम नहीं लिखोगी तो मैं लिख कर पूछती हूँ।'

इसी तरह अपने भावी जीवन के विषय में कल्पना करते करते रशीदा सो गई और शील खत लिखती लिखती सो गई!

१८

सुबह जब उसकी आँख खुली तो उसने देखा कैम्प के सामने एक हरे रङ्ग की कार खड़ी है। कार के सामने लेवा और डाक्टर राजन खड़े हो किसी अन्य व्यक्ति से किसी बात पर परामर्श कर रहे हैं। रशीदा ने देखते ही उन्हें पहचान लिया और कैम्प से बाहर दौड़ कर चली गई। बाहर आकर लेवा के निकट आकर बोली—'अच्छी रही बहिन! आज कैसे भूल पड़ीं?'

'अरे! अरे रशीदी! मैं तेरे विषय में आप से पूछ रही थी।' उस व्यक्ति की ओर लक्ष्य करके लेवा ने कहा। फिर रशीदा के गले से लिपटती हुई बोली—'किस कैम्प में तू ठहरी हुई है?'

'यही सामने वाले...।' फिर डाक्टर राजन की ओर देखकर बोली—'नमस्ते! डाक्टर साहब।'

'नमस्ते! और शील कहाँ है?'

'भीतर है। आइये न! कैम्प में ही बैठें। बाहर मेहतर अभी झाड़ू देने आ रहा है।'

रशीदा की बात लेवा और डा० राजन को पसन्द आ गई और दोनों उसके पीछे पीछे कैम्प की ओर चल पड़े। कार को वहीं छोड़ दिया।

भीतर कैम्प में पहुँच कर देखा तो शील अभी तक लम्बा लेट लगाए पड़ी थी। उसके सिरहाने एक पत्रिका पड़ी थी। उसे अपने हाथ में उठाते हुए, लेवा ने सोई हुई शील को चिकोटी काट लिया। शील उचककर उठ बैठी। अपनी आँखों को मलती हुई बोली—'देखो! रशीदा! सुबह सुबह की चिकोटी अच्छी नहीं लगती।'

उत्तर में लेवा ने हँसते हुए कहा—'अरे! आँख खोल कर देख भी लो। सामने कौन खड़ा है?'

'सामने!' कह कर शील ने आँखों पर से चादर खींचते हुए देखा—लेवा और डा० राजन खड़े थे! दोनों को अपने निकट देख कर झटपट चारपाई से उठ कर नीचे उतरती हुई बोली—'ओ! लेवा बहिन! डाक्टर साहब! जय हिन्द!'

'जय हिन्द!' लेवा और डाक्टर ने साथ ही उत्तर दिया।

तदुपरान्त डा० राजन ने बाँस की चारपाई पर बैठते हुए पूछा—'क्यों! आप लोगों को किसी तरह की तकलीफ तो नहीं है?'

'नहीं! तकलीफ नहीं है। आज हम लोग स्वयं आप के यहाँ आने वाले थे।' रशीदा ने कहा।

'तो इससे क्या? हम लोग स्वयं चले आए। अब आज का प्रोग्राम है कि कहीं घूमने चला जाय। क्यों लेवा?'

'लेकिन कैम्प के अफसर की अनुमति लिए बिना कैसे जा सकती हूँ।'

'अफसर! यह कौन है?' राजन ने पूछा।

'बहुत क्रोधित आदमी है। किसी व्यक्ति को बिना आज्ञा लिए नहीं जाने देता?'

'तो मैं आज्ञा दिला देता हूँ।' राजन ने रशीदा की ओर लक्ष्य करके कहा।

अब रशीदा के पास कोई बहाना न रहा। उसने हाँ कर लिया और उसके साथ ही शील भी चलने के लिए तैयार हो गई। राजन कैम्प से निकल कर बाहर आया और चुपचाप अफसर के पास चला गया। अफसर से स्वीकृत सूचना लेकर दस मिनट में वापस आ गया। तब सब लोग कलकत्ता शहर की ओर चल पड़े।

पड़ोस के कैम्प से युवक सब कुछ एकटक देखता रहा। अन्त में जब उनकी कार चली गई तो वह वापस आकर पुनः किसी पुस्तक के पढ़ने में मग्न हो गया।

१६

सुबह जब रहमान और कादिर की आँख खुली तो घर में सन्नाटा ही सन्नाटा नजर आया। चारों ओर सन्नाटा का अखिल साम्राज्य देख कर कादिर का कलेजा धक से करके रह गया। हबीब और निर्मला के कमरे की ओर बढ़ कर उसने देखा। कमरे में कोई न था। हबीब अपने चारपाई से बिस्तर वगैरह बाँध कर चलता बना था। साथ ही प्रतिमा का भी कहीं पता नहीं था। अतएव जल्दी से रहमान के निकट आकर

बोला—'भाई ! रहमान । हबीब ने गद्दारी की । निर्मला और प्रतिमा के साथ वह भाग गया ।'

'भाग गया ।' रहमान ने चौंकते हुए पूछा ।

'हाँ । पीछे की खिड़की खुली हुई है ।' कादिर ने अपना सिर पीटते हुए कहा ।

'तब क्या होगा ?'

'होगा क्या पुलिस को सूचना दे दो ।'

थाने में थानेदार और कुछ पुलिस कर्मचारी बैठे थे । कादिर को सहसा थाने के द्वार पर देखते ही एक पुलिस ने आगे बढ़ कर पूछा—'आप ।'

'जी । रिपोर्ट लिखाने आया हूँ ।'

'कैसी रिपोर्ट लिखानी है ?' पुलिस ने कादिर से पूछा ।

'मेरी पत्नी को मेरे एक दोस्त ने...

'भगा लिया है । क्यों ! है न यही बात ?' पुलिस ने चुटकी लेते हुए प्रश्न किया । फिर एक कमरे की ओर अँगुली उठाकर बोला—'वह देखो ! सामने मुन्शी जी बैठे हैं । उनसे जाकर कह दो । वे आपकी रिपोर्ट लिख लेंगे ।' कहता हुआ पुलिस एक ओर चला गया ।

तब रहमान और कादिर उस कमरे की ओर बढ़े जिसमें मुन्शी बैठा रोजनामचा लिए कुछ लिखने में व्यस्त था । उसके निकट पहुँच कर कादिर ने सारा किस्सा कह सुनाया । गवाही में उसने रहमान को लिखा दिया । पश्चात मुन्शी ने स्वयं प्रश्न किया—'औरत की तस्वीर वगैरह है तुम्हारे पास या नहीं !'

'तस्वीर ! नहीं । लेकिन यह मुझे मालूम है कि मेरे दोस्त के साथ कलकत्ता भाग कर गई है ।'

'कलकत्ता ! यह कैसे मालूम हुआ कि वह कलकत्ता गई है ।'

'भागने के पहले प्रायः वह कलकत्ते जाने का स्वप्न देखा करती थी। मुझे पूर्ण रूप से विश्वास है कि वह उसके साथ कलकत्ता गई है।'

'आपके उस दोस्त का क्या नाम था।' मुन्शी ने अपने चश्मे को उतार कर मेज पर रखते हुए पूछा।

'जी ! उसका नाम हबीब था।'

'हबीब।' कुछ चौंक कर उसने पूछा।

मुन्शी को चौंकते देख कर उसने कहा—'आप उसे जानते हैं।'

'नहीं। उस आदमी के बारे में एक फकीर पूछ रहा था।'

'फकीर पूछ रहा था। लेकिन यह कैसे हो सकता है। हम लोगों को छोड़ कर दूसरा कोई नहीं जानता। फिर वह फकीर कैसे जानता है उसे ?'

'यह मैं नहीं जानता। फ़कीर अक्सर पूछने आया करता है। मेरा ख्याल है। वह आप लोगों को अवश्य जानता होगा।'

रहमान थोड़ी देर तक सोचता रहा। पश्चात उसने कादिर की ओर घूम कर कहा -'तुम्हें याद नहीं। किन्तु बात ऐसी नहीं है। मुझे याद आ गया। वह गाड़ी में जो मिला था। सम्भव है। वही होगा।'

कादिर की चेतना लौटी। उसने कहा—'हाँ। यह फकीर हमारे गाँव का निवासी है।'

'फिर उससे पता लग सकता है।'

'अब यह आपके ऊपर है। लेकिन जब तक पुलिस छान बीन नहीं करेगी पता लगना असम्भव सा प्रतीत होता है।'

'यदि वह इस शहर में होगा, तो अवश्य पकड़ लूँगा। लेकिन अगर कलकत्ता भाग गए होंगे तब भारत सरकार को खबर देनी पड़ेगी।'

'भारत सरकार तो उसे अपने यहाँ ले लेगी । न जाने क्या होगा । खैर ! यदि आप लोग मदद नहीं करेंगे, तो सम्भव है कि वह उससे निकाह कर ले ।'

'अब आप जा सकते हैं । बेकार की बातों से कोई लाभ नहीं है पुलिस अपनी कारवाई करेगी ।' मुन्शी ने खरी खोटी सुनाकर कादिर और रहमान को विदा किया ।

कादिर और रहमान अपना सा मुँह लेकर लौट पड़े । घर लौटकर कादिर और रहमान कुछ देर तक सोचते रहे ।

थोड़ी देर बाद रहमान बोला—'भाई ! कादिर इन बातों को छोड़ो ! कागज दो ! अब्बा को एक खत लिख दूँ !'

रहमान की युक्ति कादिर को उपयुक्त सी जान पड़ी । उसने आलमारी से कागज और पेन्सिल निकाल कर रहमान के सामने रख दिया । रहमान खत लिखने लगा :—

अजीज चाचा साहब !

अर्ज यह है कि हबीब आज सुबह से दोनों लड़कियों के साथ शहर से लापता है । कुछ लोगों का विश्वास है कि कादिर की पत्नी को भगा कर वह कलकत्ते गया है । इस लिये आप का आना आवश्यक है ! खत देखते ही आप चल दें !

जनाब का
अर्जमन्द
रहमान !

खत लिख कर रहमान ने उसे लिफाफे में बन्द कर दिया और कादिर को छोड़ने के लिए दे दिया ।

कादिर लिफाफे को छोड़कर घर लौट रहा था तो रास्ते में उसकी नजर एक फकीर पर पड़ी । उसे देखते ही कादिर जाने क्यों ठिठक कर खड़ा हो गया । किन्तु सहसा

फकीर जब उसके सन्मुख आ खड़ा हुआ तो वह हिच-किचा सा गया! अपने सन्मुख उसे देखकर कादिर ने पूछा—'क्या चाहिए? पैसा?'

'पैसा नहीं! तुम मुझे नहीं पहचानते!'

'जी नहीं!' कादिर ने फकीर के चेहरे पर दृष्टि गड़ाते हुए कहा।

'मैं तुम्हारे मकान पर जा रहा था! जिसके लिए तुम इतने परेशान हो! उस परेशानी को दूर करने के लिए मैं तुम्हारे पास ......'

'मेरी परेशानी! आप कैसे समझते हैं कि मैं परे-शान हूँ!'

'आदमी के चेहरे की पेशानियाँ से उसके दिल की परे शानियाँ नजर आ जाती है।' चलो खड़े खड़े क्या देख रहे हो?' मैं वैसा फकीर नहीं हूँ, जो सड़कों पर माँग कर अपना पेट भरते है। फकीर वह है, जो खुदा की यादगारी के साथ समाज और इनसान के बीच में रह कर सब की मदद कर सके।'

'तो तुम मेरी मदद कर सकते हो?' कादिर ने उत्सु-कता प्रकट करते हुए पूछा।

'हाँ। लेकिन मेरी मदद से तुम फल की आशा नहीं रख सकते! फल तुम्हारे सम्मुख आ सकता है किन्तु उसका इस्तेमाल करना या न करना यह सब तुम्हारे ऊपर है! जहाँ स्वार्थ होता है, वहाँ फल नहीं मिलता। अगर मिलता भी है, तो उससे किसी इनसान के दिल को शान्ति नहीं मिल सकती!'

'बाबा! तुम सचमुच पहुँचे हुये आदमी मालूम पड़ते हो!'

'यह तुम्हारा सोचना है। सच्ची बात को कहना ही

साधुत्व और फकीरी नहीं है। तुम्हारे दिल में स्वार्थ की भावना अधिक है जिसकी सीमा बालू से बनी है।'

'लेकिन आप यह कैसे जानते हैं!'

'सुबह तुम थाने पर गये थे न? हबीब को तुम ढूँढ़ते हो परन्तु वह अब कलकत्ता का निवासी है। तुमने उसे मुलजिम करार दिया है। किन्तु वह कसूरवार नहीं है। मुझे सारी बातें मालूम हैं।

'आप तो खुदा के पैगम्बरों सी बातें करते हैं।' बीच ही में कादिर ने बात काटते हुये कहा।

'नहीं। खुदा हर जगह है। और तुम्हारे दिल में भी है। तुम खुद उसके एक पैगम्बर हो। हबीब ने तुम्हारी पत्नी को नहीं भगाया है। वह स्वयं एक दूसरी लड़की से प्रेम करता है। उन दोना का प्रम सच्चा है। जीवन में उसने उस लड़की को छोड़कर दूसरी का ख्याल भी नहीं किया। उसकी मदद के लिये मैं कैम्प के अस्पताल में गया, परन्तु वहाँ उसकी माशूक का पता न लगा।'

'लेकिन यह सब आप को कैसे मालूम है!"

'आदमी, आदमी को बहुत जल्दी भूल जाता है। तुम गाड़ी में मुझसे मिले थे।'"

'ओ। अब पहचान सका हूँ।' कहकर कादिर ने फकीर के चरण में अपना सिर झुकाया।

कादिर की परेशानी जाने क्यों फकीर की दिव्य दृष्टि से एकाएक दूर हो गई। वह उसे अपने साथ लेकर घर की ओर चल पड़ा। फकीर बार बार मना करता रहा। पर कादिर ने एक न सुनी!

घर आया तो रहमान मुँह लटकाए बैठा था। फकीर के साथ कादिर को प्रवेश करते देख, उठकर खड़ा हो गया। और हाथ जोड़ कर आदाबर्ज कर बोला आप'''

'हाँ ! हबीब के ऊपर जुर्म लगाने का प्रयास तुमने जो किया है वह झूठा है।

'झूठी है !' रहमान ने आश्चर्य चकित होकर पूछा।

'हाँ ! जिसने इसलाम के सच्चे वसूल और फर्ज को अपना समझा। जिसकी दुनिया दूसरे की मदद में खुद उजड़ गई। वह तुम्हारी भलाई नहीं चाहता, तो बुराई भी नहीं चाह सकता। इसका जीवन दूसरे के लिए बना है! वह इसलाम का सच्चा पुजारी है। उसकी जिन्दगी पर झूठा दोष लगाना अपने को पापी बनाना है ! हबीब से अगर मिलना चाहते हो, तो मैं उसके निकट तुम्हें पहुँचा सकता हूँ।'

'सच।' कादिर ने खुशी में उछल कर पूछा।

'हाँ। मुझे मालूम है। कलकत्ता गया है। लेकिन जिस दुनिया का तुम स्वप्न देखना चाहते हो वह नहीं हो सकता। तुम उस लड़की से शादी करना चाहते हो, परन्तु वह लड़की तुम्हारे साथ शादी करना नहीं चाहती !'

'किस लड़की के साथ !'

'देखो ! मैं सब कुछ जानता हूँ। मुझसे छिपा कर तुम अपने आप को धोखा दे रहे हो। काफिर को जब तुम दुश्मन रखते हो। उसे कत्ल कर जन्नत का सपना देखते हो फिर काफिर की लड़की से शादी की बात क्यों सोचते हो ! मैं बीच में एक दरिया बनकर तुम लोगों को अलग करना नहीं चाहता, लेकिन तुम और वह लड़की ठीक दरिया के दो किनारे पर हो। हाँ। उस हबीब पर तुम्हारा गुस्सा है। उसके साथ मिलकर निबट लो।'

फकीर चुप हो गया। उसकी कल्पना की दौड़ान आगे न बढ़ सकी। वह उठ पड़ा और कमरे से निकलना चाहता था कि कादिर ने अर्ज करते हुए कहा—'मैं आप की बात मानने के लिए तैयार हूँ। परन्तु.....।'

'मानना चाहते हो तो कल मेरे साथ कलकत्ते चलो। पुलिस से अपना बयान वापस कर लो।'

'लेकिन ऐसा करूँगा, तो मैं स्वयं मुलजिम करार दिया जाऊँगा।'

'तुम फिकर मत करो। पुलिस जब कलकत्ते हाई कोर्ट में इस मामले को रखेगी, तब मैं स्वयं निबट लूँगा!' फकीर ने दरवाजे से लौटते हुए कहा। फिर रहमान को चुप रखकर बोला—'चुप क्यों हो?' खुशी के साथ शाम की गाड़ी से कलकत्ता चलने की तैयारी करो! मैं दस बजे रात को आऊँगा!'

इसके उपरान्त फकीर चला गया।

२०

दस बजे रात को रशीदा, शील और राजन तथा नर्स पुनः कैम्प में लौट आए! रशीदा और शील को कैम्प में छोड़कर राजन नर्स के साथ वापस लौट गया। कैम्प में अंधेरा था अतः पहले रशीदा ने लालटेन जलाकर प्रकाश किया। तत्पश्चात अपने बिस्तर के समीप आकर खड़ी हुई, तो शील ने उसे छेड़ते हुए कहा—'डा० साहब तुझ पर लट्टू की तरह नाच रहे हैं रशीदी।'

अभी बात पूरी भी न हुई थी कि किसी ने पुकारा—'बेटी! कोई है!'

आवाज सुनते ही शील दरवाजे पर आकर खड़ी हो गई। सामने उस युवक को देखकर उसका हृदय धक से करके रह गया! कुछ कहना चाहती थी, कि युवक स्वयं बोल उठा—'आप लोग जरा मेरी माँ का ख्याल रखें। मैं अभी आ रहा हूँ। जरा डाक्टर को बुलाने जा रहा हूँ।'

युवक चला गया। शील को लगा जैसे युवक की उस वाणी में उसका अपनत्व सा भरा पड़ा है। अतः दरवाजे से लौटकर रशीदा से बोली—'पड़ोस में उनकी माँ की तबियत खराब है। तुझे देखभाल करने के लिए कह गए हैं।'

'तू चल। मैं अभी आ रही हूँ।' कहकर रशीदा बिस्तर पर लेट गई। वह शील को भेजना चाहती थी। अतः बहाना बनाकर रह गई। शील लजाती सी उस कैम्प के भीतर जा पहुँची। थोड़ी देर बाद रशीदा शील के समीप ही जाकर बैठगई। वृद्धा लेटी दोनों की ओर एक-टक देखती रही पश्चात् शील की ओर देखकर बोली—'तुम दोनों का रंग और रूप भी बहुत कुछ मिलता जुलता है, किन्तु... ।

'किन्तु क्या माँ ?' शील ने वृद्धा की अँगुली को अपने हाथ से सहलाते हुए कहा।

'किन्तु—बेटी का प्यार मुझे प्यार नहीं मिल सका। किन्तु बेटी तुझे हमेशा अपने पास रखने को जी चाहता है।'

'तो मैं पड़ोस में ही तो रहती हूँ। कोई दूर रहती नहीं ! मैं दिन में सारे घन्टे आपके पास ही बिताऊँगी ! साथ ही मेरी बहिन भी आ जायगी !'

तभी कैम्प के दरवाजे पर जूते की चरमराहट ने सब का ध्यान भंग कर दिया। शील और रशीदा ने आँख उठाकर देखा। सामने एक कम्पाउन्डर राजन डाक्टर और साथ में सेवा नर्स खड़े हैं ! उन्हें देखते ही शील कुछ सिमिट सी गई। किन्तु अपने को सम्भाल कर बैठती हुई बोली—'श्री राजन बाबू ! मेरी माँ का प्राण बचा लीजिए।'

'और शील ! तुम यहाँ।' फिर रशीदा की ओर घूमकर पूछा—'रशीदा भी यहीं है।' डाक्टर साहब ने पूछा।

'हाँ। देखिए न। इनकी दशा दिन पर दिन कसी होती जा रही है।'

राजन ने थोड़ी देर तक उस वृद्धा के सारे शरीर का स्टीथासकोप से निरीक्षण किया। इसके बाद नायर की ओर देखकर बोला—'आप किसी तरह की चिन्ता न करें। इनके दिल पर भारी सदमा पहुँचा है जिसके कारण इनके दिल में कमजोरी आ गई है।'

'फिर यह कैसे दूर होगी। सुई दिलानी पड़ेगी।'

'नहीं। दवा के साथ देख भाल और मनबहलाव का होना आवश्यक है।'

लेवा ने अपना बैग उठा लिया और कैम्प के बाहर निकलने लगी तभी नायर ने अपनी जेब से फीस के रुपये निकाल कर उसके हाथ पर रखना चाहा कि लेवा बोली—'नहीं नहीं'। रुपया नहीं ले सकते! राजन बाबू की डाक्टरी इसी बात पर नहीं चलती।'

'लेकिन यह उनका पेशा है। पेशा पैसे पर ही चलता है।'

'आप तो किसी लेखक जैसी बातें करते हैं। रुपया आप रखें। सरकार ने हमें इसलिये नियुक्त किया है। इसमें रुपया की बात नहीं।'

नायर आगे कुछ न कह सका। रशीदा और शील एकटक उसकी ओर देखकर रह गईं। लेवा सबको नमस्ते कहती हुई कमरे से निकल गई। राजन चुप चाप माँ की ओर एकटक देख रहा था। सहसा माँ ने कमरे की मौनता भंग करते हुए कहा--'बेटा! नायर अब तो तू आगई है। इनको जाने को कह दें। बड़ी अच्छी चिढिया है, दोनों।'

पर राजन ने जैसे सुना ही नहीं। अनसुनी सा करके बोल उठा 'जी! आप लोगों ने बहुत कष्ट किया। धन्यवाद!'

'कष्ट की कौन सी बात है। हम आपके पास रहते हैं। आपके कष्ट में काम आना हमारा कर्त्तव्य है।' शीला ने उत्तर दिया। फिर हाथ जोड़ कर बिदा माँगी और रशीदा के साथ चल पड़ी। रशीदा ने भी हाथ जोड़ दिए और अपने कमरे में चली आई।

२१

दूसरे दिन हबीब निर्मला प्रतिमा के साथ कलकत्ता शहर में पहुँचा गया। किन्तु बन्दरगाह से उतर कर शहर में प्रवेश करना चाहता था कि पुलिस ने आ घेरा। पूछताछ करने के बाद थानेदार ने हबीब को बरामदे में पड़ी बेन्च पर बैठ जाने के लिए आग्रह किया। फिर स्वंय एक कुर्सी पर बैठकर बोला 'क्यों किस अपराध में तुम्हें ..'

'जी कसूर किसका है। यह मैं नहीं जानता। आपके जाति की दो लड़कियाँ मेरे साथ हैं। अभी तक मैं उन्हें बचाता आरहा हूँ। आप इनके पति के पास किसी तरह भेज सकें तो अच्छा हो।'

'और आप!'

'मैं। मेरा नाम हबीब है।'

'लेकिन तुम्हारी जाति तो इनके खून की प्यासी है।'

'हाँ। लेकिन प्यास अधिक देर तक नहीं रहती।'

'इनसान इनसानियत से गिर कर जानवर हो जाता है तब उसकी प्यास पानी से नहीं बुझती।'

थानेदार के साथ सभी ने जन-सेवक-संघ के अफसर से मिलकर हबीब का परिचय दिया। उसके बाद अफसर ने निर्मला से पूछा—'किस मोहल्ले में रहते हैं तुम्हारे पति।'

निर्मला ने अपनी कहानी शुरू की। एक एक करके उसने सारा किस्सा कह सुनाया। प्रधान कर्मचारी ने पूरा विवरण लेकर उस आदमी की खोज में अपने कुछ कर्म-चारियों को ढूँढ़ने के लिए भेजा। थानेदार अपने थाने पर चला गया। उसके बाद अफसर ने हबीब और निर्मला की एक ओर रहने के लिये स्थान दे दिया।

जब तीनों एक ओर बैठ गये, तो एक स्वयं सेवक ने आकर आफिस की मौनता भंग कर दी और कहा—'वह आदमी आ गया है।'

'उसे भीतर बुला लो!'

आदमी बाहर चला गया। थोड़ी देर बाद कोट-पैन्ट में एक आगुन्तक ने प्रवेश किया। प्रधान कर्मचारी के सम्मुख एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा—'आपने मुझे बुलाया है?'

'हाँ! आपने अपनी पत्नी प्रतिमा देवी को पाने के लिये पुलिस में रिपोर्ट की है न?'

'जी! कुछ पता लगा आप लोगों को?'

'हाँ! लेकिन आप किस गाँव के रहने वाले हैं।'

'मोहनामुहल्ला और मछुआ बाड़ी में मेरी ससुराल है।'

'आप तशरीफ रखें।' कह कर वह बैठ गया!

प्रधान कर्मचारी ने अपने चपरासी को सूचित करते हुए कहा—'उन लोगों को भीतर से बुला लो।'

'अभी आया!' कहता हुआ वह चला गया!

थोड़ी देर के पश्चात ही उसने अपने साथ उन तीनों को लाकर अफसर के सम्मुख उपस्थित किया। हबीब जब निर्मला और प्रतिमा के साथ बैठ गया, तो प्रधान ने आगु-न्तक की ओर देखकर पूछा—'आप इनमें से किसी एक को पहचानते हैं या नहीं?'

प्रधान की बात पूरी भी न हो पाई थी कि प्रतिमा दौड़ कर उसके पैरों से चिपक गई। बीब की धारणा गलत निकली। उसने समझा था कि निर्मला विवाहित है। इसी उधेड़ बुन में पड़ा हबीब कुछ सोच रहा था कि निर्मला ने मुसकराते हुए कहा—'क्यों ? आप अचरज भरी नजरों से क्यों देखा करते हैं।'

'तुमने कहा था कि प्रतिमा कुआँरी है।'

'हाँ ! उसके साथ ही यह कहा था कि वह विवाहित भी है।'

'दो रंग की ब तें !'

'भय से बचने के लिये कभी कभी ऐसी बातें भी करनी पड़ती हैं।'

'लेकिन मैंने सदा तुम लोगों की शंका का समाधान करने के लिये कोशिश किया है। फिर इस चालाकी से क्या फायदा !'

अब निर्मला से कोई विशेष लाभ नहीं होता। हबीब के हृदय में भ्रमोत्पादक बातें देखकर उसने कहा—'भाई ! बहिन ! अगर ऐसा मैं नहीं करती तो कादिर और रहमान उसे अधिक दिन तक नहीं ठहराते। प्रतिमा को बचाना मेरा भी फर्ज था !'

'समझा ! निर्मला ! तुम अपना जीवन बलिदान करना चाहती थी। बलिदान की सीमा ही नवीन सर्ग की कल्पना होता है।'

हबीब अपना वाक्य पूरा कर आगुन्तक की ओर घूमा और उसके कन्धे पर दाहिना हाथ रखते हुये कहा—'आप का शुभ नाम।'

'दिनेश !'

तत्पश्चात दिनेश ने हबीब को अपने गले से लगा लिया ! प्रधान इस मिलन को देखकर मन ही मन फूल उठा। फिर

हबीब को धन्यवाद देते हुये बोला—'भाई तुम आज से मेरे छोटे नहीं, बल्कि बड़े भाई हुए।'

'परन्तु ऐसा नहीं है। एक इनसान के नाते मैंने अपना फर्ज पूरा किया है।'

तभी प्रतिमा हबीब को सावधान करती हुई बोली—'आप नहीं जानते हबीब भाई ने हम लोगों के लिये अपनी कुरबानी कर दी है।'

'तो तुम अब मेरे साथ चलो हबीब भाई!'

'नहीं। मैं अब अपने देश लौट आऊँगा!' हबीब ने निर्मला के साथ कैम्प से बाहर निकलते हुए कहा।

'देश! वह तुम्हारा कौन है हबीब! तुम तो रशीदा बहिन की खोज में निकले थे! तो क्या उन्हें अब भूल रहे हो?'

'नहीं प्रतिमा! रशीदा को कैसे भूल सकता हूँ। जिसकी सीख ने मेरी आँखें खोल दीं। उस हृदय की याद नहीं भूल सकती। तुम लोग खुश रहो। हमें तो जीवन भर सफर करना है!'

'सो क्यों?'

'इसलिये कि जीवन खुद एक सफर है।'

'नहीं नहीं अगर जीवन सफर है, तो उसकी मंजिल भी कहीं न कहीं अवश्य है। और उस मंजिल की दूरी तय करने के लिए प्रतिमा जीवन भी ..

'उतावलेपन की बात केवल बात है। जजबात और बात में फर्क होता है! खैर छोड़ो चलो। तुम्हारा घर तो देख लूँ।'

कहकर हबीब आगे बढ़ा। उसके साथ निर्मला और प्रतिमा के पति ने अपने मोहल्ले के लिए प्रस्थान किया।

अफसर इस मिलन को देख कर मन ही मन फूल उठा।

२२

आगन्तुक ने नजरें फेरीं और घूर कर देखा! आँखे मिलीं और फिर हिचका और सहम कर जाने क्या सोच कर रह गया!

यह नायर था! सामने शील को देख कर उसने अपना कदम आगे बढ़ाया! क्षण भर में शील के समीप पहुँच कर बोला—'क्यों ? कैसे खड़ी हो।'

'आप! कैसे हैं! लड़के कपड़ा धो रहे थे। फिर आप··· ।'

'शोर बहुत करते हैं। मैं लिखता हूँ। और मेरे लिखने पढ़ने में बाधा पड़ती है।'

'बच्चे की उम्र बाधा नहीं मानती है। यह एक ऐसा युग है जिसके स्तम्भ के नीचे मनुष्य संसार को समझने में नहीं रहता, बल्कि स्वतंन्त्र रहकर विचरने वाला एक प्राणी होता है। जिसे उचित अनुचित का ज्ञान नहीं होता। फिर आप उस युग से निकल आए हैं। इसलिए··· ··

'उसे समझा! आपने जो कुछ कहा सत्य है! आप ·!'

'जी नहीं!

'नाम·· आपका ?'

'जी—शील।'

'शील! नाम सुन्दर है। विचार भी सुन्दर हैं। किन्तु एक बात है—

'सो क्या ?'

'आप लोग इस कैम्प में अकेले रहती हैं। लोग क्या कहते होंगे ?'

'आप लिखते हैं न ?'

'हाँ ! मैं लिखता हूँ। इससे क्या मतलब ?'

'मतलब ! मतलब यह है कि जो आदमी लिखता है पढ़ता है वह दुनिया को समझता है।'

'कहिए माता जी की तबियत कैसी है ?'

'अच्छी है। आज अपने भाई से मिलने गई हैं ?

'यानी मामू साहब से ?'

'आपने उन्हें कैसे·····।' अंगुली और भौंहें सिकोड़कर वह बोला।

'कैसे ! आइए आप को चाय पिलाऊँ।

'जी नहीं फिर कभी आऊँगा ?'

'अच्छा तो आप के कैम्प में चलती हूँ !'

'कैम्प ! लेकिन माँ नहीं हैं।'

'तो क्या ! आप तो रहेंगे। म आपके घर से कोई चीज निकाल नहीं·····

'तो चोरी करने की आदत भी है आपको ?'

'नहीं ! अब सीख रही हूँ। और जल्द ही सीख जाऊँगी।' शील बगल के कैम्प में चली गई।

नायर ने निकट पहुँच कर पूछा—'यह सब क्या ?

'तुम्हारी बहिन देख लेगी तो।'

'आप आदमी नहीं औरत के प्रवृत्ति के मालूम पड़ते हैं।'

'सो तो नहीं कह सकता, लेकिन किसी अनजान औरत या किसी कुमारी युवती से बात करना भारत में पाप समझा जाता है।'

'तो तुम्हें किसी से डर नहीं लगता।'

'डर कर मैं काम नहीं करती ! अपना अस्तीत्व और मर्यादा स्वयं समझती हूँ।'

'तो एक प्रश्न का उत्तर दे सकती हैं आप ?'

'अवश्य !' स्टोव से केटली उतारते हुए उसने कहा।

'प्रेम करना जो लोग कहते हैं कि पाप है क्या उसे पाप समझते हैं।'

'जी हाँ ! इसलिए कि जिस मनुष्य के विचार सीमित होते हैं, जिनका क्षेत्र एक नर्कीय कीड़े के समान खाने कमाने दगाबाजी, चोरी और सन्देह के विचार से लड़ते रहते हैं।'

नायर ने एक चुस्की ली और इस दुनिया की ओर देखकर बोला—'आप...'

जी अब चलती हूँ। रशीदी आ रही होगी। दुनिया की छाया पड़ते ही... कहकर शीलो भाग गई। नायर अपना सा मुँह लेकर रह गया ?

शील कैम्प की ओर चली तो देखा रशीदा दरवाजे पर खड़ी प्रतीक्षा कर रही है। उसे देखते ही दूर से बोली—'क्यों रे कहाँ गई थी !'

'माता जी ने बुलाया था।'

'माता जी ! अरी वे तो कैम्प गई हैं।'

'कैम्प ..'

'हाँ ! हाँ देखो शील। मुझसे छिपाया न करो ? दुनिया की बातें न्यारी होती हैं। तुम किसी गलत रास्ते पर जा रही हो।'

'बहन ! तुम भी तो एक बार उस गलत रास्ते पर चल चुकी हो। और अब तक उस रास्ते से अलग नहीं होना चाहती ?'

'शीला !' कहकर रशीदा उसके गले से चिपक गई !

\+ \+ \+

फकीर के साथ कादिर और रहमान ने कलकत्ते आकर सारे शहर की छान बीन कर ली। किन्तु किसी को कुछ ज्ञात नहीं हुआ। हबीब का पता भी न चल सका। अन्त में एक साँझ को फकीर धर्मतल्ला स्ट्रीट से लौट

रहा था कि उसकी नजर दो युवतियों पर जाकर अटक गई। सामने से आते देख वह ठहर गया!

थोड़ी देर के बाद युवतियों ने फकीर के निकट से गुजरना चाहा, तो उसने उनकी मुद्रा भंग करते हुए रोका—'ठहरो!'

आवाज के सुनते ही दोनों खड़ी हो रहीं। फकीर उनके समीप आ गया। समीप आकर बोला—'तुम लोग किस की लड़की हो?'

'आप। तो फकीर हैं। सब कुछ पहचान सकते हैं।'

'लेकिन आज की फकीरी मनोविज्ञान है। मनोविज्ञान से सारा आकर्षण फैल रहा है। फिर भी ऐसा लगता है कि तुम लोगों को मैंने कहीं देखा है।''

'लेकिन हम आपको नहीं पहचानते।'

'देश को छोड़ते ही नागरिक के दिमाग की रेखाएँ भी वातावरण के अनुसार हो जाती हैं। सुनो तुम लोग बंगाल की महिला हो न!'

'जी'

'मोहला मोहल्ला में तुम्हारा मकान है न।''

'जी'। कहकर रशीदा ने फकीर के ललाट की ओर देखा। सम्भवतः वह यह समझना चाहती थी कि उसके साथ आने वाला फकीर तो नहीं है! अरज करती हुई बोली—'आप कैसे जानते हैं!'

'मैं सब कुछ जानता हूँ, किन्तु तुम लोगों को अब तक ढूँढकर नहीं पा सका!'

'आखिर आप हम लोगों के पीछे क्यों पड़े हैं?''

'यह मेरा फकीरीपन है। दो आदमियों के वियोग की रेखा और संयोग की रेखा यदि खींच कर मिट जाना

चाहती हो, तो उसकी रक्षा करना ही मेरा फर्ज है। तुम नादिर की लड़की हो न।'

'हाँ! अभी तक तुमने नहीं पहचाना! तुमने कभी देखा नहीं! परन्तु मैंने देखा है। मेरी आँखों में हबीब की छाया भी है जिसके लिए तुम विह्वल रहती हो।"

'या खुदा!'

'खुदा! खुदा फर्ज को समझने वालों का साथ देता है। कायर और डरपोक के लिए उसके हृदय में कोई स्थान नहीं है।'

'डरपोक! मैं कैसे डरती हूँ।'

'बात मत करो! हबीब इसी शहर में आया है। आज कई रोज से वह यहाँ रह रहा है। मेरे साथ कादिर और रहमान भी आये हुए हैं। हबीब की वे हत्या करना चाहते हैं।'

'हबीब! कहाँ है मेरा हबीब?'

'यह बात अब तक मालूम नहीं हो सकी है। लेकिन इतना जरूर है कि वह इस शहर में है। साथ ही निर्मल और प्रतिमा नामक दो युवतियों को सुरक्षित कर उसके परिवार को सौंप चुका है। परन्तु कहाँ गया। उसका कोई पता नहीं।'

'हाय! मेरे अच्छे हबीब। आकर भी तुम...

'पागल मत बनो बेटी! हिम्मत से काम लो। अभी दुश्मन सर पर है। हबीब का पता पाने पर भी मैं उनको सूचित नहीं करूँगा। और न तुम्हारे मुलाकात के विषय में कुछ कहूँगा।'

'तब!'

'तब तुम अपना पता दे दो।'

रशीदा फकीर की इस चाल को न समझ सकी। उसने अपने समीज से कलम निकाल कर एक कागज पर पता लिख दिया। परन्तु उसे लगा—फकीर उसे धोखा तो नहीं

दे रहा है। लेकिन उसे इससे क्या मिलेगा। मिलेगा क्या दूसरे क्षण सोचा हबीब तो जेल में था। उसे कारागार मिला था। फिर पाकिस्तान से वह कैसे आया। उधेड़बुन में पड़ी रशीदा अपने पैर के सैन्डिल से सड़क की मिट्टी कुरेदने लगी, तो उसने कहा—'क्यों? डर रही हो? मेरा अपना कोई स्वार्थ नहीं है। केवल उस व्यक्ति को दंड दिलाना है, जो दूसरे की चीज को अपना समझता है।'

फकीर चला गया। पुनः रशीदा शील के साथ चल पड़ी।

सिलाई के स्कूल में आज उसका मन नहीं लगा। सामने शील बैठी थी। उसके साथ कुछ अन्य युवतियाँ बैठी पाठ पढ़ रही थीं कि सामने से प्रधान अध्यापिका ने प्रवेश किया और पूछा—'क्यों रशीदा। आज ही तुम काम करने आई और ऐसा मन क्यों कर लिया।'

'जी कुछ नहीं! मैं भूल गई थी। आज घर के लोगों की याद आ गई थी।'

'नारी से किसी नारी का भेद नहीं छिप सकता। तुम किसी विगत स्मृति के बोझल क्षणों से विह्वल हो। अच्छी बात है तुम कल से आकर स्कूल में अपना काम करना।'

अध्यापिका चली गई।

रशीदा भी उठ खड़ी हुई! आज काम का पहला दिन था। इसलिए उसको कुछ हिचकिचाहट मालूम हुई। अतः शील के साथ कैम्प लौट आई। सामने से डाकिया आता दिखाई दिया।

डाकिया जब निकट पहुँच गया तो उसने पूछा—'कोई चिट्ठी ..?'

'हाँ रजिस्ट्री है। इस कैम्प में शील रहती है?'

'हाँ। कहाँ है...?'

डाकिए ने अपने कान से पेन्सिल उतारका रशीदा के हाथ में रख दिया। फार्म पर दस्तखत कर रजिस्ट्री लेकर जब खोला तो देखा, शील ने जिस सम्पादक को पत्र लिखा था। उसने रशी हबीब का पूरा परिचय लिख कर भेजा था। पत्र पढ़कर रशीदा मन ही मन उल्लास की भावना में उठ पड़ी। दौड़ कर शील के पास चलने को तैयार हुई थी कि शील एक छोकड़े के साथ राशन लेकर आ गई। रशीदा को खुश देखकर बोली—'रशी बहन! आज खुश हो।'

'हाँ! तू ने उस सम्पादक के पास खत भेजा था न। आज उसने उनका पूरा परिचय लिखकर भेजा है, लेकिन वे यहाँ नहीं है। ढाका हैं।'

'ढाका हैं। फिर फकीर कैसे कह रहा था।'

'यह तो एक प्रश्न है। राजन इस बात पर प्रकाश डाल सकता है।' × × ×

इधर नायर चाय बनाने में व्यस्त था। चाय की चुस्की लेकर जब माँ के निकट पहुँचा तो उसने अपने निकट बैठाकर पूछा—'क्यों नायर? कैम्प में कौन है?'

'वही पड़ोस की लड़की है।'

'दोनों बहिनें बहुत अच्छी हैं।'

नायर मानवस्वभाव केअनुसार कुछ लज्जित सा होगया। जिसे देखकर माँ समझ गई। बोली—'तू क्यों शरमा रहा है। मैं सोचती हूँ कि अगर वह मेरी बहू बन······

'नहीं माँ। विवाह एक बन्धन है, जो मनुष्य की प्रगति में बाधा उपस्थित कर सकता है। इस बात की कल्पना मैं नहीं कर सकता।

'लेकिन मेरी इच्छा है कि उसे मैं अपनी बहू बना लूँ।'

'परन्तु उसकी बड़ी बहिन को स्वीकार नहीं? विश्वास न हो तो चर्चा करके देख लो।'

'आखिर किस कारणवश ?'

'मैं नौकरी नहीं करता, पूँजीपति नहीं हूँ। इसलिए।'

'और तेरी यह कला।'

'कला की कीमत कुछ नहीं है। दुनियाँ इसे अपने मनोरंजन का साधन समझती है, परन्तु ..'

'परन्तु क्या ?'

'इसका मूल्यांकन नहीं कर सकती।'

'लेकिन तेरी कला काल्पनिक नहीं है। वह तो समाज का शिक्षक बन कर रहती है। फिर दुनियाँ ऐसा क्यों समझती है।'

'इसलिये कि सरस्वती और लक्ष्मी में बैर है।'

नायर को मासी की बात अच्छी न लगी तो उठकर कैम्प की र चला दिया। तब तक शील ने स्वयं कैम्प से निकल कर पूछा—'क्यों ! कहाँ जा रहे हैं आप ?'

'खाना बन गया !'

'हाँ ! अब मैं रशीदी बहन के पास जा रही हूँ। न जाने वह अपने मन में क्या सोचती होगी ?'

'जरा चाय बना लो शील ! आज एक बात बता...'

'बात ! कैसी है वह बात ?'

'अपने जीवन की ! तुम कल से मेरे कैम्प में न आया करो।'

शील का कलेजा जैसे बैठ गया हो। वह काँपती हुई बोली—'आखिर कौन सी गलती हुई ?'

'गलती नहीं। मैं तुम्हें किसी गलत रास्ते पर नहीं देख सकता। तुम बहुत आगे बढ़ गई हो लेकिन अभी कुछ नहीं बिगड़ा है। जितना शीघ्र हो सके, तुम इस रास्ते को छोड़ कर पीछे लौट''''''

'पीछे''लौं क्यों ? नारी एक बार किसी मार्ग पर चल कर पीछे लौटना नहीं जानती।'

'सोच लो शील ! समझ लो । मैं आग का एक ऐसा गोला हूँ जिसके समीप कोई आकर सुख से नहीं रह सकता। जान बूझ कर कोई आग में पैर मत रखो। जलने के बाद केवल पछताना ही हाथ रह जायेगा।'

'यह सब आप क्या कह रहे हैं ?' शीलकी मुद्रा बदलती जा रही थी। उसके गुलाबी ओठ पर भय और चिन्ता की रेखाएं खिचकर उभरती चली आ रही थीं।

नायर अधिक न बोल सका। चुपचाप कैम्प में आकर पड़ रहा। उसकी आँखों से दो बूँदे भी टपक पड़ीं।

२३

'क्या हुआ ! हबीब ! कैसे बैठे हो।' प्रतिमा के पति ने हबीब के निकट पहुँचकर पूछा।

'एक अखबार ने अफसाना लिखने के लिए खत भेजा है ?'

'ओ ! क्या है शीर्षक !'

'रशीदा ?'

'मतलब। इस कहानी के नायक तुम हो, और नायिका सजीव है।'

'हाँ। अब मेरी तबियत भी नहीं लगती है। अब्बा का खत नही आ रहा है। जाने वे कैसे हैं।'

'अब्बा। यह क्या।'

'हाँ वे मेरे गाँव में रहते है। खेती बारी करते हैं।'

'तो उन्हें यहीं पर क्यों नहीं बुला लेते।'

'बेकार है। उनका दिमाग मजहबी ख्यालतों से इस तरह जकड़ा हुआ है कि···'

'यहाँ आकर दूर हो जायेगा।'

प्रतिमा के पति पुनः कुछ कहना चाहते थे, कि सामने के दरवाजे की साँकल खनखना उठी ! खट खट की आवाज ने सबकी मौनता भंग कर दी। आवाज सुनते ही हबीब ने प्रतिमा की ओर देखकर कहा—'भाई, प्रतिमा देखना, कोई आया है !'

प्रतिमा उठकर दरवाजा के निकट पहुँच गई। दरवाजा खोल कर देखा—सामने एक फकीर खड़ा था। प्रतिमा को काठ मार गया! वह चिल्लाना चाहती थी कि फकीर स्वयं बोला—'क्यों डर रही हो बेटी ! मैं भीख माँगने नहीं आया हूँ। भीख का दरवाजा मेरे मौत के बाद है।'

'फिर आप क्या चाहते हैं ?'

'ज्ञानचन्द जो इस मकान में रहते हैं ?'

'हाँ ! आप से मतलब !'

'मतलब ! मुझे भीतर आने का अधिकार दो। मैं सब कुछ बता सकता हूँ !'

'आप चलें !'

कहकर प्रतिमा फकीर के साथ कमरे में आ गई। हबीब और ज्ञानचन्द के साथ निर्मला की अब दृष्टि उस ओर घूमी, तो सब चकित होकर उसे देखने लगे ! क्षण भर तक सन्नाटा रहा। फकीर ने प्रत्येक प्राणी को चिन्तित देखकर स्वयं शंका समाधान करते हुए कहा—'आप लोग भयभीत हो रहे हैं। परन्तु मैं आप लोगों की भलाई चाहता हूँ !'

'तशरीफ रखिए।' हबीब ने फकीर को एक कुर्सी पर बैठने के लिए संकेत किया।

फकीर जब कुर्सी पर बैठ गया, तो ज्ञानचन्द ने पूछा—'आप ने कैसे कष्ट किया ?'

'कष्ट ! यह मेरा पुराना साथी है। आप लोगों के पास एक जरूरी काम से आया हूँ !'

'चन्दा के लिये ?' हबीब ने पूछा !

'नहीं ! आप के पास हबीब नाम का कोई व्यक्ति रहता है !'

'हबीब !' ज्ञानचन्द की मुद्रा बदली। उसने हबीब की ओर घूरकर देखा, किन्तु हबीब ने आँखों द्वारा संकेत कर दिया। ज्ञानचन्द समझ गया। उसने फकीर को उत्तर दिया—'जी नहीं।'

'लेकिन कैम्प और शरणार्थियों के अफसर के जरिए मालूम हुआ है कि आप के मकान पर वे ठहरे हुए हैं। अगर हो तो उनकी रक्षा करें, क्योंकि पाकिस्तान से उनके दो दुश्मन यहाँ प्राण लेने के आए हुए हैं।' बीच ही में ज्ञान, चन्द ने बात काट दिया और उत्तेजित होकर बोला—'आप ने पुलिस को सूचना क्यों नहीं दी।'

'ऐसा मैं वादा कर चुका हूँ। वे धर्म के शिकारी हैं। हबीब बोला—'उनका नाम ?'

'नाम मैं उससे ही बता सकता हूँ ! दूसरे से नहीं ?'

'अगर थोड़ी देर के लिये मैं हबीब बन जाऊँ तो।'

फकीर असमंजस में पड़ गया ! उसने अपनी आँखों को हबीब के चेहरे पर गड़ा दिया। एकाएक उसका सोया हुआ मनोविज्ञान जाग उठा। सम्भवतः उसने हबीब को पहचान लिया और हसकर बोला—'हबीब मुझसे अपने को छिपा अपने आप को धोका दे रहे हो ! समय नहीं है। कादिर और रहमान तुम्हें कलकत्ते की प्रत्येक गली में ढूँढ़ रहे है। पता पाते ही तुम्हारा खून कर देंगे !'

'अहिंसा खून को प्यार समझती है। यदि एक मनुष्य के रक्त शोषण से उसका भाई सुख प्राप्त कर सकता है, तो हबीब मरने से नहीं डरता !'

'यह त्याग नहीं है। कायरता है। तुम्हारी जिन्दगी अब जिन्दगी नहीं है, बल्कि इस पर एक और जिन्दगी का अधिकार है जिसके लिये तुम अपने आप तड़पते हो। परन्तु उस चिनगारी को बुझाने के लिये कोशिश नहीं करते। हबीब। मुझे तुम न पहचानो। किन्तु मैं तुम्हारे गाँव का ही नहीं, बल्कि एक इनसान के नाते सच्ची हमदर्दी के साथ तुम्हें बचाना चाहता हूँ। और यही समय है। निर्मला नाम की लड़की को तुमने भगाया है। कादिर और रहमान उसका बदला चाहते हैं।'

'बदला! हबीब बदला देने के लिये तैयार है।'

हबीब उठ गया! उसकी आँखें कादिर और रहमान की बातें सुन कर जल उठीं। पर वह प्रतिशोध नहीं चाहता।

फकीर की बात सुनकर ज्ञानचन्द बीच में गरज पड़ा—'फकीर बाबा! आप उन्हें पुलिस को क्यों नहीं दे देते।'

'हिंसा की भावना पुलिस से नहीं दबती, वह आग की तरह और तेजी के साथ भभक पड़ती है।'

'फिर आप ही उपाय बताइये न?' ज्ञान चन्द ने पूछा। प्रतिमा और निर्मला का हृदय भावी आशंका से भयभीत होकर धक धक कर रहा था।

ज्ञान चन्द की बात पूरी होते ही फकीर ने कहा—'उपाय एक है! निर्मला अपने पति के पास चली जाय। तुम कादिर को समझा दो। साथ ही नये कैम्प के पार्क में कल आप लोग मुझसे मिलें।'

'लेकिन कादिर और रहमान हमला करें तो?' ज्ञान चन्द बोला।

'सरकार की सत्ता अभी इतनी कमजोर नहीं हुई है। आदमी जो कुछ करता है अपनी समझ से ठीक करता है। किन्तु हिंसा की शक्ति अधिक दिन तक नहीं रहती। अगर

आप कल न आ सके तो आजके सातवें रोज उसी पार्क में मिलें। निर्मला के पति भी उस स्थान पर मिल जायेंगे।'

फकीर के वाक्य खतम भी न हुए थे कि निर्मला दौड़कर उसके पैरों पर गिरती हुई बोली—'अन्तरयामी महात्मा! मैं जीवन भर इन चरणों की सेवा करूँगी?'

'मैं अन्तरयामी नहीं हूँ। प्रत्यक्ष वादी हूँ, बेटी! तुम लोग मुझसे सब कुछ छिपा रही हो। परन्तु मैंने पूरा पता पा लिया था। मैं कुछ नहीं चाहता केवल यही कि कादिर और रहमान के हथकड़ी लगे! उसने कसूर किया किन्तु अपराधी जब अपने दोष को मंजूर कर अच्छे मार्ग को पकड़ ले, तब उसे कानून की आवश्यकता नहीं है। बाद की बात बाद में है।' यह कह कर फकीर चला गया।

२४

रात में पीड़ा घनी हो जाती है। दिन में मन इधर उधर के कामों में व्यस्त रहता है। रशीदा को स्कूल में काम करते माह बीतने को आया परन्तु आज तक उससे फकीर न मिल सका।

आज शील और रशीदा अपने कैम्प में पड़ी पड़ी कुछ बातें कर रही थीं।

शील उठकर खाना निकालने लगी, तभी दरवाजे पर राजेन की कार आ खड़ी हुई। कार से उतर राजेन कैम्प की ओर बढ़ा। तब तक पीछे से नायर ने प्रश्न किया—'डा० राजेन! आज इतनी रात गए कैसे आ गए।'

राजेन के पैर रुक गए। उसने पीछे घूम कर देखा। नायर अपने हाथ में टार्च लिए आ रहा था। जब समीप आगया तो राजेन ने कटाक्ष किया—'आप भी ड्यूटीदेते हैं।'

'जी ! जब आप जैसे आदमी का प्रतिदिन आगमन होता रहता है, तब मुझे कौन !'

'ऐसा न कहो । जिस वस्तु की कल्पना मनुष्य करता है वह नहीं प्राप्त होती ।'

'मतलब ।'

'मतलब मेरे कमरे में चलें', तो बताऊँ । इस वक्त दोनों खाना खा रही होंगी ।'

'नहीं । इस समय रशीदा से कुछ विशेष काम है ।'

राजेन की बात पूरी हुई कि रशीदा के कान खड़े हो गए । उसने जल्दी से खाना खाकर हाथ धोया और दरवाजे पर आकर खड़ी हो गई । देखा, राजेन और नायर आपस में किसी बात पर विवाद कर रहे थे । उन्हें देखते हो बोली—'क्यों डा० साहब । कैसे तकलीफ किया आपने ।'

'आ । रशीदा ! भाई आज तुमसे एक जरूरी काम है ।'

'आइए भीतर चले आइए न ।'

'भीतर नहीं, तुम मेरे साथ अस्पताल तक चल सकती हो ?'

'आखिर कोई कारण भी तो हो ।'

'अस्पताल में ही बता सकूँगा ।'

'लेकिन रात के वक्त मैं कैम्प से बाहर नहीं जा सकती ।'

'तुम्हें मेरे ऊपर विश्वास नहीं है ।'

'नारी केवल एक पर अधिक विश्वास करती है । आप ने शील को जीतने के लिए बाजी लगाई है, परन्तु वह अपना हृदय किसी और को दे चुकी है ।'

'रशीदा ! यह धोखा है । जिसे मैं अपनी समझता था, जिसके जीवन को बचाने के लिए मैंने इतनी मेहनत किया उसका फल क्या यही हो सकता है ।'

'क्रोध की आवश्यकता नहीं ! मुझे सब कुछ ज्ञात हो चुका है। जिस इनसान ने लेवा जैसी बहिन को एक बार प्यार किया और फिर उसके सतीत्व से खेलकर शील का जीवन लूटना चाहता है वह आदमी नहीं है जानवर है। डा० साहब ! रशीदा की आँखें इतनी तेज हो गई हैं कि आदमी को देखते ही वह उसके मनोभावों को भली भाँति समझ लेती है। आज तक शील ने इस प्रश्न को नहीं उठाया। परन्तु नारी होने के नाते मैं एक नारी की भावना खूब समझती हूँ। फिर भी वह आप को चाहती है, तो मुझे कोई एतराज नहीं।'

'यह तुम्हारी हमदर्दी है ! लेवा एक नर्स है। वह पत्नी होने योग्य नहीं है।'

'शील एक अनपढ़ और शरणार्थी हृदय की है, जो किसी अपने सा ही साथी के हृदय को अपना बना चुकी है। फिर आपकी प्राप्ति असम्भव है।'

'लेकिन जिसे वह अपना मानती है। उसके साथ भी शादी नहीं हो सकती। मैं जानता हूँ। नायर !' नायर की ओर घूमकर उसने कहा।

नायर से न रहा गया, वह हँस कर बोला—'मैं खुद इस योग्य नहीं हूँ कि किसी लड़की से शादी कर सकूँ।'

'चुप रहो ! इस विवाद का परिणाम क्या होगा। इसे सोच लो नायर।'

'नायर ! अपनी जिन्दगी में किसी से नहीं डरता। उसे अपनी कला पर गर्व नहीं है, भरोसा है और यदि शील उसका साथ देगी, तो उसे वह अपना सहारा समझता है। आप नारी को विलास की सामग्री समझते हैं और नायर उसे अपनी एक शक्ति और सहारा। हम दोनों का रास्ता

अलग है। मुझसे विवाद करने की आवश्यकता नहीं। जब उसकी बड़ी बहिन जीवित है।'

नायर क्रोध में काँपता चला गया। रशीदा दरवाजे पर खड़ी राजेन की ओर देखती रही। फिर समझाकर बोली—"मैं मजबूर हूँ डा० साहब।'

'लेकिन तुम मेरी देवा हो ?'

'आप खुद डाक्टर हैं। लेवा बहिन को आप प्यार करते थे न।'

राजेन असमंजस में पड़ गया। उसने रशीदा की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। चुपचाप अपने कमरे में बैठकर चला गया। रशीदा कैम्प के भीतर लौटी, तो शील खाना खा चुकी थी। रशीदा को पसीने पसीने होती देखकर बोली—"क्यों ? क्या कह रहे थे डा० साहब।'

'प्रेम में पागल हो रहे थे।'

'सो क्यों ?'

'तुमसे शादी करना चाहते हैं, करेगी ? नहीं तो कल कैम्प से निकाल बाहर कर देंगे ?'

'कैम्प उनका नहीं है। सरकार का है। डा० साहब इतने लोभी होंगे मैंने इसकी कल्पना नहीं की। आज तक उनकी धारणा को मैं नहीं समझ सकी।'

'लेकिन मैं समझती थी। रोजाना कार लेकर इसलिए वह आता था।'

'अब क्या होगा ?'

'तू जाकर नायर जी से पूछ ले कि अगर शहर में कहीं मकान मिल सके, तो हम लोगों के लिए ठीक कर दें।'

'इतनी रात गए कोई देख ले, तो क्या कहेगा ?'

'प्रेम में कोई चीज बुरी नहीं होती शील। यह काँटों का मार्ग है।'

'मैं-मैं उन्हें अपना मानती हूँ। पैसा मैं नहीं चाहती।'

'बिना पैसे का जीवन सुखमय नहीं होता।'

शील लज्जा से सिकुड़ कर नायर के कैम्प की ओर चली गई। रशीदा मन में खुशी से नाँच उठी। मन लगने के लिए एक पुस्तक को उठाकर पढ़ने लगी।

नायर अपने कैम्पके भीतर टेबुलपर बैठा कुछ लिख रहा था। माँ कैम्प के बाहर चारपाई पर लेट गई थी। नींद में उसे ज्ञात नहीं, कहाँ क्या हो रहा है। नायर की टेबुल पर कुछ पुस्तकें रखी हुई थीं जो हाल में ही छपकर आई थीं। उसे एक ओर रख वह अपनी कहानी पूरी करने में लगा था कि पीछे से शील ने उसकी आँख पर अंगुली डाल कर पर्दा कर दिया! उसने अपना दाहिना हाथ उठाकर कहा—'शील!'

आँख पर से अंगुली उठा कर शील सामने आकर खड़ी हो गई। नायर ने उसे एक बार ललचाई पलकों से देखा। फिर सामने पड़े स्टूल पर बैठने के लिए आज्ञा दे लिखना चाहता था कि शील ने हाथ से कलम छीन ली और शरारत भरी हँसी के साथ बोली--'दिन भर लिखते हो। रात भर लिखते हो। तन्दुरुस्ती का ख्याल नहीं रखते?'

'जब तुम राजेन के साथ मोटर में घूमने लगोगी तब मेरी तन्दुरुस्ती अपने आप बन जायेगी।'

शील का हँसमुख चेहरा उतर गया! मानों उसे बिजली मार गई हो। सन्न सी होकर वह बोली--'क्या कह रहे हो नायर!'

'जिसमें मेरी दुनिया को सुख मिल सके! नायर प्रेम की परिभाषा जानता है। जब एक आदमी तुम्हारे लिए इतना व्यग्र है, तब तुम उसकी रानी क्यों नहीं बनतीं! जिसमें समाज तुम्हारी इज्जत करे!

'इज्जत !'

'हाँ ! आज कलकी दुनियाँ में कलाकारकी कोई कीमत नहीं है, पैसे की कीमत है।

'यह तुम कह रहे हो ! पैसा मुझे नहीं चाहिए। शील पैसा नहीं चाहती। वह मनुष्य के हृदयका प्यार चाहती है।

'प्यार! प्रेम! ये ढाई अक्षर बहुत कटीले हैं। परन्तु…'

'यह सब कुछ मैं सुनना नहीं चाहती ! तुम मेरे हो। और मैं तुम्हें अपना बनाकर रहूँगी ! हाँ ! आज रशीदा बहिन ने पूछा है कि शहर में अगर कोई मकान मिल सके तो आप ठीककर दें। अब कैम्पमें रहना ठीक नहीं होगा !'

'सुबह देखा जायेगा। इस वक्त तो तुम सामने बैठो। आज अपनी कहानी का हीरोइन तुम्हें ही बनाऊँगा !'

'सच।'

'हाँ हीरो तो मैं सदा रहा हूँ लेकिन हीरोइन हमेशा काल्पनिक रखता था। आज की हीरोइन यथार्थ रूप में रहेगी।'

'ना बाबा। मैं कहानी की हीरोइन नहीं बन सकती। तुम्हारी पुस्तक की हीरोइन बन सकती हूँ। और रशीदा बहिन होगी साइड हीरोइन क्यों ?'

'चुप। माँ सो रही है।'

'फिर शील नायर की कलम लेकर भाग गई।

× × ×

नायर अभी तक अपने कैम्प में बैठकर लिख रहा था। सामने से एक आदमी को आते देखकर चौंक पड़ा। थोड़ी देर तक देखता रहा फिर बोला—'आप कौन है ?'

'मैं फकीर हूँ ! यहाँ पर रशीदा का कैम्प कौन है।'

'रशीदा ! इतने रात गए आप उसे क्यों ढूँढ रहे हैं भीतर आ जाइए।'

'वह मेरी बेटी है !'

'बेटी है। लेकिन वह तो कहती है कि मेरे बाप मर चुके हैं। उनकी आत्मा तो नहीं आई है।'

'नहीं! आप उसे जगा सकते हैं, तो जगा दें। बहुत जरूरी काम है।'

'लेकिन यह कठिन सा जान पड़ता है।'

'यदि इस वक्त मैं नहीं मिल सका, तो सारा काम...।

'मेरे सुनने योग्य नहीं है?'

'नहीं!'

फकीर चुप हो गया। नायर अब क्या करता! चुपचाप रशीदा के कैम्प के निकट आकर बोला—'रशीदा! बहिन रशीदा। जागती हो या सो गई?'

नायर ने आवाज दी और चुपचाप खड़ा हो गया। रशीदा साँप की तरह सोती थी। आवाज सुनते ही अँगड़ाई लेकर उठी और जाने क्यों बिना शील को जगाए ही दरवाजे के निकट आकर बोली—'कौन! राजेन बाबू?'

'नहीं, मैं हूँ नायर, रशीदा। एक फकीर मेरे कैम्प में आया है वह तुमसे मिलना चाहता है।'

'फकीर!' रशीदा ने आँखें मलते हुए पूछा।

'हाँ। आवो न। वह तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। मैंने बहुत मना किया, किन्तु वह इसी वक्त तुमसे मिलना चाहता है।'

फकीर। कौन फकीर। वही तो नहीं है, जिसने रशीदा से पता लिया था। रशीदा नायर के पीछे चल पड़ी।

नायर के कैम्प में लैम्प अभी तक अपना प्रकाश लिए बिहँस रहा था। उसकी रोशनी में उसने देखा वही फकीर बैठा था। उसके शरीर पर पसीने की बूँदें नहीं थीं।

रशीदा ने आगे बढ़कर उसके आगे मस्तक झुकाया, फिर उससे बोली—'आइए। आप मेरे कैम्प में चलिए न।'

फकीर उठ पड़ा। रशीदा उसे लेकर अपने साथ चल पड़ी। नायर यह सब कुछ न समझ सका। एक क्षण के लिए उसके मन में रशीदा के प्रति कुछ सन्देह हो गया। परन्तु वह इस विषय पर न सोच, अपने काम में लग गया।

रशीदा जब अपने कैम्प के निकट पहुँची तो फकीर से अधिक दिन के बाद मिलने का कारण पूँछती हुई भीतर आई। फिर अपने जमीन पर बैठ, फकीर को एक बेंत की कुर्सी देकर बोली—'आपने आज बहुत दिनों के बाद कष्ट भी किया, तो इतनी रात गए।'

'बेटी अब समय नहीं है। तू कल कैम्प के पार्क में दावत का इन्तजाम कर दें। साथ ही अपने सभी सहेलियों और सगे सम्बन्धियों को सूचना देकर उन्हें बुला लें। खर्चा मैं दे रहा हूँ। पहले पाँच सौ रुपए।'

'रुपए। आपके पास कहाँ से आए।'

'ये रुपए चोरी के नहीं हैं, कमाई के हैं। मैं स्वयं मेहनत करता हूँ। बस अब यह सब अपने आप मालूम हो जायेगा। कल तू सारा इन्तजाम कर ले। उस दावत में हबीब अवश्य आएगा। साथ उसके दुश्मन भी आ जाएँगे। मैं पुलिस को साथ अवश्य रखूँगा, किन्तु उसकी सहायता न लूँगा।'

'आखिरकार यह सब क्यों हो रहा है?'

'यह कल अपने आप सब भेद खुल जायगा।'

'लेकिन इसमें किसी व्यक्ति को मत छोड़ना। आस पास और अपने स्कूल की अध्यापिका से लेकर ऊँचे दर्जे की लड़कियों तक।' अपना वाक्य पूरा कर फकीर चला गया।

शील दावत का रहस्य कुछ न समझ सकी। रशीदा के आदेशानुसार दावत की सारी सामग्री और सजावट में अपने को लगा लिया। लगभग एक दो घन्टे में कैम्प के सारे पड़ोसियों को उसने सूचना दे दी।

रात के दस बज गए थे। कैम्प से थोड़ी दूर पर मैदान था, जहाँ शरणार्थियों के बच्चे खेल कूद मचाते। आज वहाँ पर सब कैम्प वासियों ने हिल मिल कर अच्छा खासा जमघट लगा रखा था। रशीदा की हम जोलियों ने उस मैदान में कनात से घेर कर एक टेन्ट लगा रखा था। बच्चों की किलकारी से सारा समाज आज एक अजीब खुशी महसूस कर रहा था। दावत में भाग लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति को शील स्वागत पूर्वक उचित स्थान पर बैठा रही थी। रशीदा अन्य कार्यों में व्यस्त थी।

अन्त में जब सब कुछ तैयारी हो चुकी, तो रशीदा ने शील के साथ जलसे में प्रवेश किया। मेहमानों की आँखें दोनों की ओर उठीं और फिर अपने अपने थाल की ओर जा लगी। डा० राजेन लेखा के साथ एक ओर बैठे थे। नायर उनसे कुछ दूरी पर बैठा शील और रशीदा की इस बहादुरी पर मन ही मन खुश हो रहा था। उसके बगल में कादिर रहमान हबीब तथा अपने अब्बा के साथ बैठे थे। मेहमान लोग चुप दोनों की ओर देख रहे थे कि राजेन ने उठकर प्रश्न किया— 'रशीदा। हम लोग इस दावत का भेद जानने के लिये उत्सुक हैं।'

अब रशीदा उठ खड़ी हुई। उसने एक टेबुल के सम्मुख खड़ा होकर कहा—'इस दावत का भेद कुछ नहीं है। मेरी प्रधान अध्यापिका जी आप लोगों के सम्मुख इसके विषय पर प्रकाश डालेंगी।'

रशीदा बैठ गई। तभी एक वृद्ध महिला उठ खड़ी हुई और कैम्प के निवासियों को सम्बोधित करती हुई बोली—'यह दावत किसी खास खुशी के उपलक्ष में नहीं दी गई है। बल्कि सरकार ने सारे कैम्प के निवासियों के लिए जो मकान बनाया है, उसमें निवास लेने के पूर्व हम एक साथ होकर यह प्रण करें कि

आज से प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे का हमदर्द और पड़ोसी बनकर रहे। भारत का विभाजन हो गया। परन्तु विभाजन में वैमनस्य और ईर्ष्या की भावनाओं का उत्पन्न होना हमारे लिए घातक है। जाने कितने लोगों का जीवन बरबाद हो गया है। कितनी बहिनों का सोहाग जीवित रहकर भी विछोह की घाटी में पड़ गया है। इस तरह जीवन सुखी नहीं रह सकता। धर्म की दुहाई लेकर हम जो नाटक खेल रहे हैं, उसकी नींव हमें आगे बढ़ने से रोक देगी। रशीदा और शील जैसी युवती से प्रत्येक युवती और युवक को शिक्षा लेनी चाहिए। अपने घर में किसी व्यक्ति का अभाव होते हुए भी दोनों ने कार्य किया है। यह हमारे इस युग के इतिहास के लिए गौरवपूर्ण बात है।'

अध्यापिका अपना व्याख्यान समाप्त कर बैठ गई। तदुपरान्त रशीदा उठना चाहती थी कि किसी ने बाहर से आवाज दी—'ठहरो।' रशीदा ठहर गई। उसके साथ ही अन्य लोगों ने उस ओर दृष्टि उठाकर देखा। एक फकीर दो युवतियों तथा दो युवकों के साथ धीरे धीरे कैम्प के एक खम्भे के निकट आकर खड़ा हो गया।

कादिर और रहमान की आँखों ने शीघ्र ही पहचान लिया। वह उत्तेजित हो उठना चाहता था कि कादिर के अब्बा ने उसे रोकते हुये कहा—'बैठ कहाँ जा रहा है।'

'यह हबीब है!' 'हाँ। अभी उसका काम तमामकर दूँगा।'

कादिर की आवाज फकीर के कानों तक पहुँची। वह शीघ्रता पूर्वक रशीदा की ओर बढ़ गया और सब लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा—'आप लोगों ने अभी अभी एक होकर रहने का वादा किया है। किन्तु आपकी सभा में एक ऐसा व्यक्ति बैठा हुआ है, जो हिंसा का राग अभी तक अलाप रहा है। परन्तु उसकी धारणा मिथ्या है। फिर

हबीब की ओर देख कर बोला—'आवो हबीब।' 'हबीब।' रशीदा की आँखे प्रेम से उमड़ पड़ीं।

वह हबीब के चरणों पर झुकना चाहती था कि हबीब ने उसे उठा कर गले लगाते हुए कहा—'रशीदा। जिन्दगी एक सफर है। फकीर की बातें सुनो।'

सारे समाज में सन्नाटा था। फकीर ने निर्मला को अपने समीप बुलाया और एक व्यक्ति को संकेत द्वारा बुलाकर कहा—'यह कौन है! निर्मला ने उस व्यक्ति का पदरज ले लिया। यह था उमेश—निर्मला का पति।

इसके बाद रशीदा ने शील, राजन, लेवा और नायर को अपने समीप बुलाकर नायर के हाथ में शील का हाथ रख दिया और लेवा का हाथ राजन के हाथ में। न जाने किस प्रेरणा से प्रेरित होकर कोई इसे अस्वीकार न कर सका। कादिर, रहमान जलते रहे। परन्तु हबीब के अब्बा ने अपने बेटे को देखते ही अपना स्थान छोड़ दिया और दौड़कर उसके समीप आ गए। हबीब ने रशीदा को एक ओर छोड़ दिया और अब्बा के पैरों पर गिर पड़ा। फिर कादिर और रहमान के समीप जाकर बोला—'भाई। मैंने अपराध नहीं किया। हम लोग एक दूसरे के पड़ोसी हैं। पड़ोसी का फर्ज है पड़ोसी की इज्जत और जिन्दगी की रक्षा करना।'

कादिर और रहमान की चेतना लौटी। उसने हबीब को गले लगाया। फिर राजन नायर शील, लेवा, हबीब और रशीदा, ज्ञान और प्रतिमा, निर्मल और उमेश ग्यारह बजते बजते अपने अपने घर पहुँच गए।

नायर की माँ ने सुना तो खुशी के मारे नाच उठीं। हबीब अपने पिता तथा कादिर और रहमान के साथ रशीदा के कैम्प को चल दिया।

॥ समाप्त ॥